Digitization by eGangotri-South Center

हरिदास संस्कृत सीरीज ३५६

दैवज्ञ श्रीमहादेवभट्टविरचितः

मुहूर्तदीपकः

सम्पादक एवं व्याख्याकार

डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू'

चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection

Digitization by eGangotri-South Center

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

हरिदास संस्कृत सीरीज
३५६
***

दैवज्ञ श्रीमहादेवभट्टविरचितः

मुहूर्तदीपकः

स्वोपज्ञसंस्कृतटीकया समलङ्कृतः।
मोहनबोधिनीनाम्नाहिन्दीटीकासमुपेता।

सम्पादक एवं व्याख्याकार
डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू'

चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस
वाराणसी

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

प्रकाशक : चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी
मुद्रक : चौखम्बा प्रेस, वाराणसी
संस्करण : प्रथम, विक्रम सम्वत् २०६३, सन् २००६
मूल्य : ७५.००

ISBN : 81-7080-205-9

© चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस
के. ३७/९९, गोपाल मन्दिर लेन, गोलघर (मैदागिन) के पास
पोस्ट बॉक्स नं० १००८, वाराणसी–२२१००१ (भारत)
फोन : आफिस : ०५४२–२३३३४५८
आवास : ०५४२–२३३४०३२ एवं ०५४२–२३३५०२०
e-mail : cssoffice@satyam.net.in
www.chowkhambasanskritseries.com

अपरं च प्राप्तिस्थानम्
चौखम्बा कृष्णदास अकादमी
के. ३७/११८, गोपाल मन्दिर लेन
निकट गोलधर (मैदागिन), पोस्ट बॉक्स नं० ११९८,
वाराणसी - २२१००१ (भारत)
दूरभाष : ०५४२–२३३५०२०

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

Haridas Sanskrit Series
356
***

Mahadevbhatta's

MUHURTDEEPAK

(The standard book on the Election-Mahoorat System)

With text, commentaries, introduction, notes and Hindi translation.

Editor & Translator
Dr. Shrikrishna " Jugnu"

CHOWKHAMBA SANSKRIT SERIES OFFICE
VARANASI

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

Publisher : Chowkhamba Sanskrit Series Office, Varanasi
Printer : Chowkhamba Press, Varanasi

ISBN : 81-7080-205-9

© CHOWKHAMBA SANSKRIT SERIES OFFICE

K. 37/99, Gopal Mandir Lane
Near Golghar (Maidagin)
P.Box No. 1008, Varanasi-221001 (India)
Phone : Office : 0542-2333458,
Res. : 0542-2334032 & 0542-2335020
E-mail : cssoffice@satyam.net.in

Also can be had from :
CHOWKHAMBA KRISHNADAS ACADEMY
K. 37/118, Gopal Mandir Lane
Near Golghar (Maidagin), P.Box No. 1118
Varanasi-221001 (India)
Phone : 0542-2335020

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

परम श्रद्धेय पिताश्री एवं
सद्गुरु नित्यलीलालीन पण्डिततुल्य
श्रीमद् मोहनलालजी चौहान
की पुण्य स्मृति में...

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

पुरोवाक्

बात १९९६ई. की है, तब मैं महाराणा प्रताप के दरबारी पण्डित चक्रपाणि मिश्र विरचित ग्रन्थों की पाण्डुलिपियों के सम्पादन का कार्य कर रहा था। चक्रपाणि मिश्र का एक ग्रन्थ 'मुहूर्तमाला' है, इसमें मुहूर्त जैसे गूढ़ और जनप्रिय विषय को दो विरचनों में विश्लेषित किया गया है। इसी ग्रन्थ ने मुझे मुहूर्त पर अध्ययन के लिए प्रेरित किया। परिणाम यह रहा कि मुहूर्त जैसे विषय को पहली बार सुदृढ़ रूप से स्थापित करने वाले श्रीपतिभट्टाचार्य (१०३९ई.) कृत 'ज्योतिषरत्नमाला' का पहली बार सम्पादन और अनुवाद सहित व्याख्या का कार्य सम्पन्न हुआ। इसके बाद जब मैं सूत्रधार मण्डन के वास्तुग्रन्थों के सम्पादन में जुटा तब प्रसिद्ध ज्योतिषशास्त्रेतिहासज्ञ श्रीशङ्कर बालकृष्ण दीक्षित कृत 'भारतीयज्योतिष' से ज्ञात हुआ कि महादेव कृत 'मुहूर्तदीपक' में मण्डनकृत राजवल्लभवास्तुशास्त्रम् का उल्लेख सोद्धरण हुआ है। जिज्ञासा के लिए मैंने मुहूर्तदीपक के पाठ का अनुसन्धान आरम्भ किया, ज्ञात हुआ कि बीसवीं सदी के प्रारम्भिक वर्षों में इसका मुम्बई से प्रकाशन हुआ है।

काफी प्रयासों के बाद जब इसकी एक जीर्ण प्रति मिली तब तक राजवल्लभ का कार्य पूरा हो चुका था किन्तु मुहूर्तदीपक को देखकर मैंने सोचा कि इसका अनुवाद हो जाए तो इसका पुनरूद्धार भी हो जाएगा और प्रकाशन भी। साथ ही आज जबकि फलित की दिशा में जनरुझान अधिक है, तब यह लुप्तप्राय: ग्रन्थ भी ज्योतिषियों व ज्योतिष के अध्येताओं को सुलभ हो जाएगा। यह कोई आत्मिक प्रेरणा ही थी कि मैं मुहूर्तदीपक की प्रति मिलते ही इसके अनुवाद कार्य में जुट गया और संक्षिप्त पाठ को विवेचित करने का प्रयास भी करता चला गया। यह सम्भवत: ईश्वरीय अनुग्रह ही था कि इस पुस्तक को तैयार होने में कुछ ही दिन लगे। मुहूर्तमाला, ज्योतिषरत्नमाला, श्रीपतिपद्धति, गार्गीयसंहिता, मुहूर्तकल्पद्रुम, ज्योतिषवृत्तशतम्, मुहूर्तसर्वस्व, राजमार्तण्ड, वशिष्ठसंहितादि ग्रन्थों के लिए जो परिश्रम किया, उसी का यह परिणाम रहा कि मुहूर्तदीपक के लिए सन्दर्भ खोजने में अधिक परेशानी नहीं हुई।

तथापि यह कार्य समय और श्रमसाध्य ही रहा। ग्रन्थ के संक्षिप्त होने और मुहूर्त विषय के विस्तृत होने से मैंने अनुवाद के साथ-साथ मुहूर्त विषयक अन्य महत्वपूर्ण,

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

आनुषङ्गिक ग्रन्थों के उदाहरणों, उद्धरणों के साथ-साथ विभिन्न चक्रों और मतान्तरों को देकर इस विषय को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है। इसकी उक्तियों वाले वर्तमान में उपलब्ध ग्रन्थों के सन्दर्भ, श्लोकों की संख्या भी देने का प्रयत्न भी किया है। यह महादेव की अध्ययन- क्षमता व तत्कालीन सन्दर्भार्थ शोधन परम्परा को भी परिभाषित करेगा।

भारतीय मुहूर्त ग्रन्थों की परम्परा में महादेव का मुहूर्तदीपक निश्चय ही महत्वपूर्ण ग्रन्थ है। यह जानते हुए भी यह ग्रन्थ स्वयं दीपक है, फिर इस पर क्या प्रकाश डालना, तथापि भूमिका में इसके रचनाकार, इसके उत्स व आधार सहित छन्दादि विषयों पर संक्षिप्त चर्चा की गई है।

दैवज्ञजनों के लिए यह ग्रन्थ उपादेय होगा, मुझे ऐसी आशा है। इसके सम्पादन-अनुवाद, टङ्कण, त्रुटिशोधन आदि कार्यों में मुझे सहधर्मिणी पुष्पा, पुत्री अनुभूति तथा अनुज अरविन्द चौहान से पर्याप्त मदद मिली है। कार्य के काफी समय तक यह कार्य विलम्बित ही रहा। अब, इसके प्रकाशन का दायित्व चौखम्बा संस्कृत सीरीज ऑफिस, वाराणसी के सञ्चालक श्रीमान् ब्रजमोहनदास गुप्ता ने लिया है, वे धन्यवादार्ह है।

ग्रन्थ के प्रस्तुत पाठ में जो अच्छाइयाँ हैं, वे आनन्दकन्दनन्दनन्दन प्रभुश्रीनाथजी की कृपा का प्रसाद है और जो त्रुटियाँ हैं, वे मुझ अल्पज्ञ से हुई है। विद्वज्जन इसका समादर करेंगे और अपनी सम्मति प्रदान करेंगे- *गच्छतः स्खलनं क्वापि भवेत्येव प्रमादतः। हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति सज्जनाः॥*

विदुषां वशंवदः

श्रीकृष्ण 'जुगनू'

४३ राजश्री कॉलोनी, विनायकनगर,

उदयपुर (राजस्थान)

२१ अक्टूबर २००४ ई.

शारदीय नवरात्राष्टमी, विक्रमाब्द २०६१

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

मुहूर्तविज्ञान एवं महादेवदैवज्ञ

मुहूर्त साम्प्रत जन-जीवन में ज्योतिष के प्रधान विषय के लिए स्वीकारा जाने लगा है। मूलतः यह द्विभागीय ज्योतिर्गणित में सिद्धांत के उपरांत फलित के अंतर्गत द्वितीय क्रम पर माना जाता है। सिद्धांतों के साथ-साथ ही महर्षियों ने फलित कथन की नींव डाली। ऋषियों के अनुभव और प्रत्यक्ष कथन की फलश्रुति इस विषय का आधार रही। तपधारिता और प्राक्-परा सत्य को विचार कर ऋषियों ने जो विचार दिए, उससे फलित को बल मिला और इसी पृष्ठभूमि का परवर्तीकाल में विकास-विस्तार होता रहा। लोक से लेकर अभिजात्य वर्ग तक ने इस विषय में रुचिशीलता का परिचय दिया। यही कारण है कि सिद्धांत से कहीं अधिक ग्रन्थ फलित पर प्रकाश में आए।

फलित के मुख्यतः पाँच भेद माने गए हैं—

१. जातक २. ताजिक ३. मुहूर्त ४. प्रश्न तथा ५. संहिता।

गुप्तकाल व वर्द्धनकाल के बाद भारत की केंद्रीय सत्ता का विभाजन हो गया किन्तु इस दिशा में रुचि निरंतर बनी रही। कई क्षेत्रीय राजाओं ने सिद्धांत के साथ-साथ फलित विषयों को बढ़ावा देने के लिए अपनी वेधशालाओं में विज्ञजनों को आश्रय दिया जिन्होंने लोकजीवन के विविध क्रिया-कलापों का सूक्ष्मतापूर्वक अध्ययन किया, कार्यों को उचितकाल, अनुचितावसर में आरंभ-समापन के परिणामों को देखा, तौला और तद्नुसार अपने विचार दिए। जो कालक्रम आवश्यक, शुभाशुभ कृत्यों, कार्यों के लिए उचित मानकर निर्धारित किया गया, उसे पूर्ववर्ती मुहूर्त के रूप में ही जाना गया।

मुहूर्त की अवधारणा -

मुहूर्त वस्तुतः ऐसा क्षेत्र है जो दैनिक जीवनचर्या की प्रधान आवश्यकता के रूप में उभरा है। जनजीवन के साथ मुहूर्त की व्याप्ति कुछ इस प्रकार हुई है कि व्यक्ति ने अपने प्रत्येक कार्य का प्रारंभ मुहूर्त के अनुसार करने का दृढ़ निश्चय किया है। न केवल संस्कार अपितु कृषि, वाणिज्य, धनोपार्जनोपाय इत्यादि अनेकानेक कार्यों के निमित्त मुहूर्त को सफलता के सूचक और प्रारंभिक सोपान के रूप में देखा जाता रहा है।

वैसे 'मुहूर्त' शब्द विविधार्थी है। यह मूलतः क्या अर्थ देता है, अभी तक

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

अस्पष्ट है। यह कालावयव है अथवा शुभ घड़ी- इस सम्बन्ध में नाना कालों में भिन्न-भिन्न अर्थ लिया जाता रहा है। ईसा पूर्व लिखित ऋक्ज्योतिष में दिनमान के एक घटक के रूप में मुहूर्त की मान्यता दर्शाई गई है। कहा गया है कि सूर्य में एक प्रस्थ जल निकलने का काल प्रमाण 'षण्मुहूर्त्य मनेन तु' छह मुहूर्त दिन की बढ़ोत्तरी होती है।

इस काल में एक चान्द्रमास में २९ ३१/६२ दिन और एक तिथि में इतने ही मुहूर्त स्वीकारे जाते थे। इस समय तक यज्ञ-यागादि के लिए समय ज्ञान विषयक नक्षत्र, पक्ष, अयनादि का विधान हो गया था। ऐसी ही मान्यता यजु व अथर्व ज्योतिषकाल में भी रही किन्तु इस काल तक तिथि, नक्षत्र, करण, योग, तारा और चन्द्रमा के बलाबल पर गंभीरता से विचार किया जाने लगा था।

परवर्ती काल में 'सूर्यप्रज्ञप्ति' में १२ मुहूर्त को दिन अर्थात २४ घटी का एक दिवस माना गया। चन्द्रप्रज्ञप्ति में ३० मुहूर्त तक चन्द्र से योग करने वाले नक्षत्रों का निर्धारण हुआ किन्तु कालान्तर में सिद्धान्तरूप में सामने आए पितामहसिद्धान्त, वशिष्ठसिद्धान्त, रोमकसिद्धान्त, पौलिशसिद्धान्त एवं ब्रह्मसिद्धान्तादि में मुहूर्त पर कोई स्वतन्त्र विचार नहीं मिलता है।

इसे व्यावहारिक रूप दिए जाने का श्रेय यूँ तो वराहमिहिर को दिया जाता है किन्तु उससे पूर्व ही हमारे यहाँ पर गर्ग, वृहस्पति, वशिष्ठ जैसी संहिताओं का प्रचार हो गया था। हालांकि कई संहिताएं सम्प्रति उपलब्ध नहीं है किन्तु वराह ने स्वयं और उसके विवृत्तिकार भट्टोत्पल ने आनुषाङ्गिक ग्रन्थों की सूचना में पर्याप्त जानकारी दी है। निश्चय ही आरम्भिक काल से ही मुहूर्त पर विचार किया जाने लगा था तथापि उसका दर्शन प्रत्येक कार्य में किया जाता हो, यह शक्य है।

इसका कारण यह है कि मुहूर्त का विवेच्य रूप या नियमितीकरण परवर्ती काल की धारणा है। इससे पूर्व मुहूर्त काल की इकाई ही था।

अमरसिंह ने स्पष्ट किया है-

१८ निमेष (पलक झपकाना) = १ काष्ठा

३० काष्ठा = १ कला

३० कला = १ क्षण

१२ क्षण = १ मुहूर्त

इस प्रकार एक अहोरात्र या दिनरात्रि में (२४ घण्टे या ६० घड़ी) में ३० मुहूर्त

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

होते हैं। पुराग्रन्थों में इन मुहूर्तों के कई नाम भी मिलते हैं। रात्रि और दिवस के मुहूर्तों को वर्गीकृतकर पृथक्-पृथक् नामाभिधान किया गया है। यद्यपि उन्हीं के आधार पर नियमित रूप में भी मुहूर्त का कुछ पक्षों में विकास किया गया है किन्तु इस समग्र विषय को विस्तार देते हुए जीवनोपयोगी विभिन्न कार्यों, गतिविधियों, महत्वपूर्ण और सामान्य कृत्यों के लिए कालमानक निर्दिष्ट किया गया, यही मानककाल आज 'मुहूर्त' के रूप में हमारे समाज में रूढ़ रूप में व्यवहृत है।

नाना मुहूर्तग्रन्थ -

वराहमिहिर और लल्लाचार्य के बाद श्रीपतिभट्ट ने मुख्य रूप से प्रचारित किया और लोक व्यवहार के नाना आचार-विचारों को मुहूर्त सम्मत बनाने की दिशा में चिंतन करते हुए मुहूर्त पर स्वतंत्र ग्रन्थ 'ज्योतिषरत्नमाला' का प्रणयन किया। इसी काल में राजमार्तण्ड, ज्योतिषवृत्तशत, सज्जनवल्लभ, भूपालवल्लभ प्रभृति ग्रन्थों की रचना हुई। फलित ग्रन्थों का प्रणयन आगे भी हुआ। बल्लालसेन ने अद्भुतसागर, पद्मनाभ ने व्यवहारप्रदीप, कालिदास दैवज्ञ ने ज्योतिर्विदाभरण जैसे ग्रन्थ लिखे तो अज्ञातकर्तृकों ने विभिन्न संहिताओं, ग्रन्थों के मतों को अपने-अपने क्षेत्र, आवश्यकता और विचाराभिप्राय के अनुसार निबन्ध ग्रन्थों का प्रणयन किया जिनमें जगन्मोहन, ज्योतिषसारसागर, ज्योतिषसागर, ज्योतिषफलोदय, ज्योतिषप्रकाश, भीमपराक्रम, संहिताप्रदीप, फलप्रदीप, निश्चयवाक्य, ज्योतिर्विवरण, पटलसार, ज्योतिर्विवेक, ज्योतिश्चिन्तामणि, व्यवहारादर्श, धर्मप्रदीप, कालविवेक, संहितासार, मन्वर्थमुक्तावली, बृहत्कालनिर्णय, शुद्धिदीपिका, सज्जनवल्लभ, भूपालवल्लभ, राजमार्तण्ड जैसे ग्रन्थ मुख्य हैं। इसमें प्रकीर्ण मन्तव्यों को भी एक स्थान पर संपादित करने का प्रयास हुआ, कुछ में श्लोक ज्यों-के-त्यों उद्धृत किए गए तो कुछ में पूर्व ग्रन्थकर्ताओं, मुनियों का स्मरण कर नवीन श्लोक लिखे गए।

इनमें वृहद् सेतुकार्य शूरमहाठ शिवराज का रहा जिसने ज्योतिर्निबध में तब तक उपलब्ध फलित विषयों को यह कहकर सूत्रित किया कि 'तिथ्यादिकालावयव स्वरूपां जगत्प्रसूत्यादिकहेतुभूताम्, कालत्रयज्ञानविधायिनीं तां वन्देऽमाद्यामिह शास्त्रदेवीम्' और ज्योतिर्जगत पर महत् उपकार, योगदान किया। इसमें नाना स्थलों पर मुहूर्त ग्रन्थों का नामोल्लेख भी मिलता है। उसके समय (शङ्करबालकृष्णदीक्षित के अनुसार शकाब्द १४४४ तद्नुसार १५२२ ई. के आसपास या इससे पूर्व) तक लल्लाचार्य के बाद श्रीपति कृत रत्नमाला, रत्नावली, ज्योतिषप्रकाश, ज्योतिश्चिन्तामणि, ज्योतिस्सारसागर, ज्योतिषसागर जैसे ग्रन्थ मुहूर्त ग्रन्थों के रूप में प्रचलित हो चुके थे। इनमें से रत्नावली का रचनाकाल १२वीं सदी और शेष ग्रन्थों का रचनाकाल १३वीं सदी माना जा सकता है। एक

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

रत्नावली मुरारी प्रोक्त भी ईशानशिवगुरुदेव मिश्र, नीलकण्ठ मूसत आदि के सन्दर्भों में मिलती है।

मुहूर्त नामाभिधान वाले केवल एक ग्रन्थ 'मुहूर्तदर्पण' का शिवराज ने उल्लेख किया है और उसके श्लोक उद्धृत किए हैं (पृष्ठ ७२, श्लोक २-३ आदि तुलनीय-मुहूर्तमार्तण्ड ४, २५ की टीका) जबकि उससे लगभग २० वर्ष पूर्व, शक १४२० तद्नुसार १४९८ ईस्वी में नन्दीग्रामस्थ वैद्यनाथ के शिष्य केशव ने १६७ श्लोकों में 'मुहूर्ततत्त्व' की रचना की थी, संभवतः यह ग्रन्थ तब तक लोकप्रिय नहीं हुआ था जबकि मुहूर्तदर्पण प्रचलन में था। हालांकि शिवराज केशव से परिचित था। इस दृष्टि से मुहूर्त नामाभिधान से मुहूर्तदर्पण पहला ग्रन्थ माना जा सकता है। यूं भी मुहूर्ततत्त्व की टीका शकाब्द १४५० में केशव के पुत्र गणेशदैवज्ञ ने की थी, सम्भवतः इसके बाद ही मुहूर्ततत्त्व का प्रचार हुआ। मुहूर्ततत्त्व की टीका में मुहूर्तसङ्ग्रह का नाम आया है। (मुहूर्ततत्त्व का हाल ही मैंने अनुवाद किया है) यह सूचना भी महत्वपूर्ण है कि मुहूर्त नाम से एक ग्रंथ गोविंद ने दक्षिण में लिखा। इसका नाम 'मुहूर्तरत्न' था। परमेश्वर दैवज्ञ (१३६०-१४४५ ई.) ने इसकी टीका लिखी थी। यह केरल यूनिवरसिटी ऑरियण्टल मैन्यूस्क्रिप्ट लाइब्रेरी, त्रिवेन्द्रम् में संगृहीत है और अब तक अप्रकाशित है। परमेश्वर दैवज्ञ गोविंद का पौत्र था।

इस प्रकार मुहूर्तदर्पण, मुहूर्तसङ्ग्रह शक की १३वीं-१४वीं सदी में सम्पादित हो गए थे अथवा लिखे जा चुके थे। मुहूर्ततत्त्व की टीका ने इस विषय को विशेष बल दिया, फलतः शकाब्द १४९३ (१५७१ ई.) में टापर-देवगिरि में नारायणदैवज्ञ ने 'मुहूर्तमार्तण्ड' की रचना की और स्वयं ही उस पर मार्तण्डवल्लभा टीका लिखी। इसके एक ही वर्ष बाद, शकाब्द १४९४ (१५७२ ई.) में मेवाड़ में चक्रपाणि मिश्र ने महाराणा प्रताप के राज्यकाल में 'मुहूर्तमाला' की रचना दो विरचन या अध्यायों में की। सम्राट अक़बर के शासनकाल में रामदैवज्ञ ने शकाब्द १५२२ (१६०० ई.) में 'मुहूर्तचिन्तामणि' का प्रणयन किया व स्वयं उस पर प्रमिताक्षराटीका लिखी। इसकी विस्तृत पीयूषधारा टीका रामदैवज्ञ के भतीजे, नीलकण्ठ के पुत्र गोविन्द ने शकाब्द १५२५ (१६०३ ई.) में लिखी। मुहूर्तचिन्तामणि पर लगभग आधा दर्जन टीकाएँ मिलती हैं। नीलकण्ठ ने भी मुहूर्तमुक्तावली का प्रणयन किया।

इसके बाद मुहूर्त नामाभिधान से ज्योतिर्विद शिव ने शक १५४० के आसपास 'मुहूर्तचूडामणि' की रचना की। शक १५४९ (१६२८ ई.) में काशी में कृष्णात्रि गोत्र के विट्ठल दीक्षित ने 'मुहूर्तकल्पद्रुम' की रचनाकर स्वयं ही उसकी मञ्जरी टीका का

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

प्रणयन किया। विट्ठल के पुत्र रघुवीर ने 'मुहूर्तसर्वस्व' का प्रणयन किया। (पिता-पुत्र के इन दोनों ही ग्रन्थों का सम्पादन, अनुवाद मैंने किया है)। शक १५७२ (१६६० ई.) में काशी में ही रघुनाथ चित्पावन ने 'मुहूर्तमाला' का प्रणयन किया। शक १६०७ (१६८५ ई.) में औरङ्गजेब के शासनकाल में गणपतिदैवज्ञ ने 'मुहूर्तगणपति' तथा गङ्गाधर शास्त्री ने पूना में शक १८१० में मुहूर्तसिन्धु का लेखन किया। इसके आसपास और कालांतर में मुहूर्त नामारम्भ को लेकर मुहूर्तसार, मुहूर्तप्रकाश, मुहूर्तविद्या, मुहूर्तशोधन, मुहूर्तार्णव, मुहूर्ततन्त्र, मुहूर्तकल्पलता, मुहूर्तमान, मुहूर्तरूप, मुहूर्तशोधन, मुहूर्तदीपिका मुहूर्तमञ्जरी, मुहूर्तभूषण जैसे ग्रन्थों की रचना और सम्पादन कार्य होता रहा। 'मुहूर्तदर्शन' नामक एक ग्रन्थ विद्यामाधव ने लिखा था जिस पर उसके पुत्र विष्णु ने मुहूर्तदीपक नामक टीका लिखी थी। इसमें ६०० श्लोक हैं। इस विक्रमीय शताब्दी के आरम्भ में, 2015 में पण्डित बालकृष्ण त्रिपाठी ने 'मुहूर्तदीपक' नाम से मुहूर्तों के हिन्दी में संग्रह का प्रकाशन किया जिसमें लघु आकार के 320 पृष्ठ हैं। इस प्रकार मुहूर्तग्रन्थों के प्रणयन की एक धारा दिखाई देती है।

मुहूर्तदीपक का स्थान –

इससे पूर्व गुजरात के भुजकच्छ में महादेव वाडव ने शक १५८३ तद्नुसार १६६१ ई. में 'मुहूर्तदीपक' की रचना की। इस दिन चैत्र शुक्ल चौदस व सोमवार था जबकि कम्प्यूटर गणना से इस दिन बुधवार सिद्ध होता है क्योंकि रचना की तिथि के दिन १३ अप्रैल था। यदि 'वारे विधौ' की अपेक्षा 'वारे बुधौ' पढ़ा जाए तो यह गुत्थी सुलझ सकती है। मुहूर्त ग्रन्थों में यह ग्रन्थ बहुत छोटा है और इसमें प्रतिपाद्य मात्र ५७ श्लोकों में हैं। पूर्ववर्ती रचनाकारों से प्रेरित होकर ही उसने इसकी टीका भी की। महादेव का जीवनकाल मुहूर्तमाला के रचयिता रघुनाथ के बाद का रहा है। स्वयं महादेव ने अपने बारे में लिखा है कि वह भुज के रेवताचल-गिरनार नरेश के पूज्यपाद श्रीकान्हजित वाडव का पुत्र है। ऐसा जान पड़ता है कि कान्हजी अथवा कन्हैयालाल अपने काल के प्रमुख ज्योतिर्विद् थे, सम्भवतः महादेव को कुल परम्परानुसार ही ज्योतिष विद्या का ज्ञान मिला था–

शाके राम$_{३}$गजे$_{८}$षु$_{५}$भू$_{१}$परिमिते सौम्यायने भास्करे
चैत्रे मासि सिते दले शिवतिथौ$_{१४}$ वारे विधौ भास्करे।
व्याघाते युजि वाणिजे च करणे श्रीमद्भुजे पत्तने
लेखित्वाऽथ मुहूर्तदीपकभवाख्यानं महादेवकः॥ (१)

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

उसने कई पूर्व आनुषङ्गिक ग्रन्थों का अध्ययन किया था और मुहूर्त विषयक तर्क सम्मत निर्णय लिखने का प्रयास किया था। जैसा कि रचनाकार ने टीका करते हुए स्वयं लिखा है–

आद्यानामनवद्यपद्यरचना नाना विचिन्त्यात्मना

लोकानां व्यवहारदर्शनविधौ सप्तेषुवृत्तैः स्फुटम्।

श्रीमद्रैवतराजपूजितपदः श्रीकाह्नजिद्वाडवः

सूनुस्तस्य मुहूर्तदीपमकरोदेनं महादेववित्॥ (५८)

इस पद्य की टीका करते हुए महादेव ने लिखा है कि प्राचीन ज्योतिर्विदों में प्रमुख वराहमिहिर रचित बृहत्संहिता, बृहज्जातक एवं लघुजातक, लल्लाचार्यकृत रत्नकोष, श्रीपतिभट्टाचार्य विरचित ज्योतिषरत्नमाला, त्रिविक्रमाचार्य कृत त्रिविक्रमशत सहित अन्य ग्रन्थों में व्यवहारप्रकाश, विश्वनाथात्मज भानु कृत सज्जनवल्लभ, महेश्वर कृत वृत्तशतक, मुहूर्ततत्त्व, ज्योतिर्निबन्धादि ग्रन्थों के नाना प्रकरणों को आत्मचिन्त्यानुसार ग्रहण कर, लोकव्यवहार के उद्देश्य से मुहूर्त के दर्शन के निमित्त इस ग्रन्थ की रचना कर रहा हूँ। यह मुहूर्तदीपक व्यवहार का मार्ग आलोकित करेगा। इसमें दीपक की वर्तिका की तरह सत्तावन स्फुट श्लोकों की रचना की गई है—

श्रीमद्रैवतराजपूजितपदः श्रीकान्हजिद्वाडवः तस्य सूनुः श्रीमांश्चासौ रैवतश्च रैवताचलस्तस्य राजानः तैः पूजितौ पादौ यस्य एवंविधः कान्हजित् वाडवः तस्य सूनुः अपत्यम्। किं कृत्वाऽकरोत् आद्यानाम् वराहश्रीपतिलल्ल त्रिविक्रमाद्याचार्याणाम् अनवद्या या पद्यरचना ग्रन्थान् रत्नमालात्रिविक्रमशतरत्नकोशव्यवहारप्रकाश सज्जनवल्लभवृत्तशत-मुहूर्ततत्त्वादिनिबन्धान् नाना अनेकप्रकारेण आत्मा चित्तेन विचिन्त्य विचार्य। किं निमित्तं लोकानां सर्वेषां व्यवहारमुहूर्तदर्शनस्य विधिनिर्मित्तम्। वस्तुव्यवहारदर्शनं तु दीपेनैव भवति। तथा सप्तेषुवृत्तैः कृत्वा मुहूर्तदीपमकरोदिति। यथा दीपे वर्तिस्तथाऽत्र सप्तपञ्चाशद्वृत्त-लक्षणा वर्तिस्तया हेतुभूतया॥ (५८)

इस ग्रन्थ में महादेव ने मुख्यतः फलित मुहूर्त ही दिया है, लग्नघटिका निष्पत्ति में उसने अपनी गणित प्रतिभा का परिचय भी दिया है। ग्रन्थ में सर्वत्र श्रीपतिभट्ट कृत 'ज्योतिषरत्नमाला' का परिपक्व प्रभाव है। टीका में इसके कई श्लोक हैं। अन्य ग्रन्थों में मुहूर्तचिन्तामणि, उस पर प्रमिताक्षरा एवं पीयूषधाराटीका, नरपतिजयचर्या (श्लोक ४५), अमृतकुम्भ (श्लोक ५५), ज्योतिर्निबन्ध (श्लोक ५७ व अन्य), विवाहप्रकाश (श्लोक

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

१४), केशवीय मुहूर्ततत्त्व (श्लोक १४) का उल्लेख है। वास्तुशास्त्र के रूप में उसने सूत्रधारमण्डन (१४३३-६७ ई.) विरचित राजवल्लभवास्तुशास्त्रम् के तीन श्लोक उद्धृत किए हैं। इसके अतिरिक्त उसने उक्तियों के रूप में जो श्लोक दिए हैं, वे वराहमिहिराचार्य के बृहज्जातक, केशवीय विवाहवृन्दावन, ग्रहलाघव, व्यवहारप्रकाश, निर्णयसिद्धान्त तथा पुराणों में ब्रह्मवैवर्त्तपुराण इत्यादि से हैं।

१९वीं सदी के उत्तरार्द्ध में थियोडोर आफैख्ट ने भारतीय ग्रन्थों का सूचीकरण के उद्देश्य से जब ग्रन्थ भण्डारों, पुस्तकालयों और निजी सङ्ग्राहकों के ग्रन्थों का सर्वेक्षण किया तब गुजरात में इस मुहूर्तदीपक को खोजा था। आफैख्ट ने इसकी टीका में उल्लिखित ग्रन्थों की भी जानकारी दी थी, जैसा कि शङ्कर बालकृष्ण दीक्षित ने लिखा है। यह ग्रन्थ सन् १८९० में पहली बार मुम्बई से मुद्रित हुआ था। बाद में गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास, लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर स्टीम प्रेस, कल्याण-मुम्बई से १९३७ ई. में इसका पुनर्प्रकाशन हुआ किन्तु इसमें हिन्दी अर्थ नहीं था।

रचना प्रयोजन -

नाना मुहूर्तग्रन्थों के होते हुए भी महादेव ने इसकी रचना क्यों की? फिर उसके समय तक जब मुहूर्त पर विस्तृत ग्रन्थ व उन पर टीकाएँ विद्यमान थीं, तब इस लघुकाय ग्रन्थ के प्रणयन का हेतु क्या रहा? इन प्रश्नों का उत्तर स्वयं महादेव ने दिया है कि वह बालबोध के लिए मुहूर्त जैसे ज्ञान को आलोकित करने के उद्देश्य से इस ग्रन्थ की रचना करने का उद्यत हुआ है—

मुहूर्तदीपकं कुर्वे बालाज्ञानतमोऽपहम्॥ (१)

ग्रन्थान्त में भी कहा गया है—

बालावबोधार्थमियं मयाऽत्र व्याख्या कृता विस्तरवर्जिता या।
तुष्यन्तु सन्तः प्रविचार्य तत्त्वं यथा तथैवोपहसन्त्वसन्तः॥

महादेव ने मुख्यतः संस्कार एवं कृत्याधारित आवश्यक मुहूर्त देने का उपक्रम किया है। वह परिभाषाओं की अपेक्षा सीधे-सीधे मुहूर्त पर भी केन्द्रित रहा है और दो ही पङ्क्तियों में अधिकाधिक मतों को देने का प्रयास किया है, इसी कारण यह ग्रन्थ समास ग्रन्थ की कोटि की रचना माना जा सकता है।

इसमें मुख्य रूप से नन्दादि तिथि, त्याज्य, शुभकाय में त्याज्य दग्धतिथियाँ, नक्षत्रों के स्वामि, चरादि संज्ञाएँ, उत्पातादि योग, वारप्रवृत्ति, होरार्द्धयाम, कुलिका,

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

विष्टि या भद्रा, दिन-रात्रिके तीस मुहूर्त, बाणपञ्चक, एकार्गल, चण्डायुध, लत्तादोष, पञ्चशलाका वेध, तारा, विवाह, घटिका लग्न, वधूप्रवेश, द्विरागमन, गर्भाधान, पुँसवन, सीमन्त कर्म, गण्डान्तं, सूतिकास्नान, नामकरण, मञ्चली या हिण्डोलारोहण, निष्क्रमण, चौलकर्म, अन्नप्राशन, कर्णवेध-भूषणधारण, चूडाचक्र, मौञ्जीकर्म, विद्यारम्भ, वस्त्रधारण, अग्न्याधान, राज्याभिषेक, शस्त्रधारण, यात्रा, शुभशकुन, अपशकुन, गृहारम्भ, द्वारचक्र, गृहप्रवेश, हलकर्षण कार्य, बीजोप्ति, औषधदान, रोगीस्नान, सङ्क्रान्तियाँ, सङ्क्रान्तियों में पुण्यकाल, हाथी-अश्व पालनादि कर्म, ऊँट व भैंस पालन, दधि मन्थन, जलवाँ पूजन, कूपखनन, कूपदिशा, वृक्षारोपण, देवादि प्रतिष्ठा, नृत्य, राजदर्शन, राज्यसेवा, मद्यारम्भ, वृषली, गोचरफल, नौकायान, चतुर्मण्डल, घाततिथि-वार-नक्षत्र एवं चन्द्र, शुक्रास्तादि विचार लिखे हैं।

इस प्रकार अधिकांश मुहूर्त संस्कार, दान, व्रत, पुण्यकृत्य हैं। राजाओं के जयार्थ यात्रा, निमित्त, शस्त्रास्त्र, देवालय, तडाग, वापी आदि का खनन, वास्तु कार्य, द्वार, गृहप्रवेश के साथ ही नौका विषयक मुहूर्तों का मिलना तत्कालीन राज परिवारोपयोगी कार्यों के लिए आवश्यकता को प्रतिपादित करता है किन्तु वे आज भी प्रासङ्गिक है।

छन्दरचना -

इस ग्रन्थ में मुख्य रूप से स्रग्धरा छन्द का उपयोग किया गया है। यह 21 वर्णों के पाद वाली प्रकृति छन्दोजाति के अन्तर्गत है जिसका लक्षण है—

म्रभ्नैर्यानां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्रग्धरा कीर्तितेयम्।

इसमें गण न्यासक्रम ऽऽऽ,ऽ।ऽ, ऽ।।, ।।।, ।ऽऽ, ।ऽऽ, ।ऽऽ होता है। इसका उदाहरण है—

या ब्रह्माद्यैरलक्ष्या त्रिभुवननमिता ब्रह्मपुत्री शिवाद्या

ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रः प्रणमति बहुशो यां सदानन्दरूपाम्।

वाणी चैतन्यरूपे वसति च सकलप्राणिनिद्राक्षुधातृट्

सा नित्यं सुप्रसन्ना वितरतु विभवं विश्वरूपा च लोके॥

मुहूर्तदीपक में महादेव की छन्द रचना इस प्रकार है और मुहूर्त सम्बन्धी लगभग सभी श्लोक इसी छन्द में दिए गए हैं—

भेशा दस्रान्तकाग्निद्रुहिणशशिवा देवसूरीज्य सर्पाः

पित्राख्याः स्युर्भगोऽथार्यमरविदिविषत्सूत्रकारानिलाश्च।

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

शक्राग्नी मित्र इंद्रो निर्ऋतितनुभुवो वारि विश्वे विधाता

श्रीशो वस्वाख्ययादः पतिरजपदहिर्बुध्न्यपूषाभिधानाः॥ ४॥

ग्रन्थारम्भ में अनुष्टुपछन्द से मङ्गलाचरण किया गया है। छन्दशास्त्र में इस छन्द का लक्षण इस प्रकार बताया गया है—

श्लोके षष्ठं गुरु ज्ञेयं सर्वत्र लघु पञ्चमम्।

द्विचतुष्पादयोर्ह्रस्वं सप्तमं दीर्घमन्ययोः।

इसमें प्रत्येक चरण में क्रमशः। ऽ ऽ, । ऽ । का प्रयोग होता है। इसका उदाहरण इस प्रकार है–

अ(ा)नन्दं वो गणेशार्कविष्णुगौरीमहेश्वराः।

देवाः कुर्युः श्रियं सौख्यमारोग्यं गृहसम्पदः॥

ग्रन्थकार महादेव का प्रथमछन्द इस प्रकार है–

प्रणम्यैकरदं देवं शारदां गुरुमेव च।

मुहूर्तदीपकं कुर्वे बालाज्ञानतमोऽपहम्॥ (१)

मुहूर्तग्रन्थों में निश्चय ही महादेव का अवदान महत्वपूर्ण है। यूँ महादेव नाम से श्रीपति की रत्नमाला के टीकाकार लुणगसूनु महादेव (शक ११७८), पद्मजातक के टीकाकार महादेव, सारणी बनाने वाले महादेव (१२००) कामधेनुकार महादेव (१२७९) के नामों का परिचय महामहोपाध्याय सुधाकर द्विवेदी ने गणकतरङ्गिणी में दिया है, किन्तु वाडव कान्ह सुत महादेव की प्रतिभा की कम ही लोगों को जानकारी है। उत्तर–मध्यकाल में उनका ज्योतिष के मुहूर्त विषयक्षेत्र में अवदान स्मरणीय है। मुहूर्तदीपक उनका संक्षिप्त और सामासिक ग्रन्थ ही सही, किन्तु मुहूर्त–विज्ञान के क्षेत्र में अतीव महत्वपूर्ण है।

*****

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

विषयानुक्रमणिका

मङ्गलाचरण-	१
नन्दादितिथिषु त्याज्यानि-	१
शुभकार्ये त्याज्याः दग्धतिथयः	३
नक्षत्रस्वामिनः	४
चरादिसंज्ञाविचारः	६
उत्पातादियोगविचारः	७
वारप्रवृत्तिहोरार्द्धयामकुलिकाः	८
विष्टिविचारः	११
दिनरात्रिभवास्त्रिंशन्मुहूर्ताः	१३
बाणपञ्चकम्-	१५
एकार्गलचण्डायुधौ-	१७
लत्तासप्तपञ्चशलाकावेधः	१८-२०
तारा च आडलभ्रमयोग	२२
विवाहमुहूर्तः	२४
घटिकालग्नम्-	२७
वधूप्रवेशद्विरागमनमुहूर्तः	२९
प्रथमार्तवे शुभाशुभ विचार	३०
गर्भाधानमुहूर्तः	३२
पुँसवनसीमन्तमुहूर्तः	३३
गण्डान्तं सूतिकास्नाननामकरणमुहूर्तश्च-	३५
प्रेंखारोहणमुहूर्तः	४०

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

निष्क्रमण-चौलमुहूर्तः	४१, ४२
अन्नप्राशनमुहूर्तः	४३
कर्णवेध-भूषणधारणमुहूर्तः	४६
चूडाचक्रम्-	४७
मौञ्जीकर्ममुहूर्तः	४९
विद्यारम्भमुहूर्तः	५०
वस्त्रधारणमुहूर्तः	५२
अग्न्याधानमुहूर्तः	५४
राज्याभिषेकमुहूर्तः	५६
शस्त्रधारणमुहूर्तः	५८
यात्राप्रकरणम्-	६०
शुभशकुनानि-	६३
अपशकुनानि-	६४
गृहारम्भमुहूर्तः	६६
गृहारम्भेविदिग्विस्थितं राहुमुखं	६८
द्वारादीनां-	७२
गृहप्रवेशमुहूर्तः	७३
हलारम्भः	७६
बीजोप्तिमुहूर्तः	७७
औषधदान-रोगिस्नानमुहूर्तः	७८
सङ्क्रान्ति-	७९
सङ्क्रान्तिपुण्यकालः	८१
करि-वाजिकर्म-	८३
अश्वचक्रम्	८४

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

उष्ट्रमहिषी–मन्थान–तोयार्चाः	८६
कूपखननमुहूर्तः	८७
कूपखननदिक्–द्रुमारोपमुहूर्तश्च–	८८
देवप्रतिष्ठामुहूर्तः	९१
नृत्यनृपेक्षासेवामद्यारम्भमुहूर्तः	९३
वृषलीमुहूर्तः	९५
गोचरफलम्–	९६
नौकायानम्–	९८
नौकाचक्रम्	१०१
चतुर्मण्डलानि–	१०२
घाततिथिवारनक्षत्रचन्द्राः	१०३
शुक्रास्तादिविचारः	१०६
ग्रन्थप्रशस्तिः	१०९

*****

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

श्री गणेशायनमः

॥ मुहूर्तदीपकः ॥

मोहनबोधिनीटीकायाः ।

मङ्गलाचरण–

प्रणम्यैकरदं देवं शारदां गुरुमेव च।

मुहूर्तदीपकं कुर्वे बालाज्ञानतमोऽपहम्॥ १ ॥

महादेवटीकया– श्रीगणेशाय नमः। ग्रन्थकर्ता कथयति– अहं मुहूर्तदीपकं कुर्वे; मुहूर्तान् जातकर्मादिसंस्कारसमयान् दीपयतीति, किं कृत्वा एकरदं देवं गणेशं च परं शारदां सरस्वतीं गुरुं च प्रणम्य, किंलक्षणं मुहूर्तदीपकं बालानाम् अज्ञानमेव तमः तदपहन्तीति बालाज्ञानतमोपहः तम्॥ १ ॥

मोहनबोधिनी– ग्रथारम्भ में (महादेवदैवज्ञ कहते हैं कि) सर्वप्रथम मैं एकदन्त भगवान् गणेश, सरस्वती अपने गुरु को प्रणाम करता हूँ और तदनन्तर बालकों के अज्ञानरूपी अन्धकार को हरण करने के लिए मुहूर्तदीपक की रचना कर रहा हूँ। इसमें जातकर्मादिसंस्कार, विविध कार्यों के लिए कालादि पर प्रकाश डाला गया है।

नन्दादितिथिषु त्याज्यानि–

नन्दाभद्राजयाख्याः प्रतिपदभिमुखा रिक्तिकाः स्युश्च पूर्णाः
संज्ञातुल्याकृत्या भृगगुविदवनि जार्कीज्यवारेषु सिद्धाः।
स्त्रीसेवाक्षौरतैलामिषमशुभममाभूतषष्ठ्यमीषु स्नानं
नाशाक्षिविश्वैः परिमिततिथिषु त्रिंशदङ्काद्रितुल्ये॥ २ ॥

महादेवटीकया– प्रतिपदभिमुखास्तिथयो नन्दाभद्राजयाख्याश्च परं रिक्तिकाः पूर्णाः स्युः। प्रतिपत् अभिमुखा यासां ताः, अत्र बहुवचनं तिस्रो नन्दाख्याः, तिस्रो भद्राख्याः, तिस्रो जयाख्याः, तिस्रो रिक्तिकास्तिस्रः पूर्णाः, एताः संज्ञातुल्यार्थकृत्याः संज्ञा तुल्यम्

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

अर्थकृत्यं कार्यनिष्पत्तिर्यासु ताः, एता एव नन्दाद्याः भृगुविदवनिजार्कीज्यवारेषु चेद्भवन्ति तदा सिद्धाः स्युः।

'नन्दा शुक्रे बुधे भद्रे जया भौमे शनेर्दिने।

रिक्ता पूर्णा गुरोर्वारे सिद्धाः स्युस्तिथयः क्रमात्॥'

अमाभूतषष्ठ्यष्टमीषु क्रमेण स्त्रीसेवाक्षौरतैलामिषम् अशुभं वर्ज्यमेव। यदुक्तम्-

'षष्ठीषु तैलं पलमष्टमीषु क्षौरतैलामिषम् क्षौरक्रियां चैव चतुर्दशीषु।

स्त्रीसेवनं नष्टकलासु पुंसामायुः क्षयार्थं मुनयो वदन्ति॥' (रत्नमाला २, १५)

आशाक्षिविश्वैः आशा दश १०, अक्षिणी द्वे २, विश्वे त्रयोदश १३, एतैः परिमित-तिथिषु दशमीद्वितीयात्रयोदशीषु त्रिंशत् ३० अङ्काः ९ अद्रयः ७ तैः तुल्ये तिथौ दर्शनवमी सप्तमीष्वमलकस्नानं न कार्यम्। तदुक्तं (रत्नमाला २, १४)-

'स्नातुर्जनस्य दशमी तनयं त्रयोदश्यर्थं निहन्त्युभयमेवमपि द्वितीया।

सप्तम्यनिन्दुनवमीषु च सम्पदिच्छुः स्नायात्कदाचिदपि नामलकैर्मनुष्यः॥' इति॥ २॥

मोहनबोधिनी- ग्रन्थकार सर्वप्रथम नन्दादि तिथियों का परिचय देता है। कृष्ण एवं शुक्ल दोनों ही पक्षों में पन्द्रह तिथियों में, प्रतिपत्, षष्ठ व एकादशी (१, ६, ११) इन तिथियों की संज्ञा नन्दा होती है। इसी प्रकार द्वितीया, सप्तमी व द्वादशी (२, ७, १२) की संज्ञा भद्रा, तृतीया, अष्टमी व त्रयोदशी (३, ८, १३) की संज्ञा जया, चतुर्थी, नवमी व चतुर्दशी (४, ९, १४) का नाम रिक्ता एवं पञ्चमी, दशमी, पूर्णिमा या अमावस्या (५, १०, १५ अथवा ५, १०, ३०) की संज्ञा पूर्णा होती है। इनके नामानुसार ही इनके कृत्य व फलाफल कहे गए हैं। जैसे रिक्ता तिथियों (४, ९, १४) में शुभ कार्य शुभफल नहीं देते जबकि पूर्णा संज्ञक तिथियों (५, १०, १५ या ३०) में शुभकार्य के सम्पादन से पूर्णतः शुभफल मिलता है।

इन तिथियों के वारानुसार भी फल जानना चाहिए। शुक्रवार को नन्दा तिथियाँ (१, ६, ११), बुधवार को भद्रा (२, ७, १२) मङ्गलवार को जया (३, ८, १२), शनिवार को रिक्ता (४, ९, १४) और गुरुवार को पूर्णा तिथियाँ (५, १०, १५) हो तो उस दिन सिद्धियोग बनता है। षष्ठी तिथि में तेल, अष्टमी में मांस भक्षण, चौदस में क्षौरकर्म तथा अमावस्या को स्त्रीसेवन नहीं करना चाहिए। द्वितीया, दशमी एवं त्रयोदशी को उबटन; सप्तमी, नवमी व अमावस्या को अक्षयफल से स्नान नहीं करना चाहिए।

जैसा कि मुहूर्तचिन्तामणि (१, ७) में रामदैवज्ञ ने स्पष्ट किया है- षष्ठ्यष्टमी

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

भूतविधुक्षयेषु नो सेवेत ना तैलपले क्षुरं रतिम्। नाभ्यञ्जनं विश्वदशद्विके तिथौ धात्रीफलैः स्नानममाद्रिगोष्वसत्॥ ज्योतिषरत्नमालाकार श्रीपतिभट्ट का भी ऐसा स्पष्टीकरण है।

अथ शुभकार्ये त्याज्याः दग्धतिथयः

दग्धा युग्मा विभूता गतवति तरणौ चापमीने घटोक्ष्णे
कर्काजे स्त्रीनृयुग्मे मृगपतिसविषे तौलिनक्रे क्रमेण।
नन्दाद्या रिक्तिकान्तास्त्रिरजभमुखतः स्युश्चतुर्णां च पूर्णा
नेष्टा सक्रूरराशेः प्रतिपदि च कुहौ दन्तकाष्ठं न षष्ठ्याम्॥ ३॥

महादेवटीकया- दग्धा इति। विभूताश्चतुर्दशीरहिताः युग्माः तिथयः द्वितीयाचतुर्थी षष्ठ्यष्टमीदशमीद्वादश्यः क्रमेण दग्धाः स्युः, किं सति तरतौ सूर्ये वक्ष्यमाणराशियुग्मे गतवति सति, तद्यथा- चापमीने तरणौ द्वितीया दग्धा, अत्रेतरेतरद्वन्द्वः। कर्काजे कर्किणि मेषे तरणौ सति षष्ठी दग्धा। स्त्रीनृयुग्मे कन्यामिथुनयोरष्टमी दग्धा। मृगपतिसविषे सिंहवृश्चिके रवौ दशमी दग्धा। तौलिनके तुलामकरे द्वादशी दग्धा निषिद्धा। तदुक्तम्-

'मीने चापे द्वितीया च चतुर्थी वृषकुम्भयोः।
मेषकर्कटयोः षष्ठी कन्यायां मिथुनेऽष्टमी।
दशमी वृश्चिके सिंहे द्वादशी घटनक्रयोः।
एताः स्युस्तिथयो दग्धा द्विद्विराशिस्थिते रवौ॥'

च परं नन्दाद्या रिक्तिकान्ताश्चतस्रस्तिथयः त्रिवारं त्रिरावृत्त्या अजभमुखतः राशीनां स्युः प्राक् नन्दा मेषस्य भद्रा वृषस्य जया मिथुनस्य रिक्तिका कर्कस्य चतुर्णां राशीनां पूर्णा प्रहरद्वयं द्वयं मेषादीनां पञ्चम्याः। एवं सिंहादीनां चतुर्णां षष्ठ्यादयस्तथा दशमी सिंहादीनां चतुर्णां पुनरेकादश्याद्याश्चतस्रो धनुरादि चतुर्णां राशीनां तिथयः। पुनः पूर्णा पूर्णमासीदर्शौ धनुरादीनां भवतः। एवं सपादतिथेरेको राशी राश्याधिकसंज्ञेयं सक्रूरराशेः, क्रूरेण रविकुजमन्दराहूणा मेकतमेन सहितो यो राशिस्तत्सम्बन्धिनी या तिथिः सा नेष्टा शुभकार्ये च परं प्रतिपदि कुहौ दर्शे षष्ठ्यां दन्तकाष्ठं न कार्यम्। तथा चोक्तम् *(ज्योतिषरत्नमाला २, १३)*-

'नष्टेन्दुषष्ठीप्रतिपत्सु धीमान् न जातु दन्तोत्कषणं विदध्यात्।
कुर्वन्नवाप्नोति तदा स नूनं लक्ष्मीकुलज्ञातिजयोपघातम्॥' इति॥ ३॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

मोहनबोधिनी- मीन एवं धनु का सूर्य हो तो द्वितीया तिथि, वृषभ और कुम्भ का सूर्य हो तो चतुर्थी, मेष एवं कर्क का हो तो षष्ठी, मिथुन एवं कन्या का सूर्य हो तो अष्टमी, वृश्चिक एवं सिंह का सूर्य हो तो दशमी तथा मकर एवं तुला का सूर्य हो तो द्वादशी तिथि को दग्धा जानना चाहिए। दग्धा तिथि में कोई भी शुभकार्य संपन्न नहीं करना चाहिए। इसी प्रकार मेष, वृष, मिथुन और कर्क- इनकी क्रमानुसार प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया व चतुर्थी और चारों की पञ्चमी तिथि और सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक राशि की षष्ठी, सप्तमी, नवमी क्रम से एवं सिंहादि चारों राशि दशमी तिथि तथा धनु, मकर, कुम्भ, मीन राशियों की क्रम से एकादशी, द्वादशी, त्रयोदशी, चतुर्दशी और धनु आदि चारों राशियों की पूर्णिमा व अमावस्या तिथि अशुभ मानी गई है। इसमें क्रूर राशि की तिथि को भी अशुभ माना गया है। षष्ठी, प्रतिपदा और अमावस्या के दिन दन्तधावन का निधेष किया गया है। यदि इस अवधि में दन्तधावन हो तो लक्ष्मी और कुल सहित स्वजनों का आघात होता है।

स्पष्टार्थचक्र

राशि	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु.	मी.
तिथि	१	२	३	४	६	७	८	९	११	१२	१३	१४
तिथि	५	५	५	५	१०	१०	१०	१०	१५	१५	१५	१५
									३०	३०	३०	३०

अथ नक्षत्रस्वामिनः

भेशा दस्रान्तकाग्निद्रुहिणशशिवा देवसूरीज्य सर्पाः
पित्राख्याः स्युर्भगोऽथार्यमरविदिविषत्सूत्रकारानिलाश्च।
शक्राग्नी मित्र इन्द्रो निर्ऋतितनुभुवो वारि विश्वे विधाता
श्रीशो वस्वाख्ययादः पतिरजपदहिर्बुध्न्यपूषाभिधानाः॥ ४॥

महादेवटीकया- भेशा इति। एते भेशा भानां नक्षत्राणाम् ईशा ज्ञेयाः। ते के दस्रौ अश्विनीकुमारौ, अश्विन्या अश्विनौ पती, अन्तको यमो भरण्याः, अग्निः कृत्तिकायाः द्रुहिणो ब्रह्मा रोहिण्याः, शशी मृगशीर्षस्य, शिवः आर्द्रायाः, अत्रेतरेतरद्वन्द्वः। देवसूः देवान् सूते सा देवसूरिति अदितिः पुनर्वसोः, ईज्यो गुरुः पुष्यस्य, सर्पा आश्लेषायाः, पित्राख्याः पितरो मघायाः, भगः सूर्यविशेषः पूर्वाफाल्गुन्याः, अर्यमा उत्तराफाल्गुन्याः, रविर्हस्तस्य,

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

दिविषत्सूत्रकारः दिविषदो देवाः तेषां सूत्रकारो वार्धुषीव विश्वकर्मा चित्रायाः, अनिलो वायुः स्वातेः, शक्राग्नी शक्रश्च अग्निश्च शक्राग्नी द्वावपि विशाखायाः, मित्रः सूर्यभेदः अनुराधायाः, इन्द्रो ज्येष्ठायाः, निर्ऋतितनुभुवो राक्षसाः मूलस्य, वारि जलं पूर्वाषाढायाः, विश्वेदेवा उत्तराषाढायाः, विधाता अभिजितः, श्रीशो विष्णुः श्रवणस्य, वस्वाख्या वसवो धनिष्ठायाः, यादःपतिर्वरुणः शततारकायाः, अजपत् अजैकपाद् महादेवभेदः पूर्वाभाद्रपदायाः, अहिर्बुध्न्यः उत्तराभाद्रपदायाः, पूषा सूर्यभेदो रेवत्याः, इत्यष्टाविंशति-देवतास्तन्नाम्ना भानां नामानि कल्प्यानि ॥ ४ ॥

मोहनबोधिनी– अब नक्षत्रों के स्वामी के नाम बताए जा रहे है– १. अश्विनी नक्षत्र का स्वामी अश्विनीकुमार, २. भरणी का यम, ३. कृत्तिका का अग्नि, ४. रोहिणी का ब्रह्मा, ५. मृगशिरा का चन्द्र, ६. आर्द्रा का शिव, ७. पुनर्वसु का अदिति (देवमाता), ८. पुष्य का बृहस्पति, ९. आश्लेषा का सर्प, १०. मघा का पितर, ११. पूर्वा फाल्गुनी का भग, १२. उत्तरा फाल्गुनी का अर्यमा, १३. हस्त का सूर्य, १४. चित्रा का त्वष्टा, १५. स्वाति का वायु, १६. विशाखा का इन्द्राग्नि, १७. अनुराधा का मित्र, १८. ज्येष्ठा का इन्द्र, १९. मूल का राक्षस २०. पूर्वाषाढ़ा का जल (उदक) २१. उत्तराषाढ़ा का विश्वेदेव, २२. अभिजित् का ब्रह्मा, २३. श्रवण का विष्णु, २४. धनिष्ठा का वसु, २५. शततारका या शतभिषा का वरुण, २६. पूर्वा भाद्रपद का अजपाद, २७. उत्तराभाद्रपद का अहिर्बुध्न्य, २८. रेवती नक्षत्र का स्वामी पूषा है।

यह श्लोक ज्योतिषरत्नमाला (४,१) से मिलता–जुलता है– भेशादस्रयमाग्निधातृ शशिनशर्वोदितिर्वाक्यपति कद्रूजापितरोभगोऽर्यमरवित्वष्ट्रात्वया मारुतः। शक्राग्नित्वथमित्रइन्द्र निर्ऋतितोयं च विश्वेविधि र्गोविन्दोवसवोम्बुपाजचरणाऽहिर्बुध्न्य पूषाभिधाः॥

विष्णुधर्मोत्तरपुराण (१, ८३, १३–२१) में नक्षत्र स्वामी गणना इस प्रकार की गई है– अतः परं प्रवक्ष्यामि तव नक्षत्रदैवताः। कृत्तिका चाग्निदैवत्या रोहिण्यर्केश्वरा स्मृता॥ इन्द्वर्क्षः सौम्यदैवत्यो रौद्री आर्द्रा तथा स्मृता। पुनर्वसुस्तथादित्यो पुष्यश्च गुरुदेवतः॥ आश्लेषा सर्पदैवत्या मघा च पितृदैवता। भाग्याश्च पूर्वफाल्गुन्य आर्यमाश्च तथोत्तराः॥ सावित्रश्च तथा हस्तश्चित्रा त्वाष्ट्री प्रकीर्तिता। स्वातिश्च वायुदैवत्यो मूलञ्च तदुदाहृतम्। आप्यस्त्वाषाढ पूर्वाः स्युश्चोत्तरा वैश्वदैवताः॥ ब्राह्मी चैवाभिजित्प्रोक्ता श्रवणो वैष्णवः स्मृतः। वासवं च तथा ऋक्षं धनिष्ठा प्रोच्यते बुधैः॥ तथा शतभिषक्प्रोक्त नक्षत्रे वारुणं नृप। आजं भद्रापदापूर्वा आर्हिर्बुध्न्यं तथोत्तरा॥ पौष्णं च रेवती चार्क्षमश्विनी चाश्विदैवतम्। भरण्यश्च तथा याम्य प्रोक्तास्ते ऋक्षदैवताः॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

अथ चरादिसञ्ज्ञाविचारः

स्वात्यादित्यहरित्रयं चरचलं धात्रोत्तरा ध्रुस्थिराः
क्रूरोग्रं पितृपूर्विकान्तकमथ द्वीशानले मिश्रके।
हस्तेज्याश्व्यभिजिल्लघुर्मृगशिरश्चित्रान्त्यमैत्रं मृदु
ज्येष्ठार्द्रोरगमूलमेतदुदितं तीक्ष्णं शशीनारतः॥ ५॥

महादेवटीकया- स्वातिः, आदित्यम् अदितेरिदमादित्यं पुनर्वसुः, हरित्रयं हरिशब्देन हरिभं श्रवणो ग्राह्यः। इदं साङ्केतिकं शास्त्रं नामैकदेशग्रहणे नामग्रहणम्। श्रवणत्रयं श्रवणधनिष्ठाशततारा एतत् नक्षत्रपञ्चकं चरचलसंज्ञं भवति। अथ द्वीशं विशाखा अनलं कृत्तिका एते मिश्रसंज्ञे, हस्तः ईज्यं पुष्यः अश्वि अश्विनी अभिजित् अयं गणो लघुर्भवति, मृगशिरः चित्रा अन्त्यं रेवती मैत्रमनुराधा एतत् चतुष्कं मृदु। ज्येष्ठा आर्द्रा उरगमाश्लेषा मूलं एतत्तीक्ष्णम् उदितं कथितं नामसप्तकं चरचलादि एतत्, शशी चन्द्रः इनः सूर्यः आरो भौमः, ततो ज्ञेयं एतदुक्तं भवति चन्द्रश्चलश्चरः, रविः स्थिरो ध्रुवः, भौमः क्रूरोग्रः, बुधो मिश्रः, गुरुर्लघुः, शुक्रो मृदुः, शनिस्तीक्ष्णः, एवं नक्षत्रनामानि। तच्चोक्तम्-

'रविः स्थिरः शीतकरश्चरश्च महीज उग्रः शशिजश्च मिश्रः।
लघु सुरेज्यो भृगुजो मृदुश्च तीक्ष्णोऽर्कसूनुः कथितो मुनीन्द्रैः॥' इति॥ ५॥

मोहनबोधिनी- इन नक्षत्रों के अन्य पर्याय भी हैं- चर को चल भी कहा जाता है और क्रूर को उग्र भी। इसी प्रकार ध्रुव नक्षत्र को स्थिर, तीक्ष्य को दारुण, क्षिप्र को लघु, मृदु को मैत्र और साधारण को मिश्र नक्षत्र भी कहा जाता है। चरादि क्रम से इन नक्षत्रों के वार- स्वामी क्रमशः चन्द्रमा, सूर्य, भौम, बुध, गुरु, शुक्र तथा शनि को कहा गया है। इनमें इनके नामानुसार ही कार्य किया जाना चाहिए। इनका स्पष्ट विवरण इस प्रकार हैं-

नक्षत्रों के नाम	संज्ञा	वार
स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा	चर या चल	चन्द्रमा
रोहिणी, उ.फाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उ.भाद्रपद	ध्रुव या स्थिर	रवि
भरणी, मघा, पू.फा., पू.आषाढ़, पू.भाद्रपद	उग्र या क्रूर	भौम
कृत्तिका, विशाखा, भरणी	मिश्रक	बुध

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

अश्विनी, पुष्य, हस्त, अभिजित्	लघु या क्षिप्र	गुरु
मृगशिरा, चित्रा, अनुराधा, रेवती	मृदु	शुक्र
ज्येष्ठा, आर्द्रा, आश्लेषा, मूल	तीक्ष्ण	शनि

ज्योतिषरत्नमाला (४, १४) में भी उक्त संज्ञाएँ बताई गई हैं– चरं चलं क्रूरमुशन्ति चोग्रं ध्रुवं स्थिरं दारुणभं च तीक्ष्णं। क्षिप्रं लघुत्वं मृदुमैत्रसंज्ञं साधारणं मिश्रमिति ब्रुवन्ति ॥

उत्पातादियोगविचारः

द्वीशात्त्रीण्युदकोडुतो वसुभतः पौष्ण्यात्कभा-
जीवभादार्यम्णाद्रवितस्त्यजेद्यममघे त्वाष्ट्रद्विदैवे तथा।
वैश्वार्द्रे वसुमूलकेऽनलशते ज्येष्ठाकभेऽम्बुद्वयं सूर्येऽष्टौ
विदि पञ्च वारतिथिजान् विश्वान् समस्तेष्विति ॥ ६ ॥

महादेवटीकया– रवितो रविवारात् क्रमेण सप्तवारेषु एतानि भानि त्यजेत् शुभकार्येष्विति शेषः। तत्र रविवारे द्वीशात्त्रीणि विशाखायास्त्रीणि विशाखा अनुराधा ज्येष्ठा इति त्रीणि भानि त्यजेत्। सोमवारे उदकोडुतः पूर्वाषाढोत्तराषाढाऽभिजित्। बुधवारे पौष्णाद्रेवत्यास्त्रीणि रेवत्यश्विनीभरणीस्त्यजेत्। गुरुवारे कभाद्रोहिण्यास्त्रीणि रोहिणी-मृगार्द्रास्त्यजेत्। शुक्रवारे जीवभात् पुष्यात्रीणी उत्तराफाल्गुनीहस्तचित्रास्त्यजेत्। शनिवारे आर्यम्णात् उत्तराफाल्गुन्यास्त्रीणि पुष्याश्लेषामघाचित्रास्त्यजेत्। ऐतेन उत्पातमृत्युकाणयोगा उक्ताः। तथा तथैव रवितो द्वे द्वे भे त्यजेत्। ते के, यममघे भरणीमघे रविवारे त्यजेत्, सोमवारे त्वाष्ट्रद्विदैवे चित्राविशाखे, भौमवारे वैश्वार्द्रे उत्तराषाढाऽऽर्द्रे, बुधवारे वसुमूलके धनिष्ठामूले त्यजेत्, गुरुवारेऽनलशते कृत्तिकाशततारके त्यजेत्। भृगुवारे ज्येष्ठाकभे ज्येष्ठारोहिण्यौ, शनिवारे बुधद्वयं पूर्वाषाढाद्वयं पूर्वाषाढोत्तराषाढे त्याज्ये। अत्र त्याज्य-प्रकरणाद्यस्मिन् वारे यत् त्याज्यं तदेवमुक्तम्। तत्र शनिवारे केचन रेवतीं हस्तं च जन्मभं यमघण्टयोगाख्यया वदन्ति, तन्निर्मूलम्। यतः हस्ते मृत्युयोगस्य प्राक्कथनात् प्राचीनाचार्य-त्रिविक्रमेण लिखितमस्ति, अतः त्रिविक्रममते शनौ त्याज्यं 'शनेर्द्वेवर्ज्यमाषाढे द्वादशाभात्रयं तथा।' तेनाषाढाद्वयं निषिद्धम्।

अथ सूर्ये रविवारे प्रथमे वारे सप्तमी तिथी अनयोर्योगेऽष्टौ भवन्ति। एवं विदि बुधे तुर्ये वारे प्रतिपत्तिथी अनयोर्योगे पञ्च त्याज्याः, एवं समस्तेषु तिथिवारजान् विश्वान् त्रयोदश त्यजेत् एवं द्वादशीं रविवारे एकादशीं सोमवारे दशमीं भौमवासरे नवमीं बुधवासरे

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

अष्टमीं गुरौ सप्तमीं शुक्रे षष्ठीं शनिवारे त्यजेदिति संवर्त्तक्रकचावुक्तौ। इत्युत्पात-मृत्युकाणजन्मभयमघण्टसंवर्त्तक्रकचयोगाः ॥ ६ ॥

मोहनबोधिनी- अब उत्पात-मृत्यु-काण योगों पर विचार किया जा रहा है। इन योगों में रविवार से क्रमशः सातों वारों में निर्दिष्ट नक्षत्रों का त्याग करते हुए शुभकार्यों को किया जाना चाहिए। उत्पातादि ये योग कब होते हैं, इसे निम्नानुसार जानें कि जब रविवार को विशाखा, अनुराधा व ज्येष्ठा नक्षत्र हो, सोमवार को पूर्वाषाढ़, उत्तराषाढ़ व अभिजित हो, भौमवार को धनिष्ठा, शतभिषा व पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र हो, बुधवार को रेवती, अश्विनी व भरणी नक्षत्र हो, वृहस्पतिवार को रोहिणी, मृगशिर व आर्द्रा नक्षत्र हो, शुक्रवार को पुष्य, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा नक्षत्र हो तथा शनिवार को पुष्य, आश्लेषा, मघा व चित्रा नक्षत्र हो तो उसका त्याग कर दिया जाना चाहिए। ये क्रमशः उत्पात-मृत्यु-काणयोग कहे गए हैं। इसी प्रकार यमदंष्ट्रयोग हो तो रविवार से दो-दो नक्षत्र भरणी, मघा, सोमवार को चित्रा, विशाखा, भौमवार को उत्तराषाढ़, आर्द्रा, बुधवार को धनिष्ठा, मूल, गुरुवार को कृत्तिका व शतभिषा, शुक्रवार को ज्येष्ठा, रोहिणी, शनिवार को पूर्वाषाढ़, उत्तराषाढ़ का त्याग किया जाना चाहिए। ये शुभकार्य में वर्जित कहे गए हैं। इसी प्रकार को बुधवार को प्रतिपदा अनर्योगानुसार त्याज्य होने से समस्त तिथिवार पर विचार करते हुए तेरह का त्याग करें। क्रकच योग पर विचार करते हुए द्वादशी को रविवार, एकादशी को सोमवार, दशमी को भौमवार, नवमी को बुधवार, अष्टमी को गुरुवार, सप्तमी को शुक्रवार तथा षष्ठी को शनिवार जानकर त्याग कर दें।

स्पष्टार्थचक्रम्-

वार	सू	चं	मं	बु	वृ	शु	श
उत्पात	वि	पू.षा.	ध	रे	रो	पु	पु
मृत्यु	ऽनु	उ.षा.	श	अ	मृ	उफा	श्ले
काल	ज्ये	ऽभि	पूभा	भ	आ	ह	
सिद्धि	मू	श्र	उ भा	कृ	पु	पूफा	स्वा

अथ वारप्रवृत्तिहोरार्द्धयामकुलिका:

रात्र्यर्द्धं द्युयुतं सपादमनुयुक् वारप्रवृत्तिस्ततो

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

होरा सार्द्धघटिद्वया दिनपतेः षष्ठस्य षष्ठस्य सा।

तुर्याद्रिद्विशराष्टरामरसकं यामार्द्धमुज्झेद्रवेस्तिथ्यंशः

कुलिको मनूत्क्रमसमो घस्त्रे निरेको निशि॥ ७॥

महादेवटीकया- रात्रेरर्द्धं रात्रीणामर्द्धं द्युयुतं द्विनमानेन युतं कार्यं पश्चात्सपादाः पञ्चदशपलसहिताः चतुर्दशघटिकास्ताभिः युक् युक्तं कार्यं तदा वारप्रवृत्तिः स्यात् षष्ठितो न्यूने रात्रिशेषे षष्ठितोऽधिके सूर्योदयादूर्ध्वं ततो वारप्रवृत्तेः सकाशात् होरा भवति। किंलक्षणा ? सार्द्धघटिद्वयात् सार्द्धं घटिद्वयं यस्याः सा, सा दिनपतोर्दिनवाराद्ग्रहाणां होरा भवति तद्यथाप्रथमा दिनविभोः द्वितीया तस्मात्षष्ठस्य ततोऽपि षष्ठस्य एवं चतुर्विंशतिहोरा अहोरात्रे स्युः। तथा च श्रीपति *(ज्योतिषरत्नमाला ३, २३)*:-

वारप्रवृत्तेर्घटिका द्विर्निघ्नाः कालाख्यहोरापतयः शरासा।

दिनाधिपाद्या रविशुक्रसौम्याः शशाङ्कसौरीज्यकुजाः क्रमेण॥

इति, दिनाधिपाद्गणनीयाः, तासां मध्ये चन्द्रबुधजीवशुक्राणां होराः श्रेष्ठाः। रविकुज-मन्दानां होराः सामान्याः अतो मध्याः।

('यस्य ग्रहस्य यद्वारे किञ्चित्कर्म प्रकीर्तितम्।

तत्तस्य कालहोरायां सर्वमेव विधीयते॥' इति श्रीपत्युक्तिः।)

अथ रवेः सकाशात् यामार्द्धं त्यजेत् कतितमं तुर्याद्रिद्विशराष्टरामरसकं तुर्यं चतुर्थं रविवारे सोमवारेऽद्रि- सप्तमितं भौमे द्विमितं बुधे शरमितं पञ्चमं जीवे अष्टमितं शुक्रवारे राममितं त्रितयं शनिवारे रसमितं षष्ठम्। इयं वारवेला निषिद्धा पुनः रवेः सकाशात् तिथ्यंशो मुहूर्तः। दिनमानस्य पञ्चदशभागो मुहूर्तः स कुलिको भवति घस्त्रे दिवसे कतिमितः मनूत्क्रमसमः मनुतश्चतुर्दशतः उत्क्रमेण व्यस्ततया समः समसङ्ख्यः स कुलिको ज्ञेयः। रविवारे चतुर्दशो मुहूर्त्तः, सोमवारे द्वादशः, भौमवारे दशमः, बुधवारेऽष्टमः, गुरुवारे षष्ठः, शुक्रवारे तुर्यः शनिवारे द्वितीयः। निशि रात्रौ निरेकः, रविरात्रौ त्रयोदशः, सोमरात्रौ चैकादशः, भौमरात्रौ नवमः, बुधरात्रौ सप्तमः, गुरुरात्रौ पञ्चमः, शुक्ररात्रौ तृतीयः, शनिरात्रौ प्रथमः, एते कुलिकाः शुभकार्ये निषिद्धाः। तथा चोक्तम्-

मन्वर्कदिग्वस्वृतुवेदपक्षैरर्कान्मुहूर्तैः कुलिका भवन्ति।

दिवा निरेको ह्यथ यामिनीषु ते गर्हिताः कर्मसु शोभनेषु॥

इति। यदुक्तं श्रीपतिना *(ज्योतिषरत्नमाला ३, २४)*-

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

यस्य ग्रहस्य वारेऽपि यत्कर्म परिकीर्तितम्।

तत्तस्य कालहोरायां सर्वमेव विधीयते॥

इति आवश्यककृत्ये श्रीपतिवचने॥ ७॥

मोहनबोधिनी– रात्रिमान का अर्द्ध भाग निशार्ध है। इसमें दो का भाग देने से निशार्द्ध आता है और यदि दिनमान जोड़कर १४.१५ घटियाँ जोड़े तो उस समय वार प्रवृति होती है अर्थात् रविवार आदि में दिनपति से या सूर्यवार के क्रम से सूर्य, शुक्र, बुध, चन्द्रमा, शनि, गुरु एवं मङ्गल की कालहोरा होती है। इस प्रकार तीन आवृत्तियों में ३-३ और जोड़ने पर एक दिन की २४ कालहोरा होती है। जिस वार में कालहोरा ज्ञात करनी हो, तो पहली होरा उसी वार की, दूसरी उससे छठी की पुनः उससे छठे की इस क्रम से कालहोरा होती है। ऐसे में एक-एक कालहोरा २ घटी ३० पल की स्वीकारी गई है।

ऐसा कहा गया है कि रविवार में चौथा, सोम में सातवाँ, मङ्गल में तीसरा, बुध में पाँचवां, बृहस्पति में आठवाँ, शुक्र में तीसरा, शनि में छठा अर्धयाम शुभकर्म में त्याज्य होता है। इन अर्द्धयामों को दिन में ही त्याग किया गया है, रात्रि में नहीं। रवि आदि दिन में, क्रम से १३, ११, ९, ७, ५, ३, १ ये मुहूर्त कुलिक होते हैं। इनका मान दिनमान तथा रात्रिमान से पञ्चदशांश के तुल्य है, ये शुभकार्य में त्याज्य हैं।

नारायणदैवज्ञ ने मुहूर्तमार्तण्ड (४,२०) में स्पष्ट किया है– सूर्याद्यामदलं दिवैव निगमाद्र्यश्वीशुनागत्रिषट् सङ्ख्याकं कुलिकं दिवेन्द्ररविदिङ्नागर्तुवेदद्विकम्। व्येकं तन्निशि षोडशांशमपरे तिथ्यंशमुज्झन्ति तैः कालं कण्टकमैनिघण्टममरेज्यज्ञास्फुजिद्भ्यः क्रमात्॥

नारद का मत है– यस्मिन्वारे क्षणे वार इष्टस्तद्वासराधिपः। आद्यः षष्ठो द्वितीयो-ऽस्मात्तस्मात्तृतीयकः॥ षष्ठः षष्ठश्चेतरेषां कालहोराधिपाः स्मृता। सार्धनाडीद्वयेनेव दिवारात्रं यथाक्रमात्॥ (बृहद्दैवज्ञरञ्जनम् २३, ३६-३७)

स्पष्टार्थचक्रम्

वार	रवि	च.	मं.	बु.	वृ.	शु.	श.
यामार्ध	४	७	२	५	८	३	६
कु.दिवा	१४	१२	१०	८	६	४	२
कु.रात्रौ	१३	११	९	७	५	३	१

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

अथ विष्टिः

शुक्लेऽब्धीशमिते तिथौ परदले प्रागष्टमीराकयोर्विष्टिः
कृष्णदले त्रिदिक्षु परतः प्राक् सप्तमीभूतयोः।
तद्वक्त्रं(क्रं?) शरदोर्ननाङ्गाबुधिवसुत्र्यङ्कैकयामादितः
पुच्छं शस्तमिभेन्दुषड्गुणनगद्वीष्वब्धियामात्यये ॥ ८ ॥

महादेवटीकया- शुक्ल इति। शुक्ले पक्षेऽब्धीशमिते चतुरेकादशमिते तिथौ चतुर्थ्येकादश्योः परतः पश्चिमार्द्धे विष्टिः, अष्टमीराकयोस्तत्रैव शुक्ले प्राग्दले विष्टिः, अष्टमीराकयोस्तत्रैव शुक्ले प्राग्दले विष्टिः, कृष्णदले कृष्णपक्षे त्रिदिक्षु तृतीयादशम्योः पश्चिमार्द्धे विष्टिः, सप्तमीभूतयोः परतः कृष्णे प्राग्दले विष्टिः, तस्याः विष्टेः वक्त्रं शरदोर्नगाम्बुधिवसुत्र्यङ्कैकयामादितः पञ्चघटिकात्मकं वक्त्रं भवति। अत्र मानक्रमेण विष्टयो ग्राह्याः चतुर्थ्यष्टम्येकादशीपौर्णमासीतृतीयासप्तमीचतुर्दशीषु चतुर्थ्यां पञ्चमप्रहरे मुखम् अष्टम्यां द्वितीययामादौ, एकादश्यां सप्तमयामादौ, पूर्णिमायां चतुर्थयामादौ, कृष्णतृतीयायाम् अष्टमयामादौ, सप्तम्यां तृतीययामादौ, दशम्यां षष्ठयामादौ, चतुर्दश्यां प्रथमयामादौ, पञ्चघट्यात्मकं विष्टेर्मुखं भवति, तत्पुच्छं तत्कदा भवेत् चतुर्थीतः क्रमेण इभेन्दुषड्गुणनग-द्वीष्वब्धियामात्यये चतुर्थ्यामष्टमयामांते घटिकात्मकं विष्टेः पुच्छम्। अष्टम्यां प्रथमयामान्ते, एकादश्यां षष्ठयामान्ते, पौर्णमास्यां तृतीययामान्ते, सप्तम्यां सप्तमयामान्ते, दशम्यां द्वितीययामान्ते विष्टेः चतुर्दश्यां चतुर्थयामान्ते विष्टेः पुच्छम्। तथा चोक्तम् *(व्यवहारसमुच्चये, पीयूषधारा १, ४४)*–

दशम्यामष्टम्यां प्रथमघटिकापञ्चकपरं हरिद्युः
सप्तम्योस्त्रिदशघटिकातस्त्रिघटिकम्।
तृतीयाराकायां कुयमघटिकाभ्यः परतरं
ध्रुवं विष्टेः पुच्छं शिवतिथिचतुर्थ्योस्तु विगमे ॥

विष्टे रत्नमालायामपि *(६, ७)* मुखमेव यामादौ कथितमस्ति तदङ्गमपि-

नाड्यस्तु पञ्च वदनं गलकस्तथैका वक्षो दशैकसहिता घटिकाश्चतस्रः।
नाभिः कटी षडथ पुच्छलताऽत्र तिस्रो विष्टेर्बुधैर्निगदितोऽङ्गविभाग एषः ॥

उक्तं च-

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

मुखे कार्यध्वस्तिर्भवति मरणं चापि गलके

धने हानिर्वक्षःस्थलकटितटे बुद्धिविलयः।

कलिर्नाभीदेशे विजयमथ पुच्छे निगदितः

शरीरे भद्रायाः पृथगिति फलं पूर्वमुनिभिः॥ *(ज्योतिषसार पृष्ठ 39)*

अथ विष्टेःस्वरूपमाह–

दैत्येंद्रैः समरे सुरेषु विजितेष्वीशः क्रुधा दृष्टवान् स्वं

कार्यं कलिनिर्गता खरमुखी लाङ्गूलिनी च त्रिपात्।

विष्टिः सप्तभुजा मृगेंद्रगलका क्षामोदरी प्रेतगा

दैत्यघ्नी मुदितैः सुरैस्तु करणप्रान्ते नियुक्ता सदा॥ ८॥ *(ज्यो.र. ६, १२)*

मोहनबोधिनी– शुक्लपक्ष में चतुर्थी और एकादशी के उत्तरार्द्ध में, अष्टमी तथा पूर्णिमा के पूर्वार्द्ध में विष्टि को जानना चाहिए। कृष्णपक्ष में तृतीया और दशमी के उत्तरार्द्ध में और सप्तमी व चतुर्दशी के पूर्वार्द्ध में विष्टि जानें। शुक्लपक्ष में चतुर्थी के दिन पाँचवें प्रहर में, अष्टमी के दिन दूसरे प्रहर में, एकादशी को सातवें प्रहर में, पूर्णिमा के चतुर्थ प्रहर के आदि भाग में विष्टि का मुँह जानें। कृष्ण पक्ष की तृतीया के आठवें प्रहर में सप्तमी को तीसरे प्रहर में, दशमी को छठे प्रहर में और चतुर्दशी के प्रथम प्रहर के आदि भाग में विष्टि का मुख जानें। इसी प्रकार शुक्लपक्ष के चतुर्थी के दिन आठवें प्रहर में, अष्टमी को पहले प्रहर में, एकादशी को छठे प्रहर में और पूर्णिमा के तीसरे प्रहर के अन्तिम भाग में विष्टि की पूँछ जाननी चाहिए। कृष्ण पक्ष की तृतीया के दिन सातवें प्रहर में, सप्तमी को द्वितीय प्रहर में, दशमी को पाँचवें प्रहर में और चतुर्दशी के चतुर्थ प्रहर के अन्त्य भाग में विष्टिं का पुच्छ जानें। विष्टि के मुख का शुभ कार्य में त्याग किया जाना और पुच्छ को ग्रहण करना श्रेष्ठ होता है।

ज्योतिषरत्नमाला के अनुसार देव-दानव युद्ध के दौरान शिव ने अपने अङ्ग से भद्रा संज्ञक एक राक्षसी को उत्पन्न किया था। रत्नकोश में हंसी, नन्दिनी, त्रिशिरा, सुमुखी, करालिका, वैष्णवी, रौद्री, दुर्मुखी ४, ८, ११, ३, ७, १० व १४ क्रमशः इन तिथियों में भद्रा के ये नाम कहे गए हैं– हंसी नन्दिन्यपि च त्रिशिरा सुमुखी करालिका चैव। वैष्णविरौद्रमुखीति च दुर्मुखीविष्टयः क्रमशः॥ (सङ्ग्रहशिरोमणि ६, ११, तथा मुहूर्तचिन्तामणि १, ४३) इसी प्रकार चण्डेश्वर ने इसके नाम निम्न कहे हैं– कराली नन्दिनी रौद्री सुमुखी दुर्मुखी तथा। त्रिशिरा वैष्णवी हंसी अष्टावेतास्तु विष्टयः॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

(बृहद्दैवज्ञरञ्जनम् २६, १४) भद्रा का प्रमाण ३० घटिका कहा गया है। सोमवार व शुक्रवार को भद्रा हो तो कल्याणी संज्ञक, शनिवार को वृश्चिकी, गुरुवार को पुण्यवती, रवि, मङ्गल व बुध को भद्रा हो तो भद्रिका नाम होता है– सोमशुक्रे च कल्याणी शनौ चैव तु वृश्चिकी। गुरौ पुण्यवती ज्ञेया चान्य वारेषु भद्रिका॥

विष्टिया मुखपुच्छघटीज्ञानम्–

४	८	११	१५	३	८	१०	४	आसांतिथीनाम्
प.	आ.	उ.	नै.	इ.	द.	वा.	पू.	आसुदिग्विदिक्षु
५	२	७	४	८	३	६	१	एषु यामेष्वादौमुखप्रहरा
५	५	५	५	५	५	५	५	विष्टेर्मुखघटी ५ कृष्णे शु.
८	१	६	३	७	२	५	४	ए. यामेष्वन्त्यम् पुच्छ प्र.
३	३	३	३	३	३	३	३	घटीत्रयं पुच्छं शुक्ले शुभं

स्पष्टार्थ चक्र

३	२०	कृष्णपक्ष	परार्द्ध	भद्रानिवास	स्थान
७	१४	कृष्णपक्ष	पूर्वार्द्ध	मे.वृ.मि.वृ.	स्वर्ग
४	११	शुक्लपक्ष	परार्द्ध	क.ध.तु.म.	पाताल
८	१५	शुक्लपक्ष	पूर्वार्द्ध	कुं.मी.क.सिं.	पृथ्वी

	शुक्लपक्ष तिथि				कृष्णपक्ष तिथि			
तिथि	४	८	११	१५	३	७	१०	१४
भद्रा	परार्द्ध	पूर्वार्द्ध	परार्द्ध	पूर्वार्द्ध	परार्द्ध	पूर्वार्द्ध	परार्द्ध	पूर्वार्द्ध
प्रहर	५	२	७	४	८	३	६	१
मुखघ.	५	५	५	५	५	५	५	५
प्रहर	८	१	६	३	७	२	५	४
पु.घ.	३	३	३	३	३	३	३	३

अथ दिन–रात्रिभवास्त्रिंशन्मुहूर्ताः

रुद्राशीविषमित्रपितृवसुवार्विश्वेऽभिजित्केन्द्रपाः

शक्राग्नी निर्ऋतिर्दिने तिथिलवाः१५ पाश्यर्यमाख्यो भगः।

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

रात्रौ शम्भुरजाङ्घ्रितस्त्रयमगा दास्राद्विरौद्रा हरिः
सूर्यत्वाष्ट्रसमीरणा निजभजे कार्ये स्मृताः सिद्धिदाः ॥ ९ ॥

महादेवटीकया– रौद्रेति। एते दिने तिथिलवाः मुहूर्ता भवन्ति दिनमानस्य पञ्चदशो विभागः मुहूर्तो ज्ञेयः स मुहूर्तः क्रमेण रुद्रादीनां पञ्चदशदेवतानां वा तत्तन्नामकनक्षत्रसम्बन्धी भवति। ते के रुद्राशीविष इत्यादयः। सर्वदा प्रथममुहूर्तः रुद्रस्य भवति, आर्द्रासम्बन्धीत्यर्थः। द्वितीयः आशीविषाणां सर्पाणाम् आश्लेषासम्बन्धी भवति, पञ्चमो वसुदैवतो धनिष्ठासम्बन्धी भवति, षष्ठो वार्दैवतः पूर्वाषाढासम्बन्धी भवति, सप्तमो विश्वदैवत उत्तराषाढासम्बन्धी भवति, अष्टमोऽभिजिन्मुहूर्तः, नवमः कभदैवतो रोहिणीसम्बन्धी भवति, दशमः इन्द्रदैवतो ज्येष्ठासम्बन्धी भवति, एकादशः शक्राग्निदैवतः विशाखासम्बन्धी भवति, द्वादशो नैर्ऋतिदैवतो मूलसम्बन्धी भवति, त्रयोदशः पाशिदैवतो वरुणदैवतः शततारकासम्बन्धी भवति, चतुर्दशो यमदैवतः उत्तराफाल्गुनीसम्बन्धी भवति, पञ्चदशो भगदैवतः पूर्वाफाल्गुनीसम्बन्धी भवति, एते दिने मुहूर्ताः भवन्ति।

रात्रौ शम्भुरार्द्रा, अजाङ्घ्रितः पूर्वाभाद्रपदातस्त्रयं पूर्वाभाद्रपदा उत्तरभाद्रपदा रेवती, दास्राद्विरौद्रा आर्द्रारहिताः सप्त, अश्विनी भरणी कृत्तिका रोहिणी मृगशिरः पुनर्वसुः पुष्यः हरिः श्रवणः सूर्यो हस्तः त्वाष्ट्रं चित्रा समीरणो वायुदैवतः स्वाती एते मुहूर्ताः निजभजे स्वनक्षत्रभवे कार्ये सिद्धिदाः स्मृताः। आवश्यकं कार्यं यत्र नक्षत्रे कथितं वर्तते तस्य मुहूर्ते कर्तव्यम्। तदुक्तं रत्नमालायाम् *(७, १०)*–

यस्मिन् धिष्ण्ये यच्च कर्मोपदिष्टं तद्दैवत्यं तन्मुहूर्तेऽपि कार्यम्।

इति। लोके हि स्वामिसदृष्टं सेवके प्रयुज्यमानं दृश्यते अतो देवता सदृष्टं तन्नक्षत्रे कार्यमिति तिथ्यादिषूपचर्यते। तथा च दृष्टयोगदर्शनम् ॥ ९ ॥

मोहनबोधिनी– अब दिन व रात्रि के मुहूर्त लिखे जा रहे हैं। दिन के १५ मुहूर्तों के लिए दिनमान में १५ का भाग देकर एक मुहूर्त का घट्यात्मक मान निकाला जा सकता है। दिन के ये मुहूर्त निम्न हैं– १. रुद्रमुहूर्त २. आशीविष ३. मित्र ४. पितृ ५. वसु ६. वारि ७. विश्वेदेव ८. अभिजित् ९. क या विधाता १०. इन्द्र ११. शक्राग्नि या इन्द्राग्नि १२. निर्ऋति १३. वाश्य या उदकनाथ १४. अर्यमा और १५. भगमुहूर्त।

इसी प्रकार रात्रि के मुहूर्त भी रात्रिमान में १५ का भाग देकर घट्यात्मक रूप से निकाले जा सकते हैं। इनके नाम हैं– १. शम्भु २. अजपाद ३. अहिर्बुध्य ४. पूषा ५.

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

अश्विनीकुमार ६. यम ७. अग्नि ८. ब्रह्मा ९. चन्द्र १०. अदिति ११. बृहस्पति १२. विष्णु १३. सूर्य १४. त्वाष्ट्र और १५. समीर या मरुत। जिस दिन जिस नक्षत्र में जो भी कर्म कहा गया हो, यदि वह अप्राप्य हो तो भी उसके उक्त नक्षत्र के स्वामी के मुहूर्त के काल में उक्त वाञ्छित कर्म किए जा सकते हैं।

स्पष्टार्थचक्रम्-

नक्षत्र	दिवा मुहूर्ताः	नक्षत्र	रात्रौ मुहूर्ताः
आर्द्रा	१	आर्द्रा	१
आश्लेषा	२	पूर्वाभाद्र.	२
अनुराधा	३	उ. भाद्र.	३
मघा	४	रेवती	४
धनिष्ठा	५	अश्विनी	५
पूर्वाषाढ़	६	भरणी	६
उत्तराषाढ़	७	कृत्तिका	७
अभिजित्	८	रोहिणी	८
रोहिणी	९	मृगशिर	९
ज्येष्ठा	१०	पुनर्वसु	१०
विशाखा	११	पुष्य	११
मूल	१२	श्रवण	१२
शतभिषा	१३	हस्त	१३
उत्तराफा.	१४	चित्रा	१४
पूर्वाफा.	१५	स्वाती	१५

अथ बाणपञ्चकम्-

लग्नाढ्यास्तिथयो गता नव$_{९}$हृताः ख$_{०}$त्री$_{३}$ष्व$_{५}$गे$_{७}$ शेषके
न स्यात्पञ्च$_{५}$कमेकके मृतिरथो हौताशनं स्याद्द्वयोः।
तुर्ये राजकमङ्गके$_{६}$ हृतिरथोऽष्टा$_{८}$भीरुगाख्यं त्यजेदुद्वाहे
सदनेषु सेवनविधौ मार्गे व्रतेषु क्रमात् ॥ १० ॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

महादेवटीकया– लग्नाढ्या इति। मासादितो यास्तिथयः गताः तिथयो लग्नाढ्याः कार्याः आरम्भकालीनलग्नाङ्केन युता नवहृताः नवभिर्हृते भक्ते ख ० त्रि ३ इषु ५ अगे ७ शेषके पञ्चकं न भवति। एकशेषे मृतिर्भवति मृत्युपञ्चकं भवेत्। अथ द्वयोः शेषयोः सतोः हौताशनं वह्निपञ्चकं भवेत्। तुर्ये चतुष्के शेषके राजपञ्चकं भवति। अङ्के षट्शेषे हृतिश्चोरपञ्चकं भवेत्। अष्टाभिः शेषै रुगाख्यं भवेत् रोगपञ्चकं भवति। एतानि क्रमात् उद्वाहे विवाहे मृतिपञ्चकं, सदनेषु हुताशनपञ्चकं, सेवाविधौ राजपञ्चकम्, मार्गे हृतिपञ्चकं त्याज्यं, व्रतेषु व्रतबन्धादिषु रुगाख्यं रोगपञ्चकं त्यजेत्। उक्तं च–

व्रते रोगं पथे चौरं सेवायां राजपञ्चकम्।
गृहे चाग्निं परित्यज्य विवाहे मृत्युपञ्चकम्॥ इति॥ १०॥

मोहनबोधिनी– जिस लग्न में बाणदोष या पञ्चक पर विचार करना हो तो सूर्य की सङ्क्रान्ति के जितने दिन बीत गए हों, उनको लग्नाढ्य कर ९ से भाजित करें। लब्धि में यदि शून्य, तीन, पाँच व सात बचते हों तो पञ्चक नहीं होगा। यदि एक शेष बचता है तो मृत्युपञ्चक होता है। दो शेष हों तो हौताशन या वह्निपञ्चक, चार बचता हो तो राजपञ्चक, छह शेष हो तो हृति या चौरपञ्चक, आठ शेष हो तो रुगाख्य या रोगपञ्चक होता है। इनमें क्रम से विवाह में मृत्युपञ्चक, सदन में हुताशनपञ्चक, सेवाविधि में राजपञ्चक, यात्राप्रयाण में हृतिपञ्चक त्याज्य होता है। इसी प्रकार व्रत, व्रतबंधादि प्रकरण में रोगपञ्चक को सर्वथा त्याज्य कहा गया है।

पञ्चक जानने की एक विधि यह भी बताई गई है कि सूर्य सङ्क्रान्ति के जितने दिन बीते हों, उनमें १५ जोड़कर ९ से भाग देने पर शेष पाँच रहे तो रोगपञ्चक, सङ्क्रान्ति के व्यतीत दिनों में १२ जोड़कर ९ से भाजित करने पर शेष पाँच रहे तो अग्निपञ्चक, संक्रान्ति के बीते दिनों में १० जोड़कर ९ से भाजित करने पर पाँच शेष रहे तो राजपञ्चक, सङ्क्रान्ति के व्यतीत हुए दिनों में ८ जोड़कर ९ से भाजित किए जाने पर यदि पाँच शेष रहे तो चोरपञ्चक और सङ्क्रान्ति के बीते दिवसों में ४ जोड़कर ९ से भाग दिए जाने पर लब्धि पाँच हो तो मृत्युपञ्चक समझना चाहिए। चोरपञ्चक यात्रा में, रोगपञ्चक व्रतबंध में, अग्निपञ्चक आवास निर्माण में, राजपञ्चक सेवाकार्य में और मृत्युपञ्चक विवाह कार्य में सर्वथा त्याज्य होता है– सङ्क्रातितो यातदिनस्तिथ्यर्काशाष्ट वेदयुक्। नन्दाप्तपञ्चशेषे रुग्वह्निराच्चौरमृत्युकृत॥ याने चौरं व्रते रोगं गृहगोपेऽग्निपञ्चकम्। सेवायां राट् परित्याज्यं विवाहे मृतिपञ्चकम्॥ (बालबोधज्योतिषसारसमुच्चय पृष्ठ ११०)

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

मुहूर्तगणपति, दैवज्ञवल्लभ, ज्योतिषरत्नमाला, राजमार्तण्ड, ज्योतिस्सारसागरादि ग्रन्थों में भी पञ्चक पर विचार किया गया है। दैवज्ञवल्लभ में स्पष्ट किया गया है कि काष्ठ, तृण का सङ्ग्रह, दक्षिण दिशा का गमन, मृत का दहन, घर का आच्छादन, खाट की बुनाई जैसे कार्य पञ्चक में नहीं किए जाने चाहिए। किसी किसी का यह भी कहना है कि धनिष्ठा के उत्तरार्द्ध से रेवती के अन्त तक उक्त कर्म नहीं किए जाने चाहिए– कुर्यान्न दारुतृणसङ्ग्रहमन्तकाशायानं मृतस्य दहनं गृहगोपनं च। शय्यावितानमिह वासवपञ्चके च केचिद्वदन्ति परतो वसुदेवतोऽर्द्धात्॥ (बृहद्दैवज्ञरञ्जनम् २४, १६८)

यही मत श्रीपति का है– वासवोत्तरदलादिपञ्चके याम्यदिग्गमनगेहगोपनम्। प्रेतदाहतृणकाष्ठसङ्ग्रहं शय्यकावितननं च वर्जयेत्॥ (ज्योतिषरत्नमाला ४, ४४)

अथैकार्गलचण्डायुधौ–

गंशूव्यातिविवेषु षट्६ शर५ नवा९ङ्ग६ त्रि३ त्रि३ नाडीः पुरा
सर्वान्त्यव्यतिपातकौ च परिघार्धं पूर्वमुज्झेच्छुभे।
योगेष्वेष्विनभाद्विधुर्विषमभे विध्यृक्षयुक्तेऽर्गला
स्याच्चण्डीश्वरशस्त्रपात इह सागंशूव्यवैहान्तभे॥ ११॥

महादेवटीकया– गंशूव्येति। एषु योगेषु पुरा प्रथमाः एताः नाडीः त्यजेत्। केषु काः ? गं गंडः शू शूलः व्या व्याघातः, अति अतिगण्डः, वि विष्कम्भः, व वज्रयोगः, एषु पुरा पूर्वाः षट्शरनवाङ्गत्रित्रिनाडीः त्यजेत्। शुभे शुभकार्ये सर्वौ च तौ अन्त्यव्यतीपातकौ त्यजेत् वैधृतिव्यतिपातौ सर्वावपि। पूर्वं परिघार्द्धं परिघस्य पूर्वार्द्धमित्यर्थः। एषु प्रागुक्तयोगेषु गंशूव्यातिविवैव्यपरिघेषु सत्सु इनभात् सूर्यभात् विध्यृक्षयुक्ते अभिजित् तत्सहितगणिते सति विषमभे यदा विधुर्भवति तदाऽर्गला एकार्गलयोगो भवति। इह चण्डीश्वरशस्त्रपातः स्यात् इह क्व सा साध्यः गं गण्डः शू शूलः व्यतिपातः वै वैधृतिः ह हर्षणः एषां योगानां अन्ते यद्भं तत्र। तथा चोक्तम् (त्रिविक्रमशते)–

साध्यहर्षणशूलानां वैधृतिव्यतिपातयोः।
यद्भं गण्डस्य जाते स्यात्तत्पातेन निपातितम्॥ *(पीयूषधाराटीका ६, ६०)*
एवमेवैकार्गलहरायुधयोगौ कथितौ॥ १॥

मोहनबोधिनी– विवाहादि शुभ कार्यों के प्रसङ्ग में प्रथम नाडी व निम्न दोषों को

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

त्याग दिया जाना चाहिए– गण्ड, शूल, व्याघात, अतिगण्ड, विष्कम्भ, वज्रयोग। इन छह योगों के आरम्भ की क्रमशः ६, ५, ९, ६, ३, ३ नाडी को त्याग देना चाहिए। इसी प्रकार वैधृति और व्यतिपात योगों का सम्पूर्ण काल त्याज्य होता है। परिघ योग का पूर्वार्ध शुभकार्य में त्याज्य होता है, उत्तरार्ध ग्राह्य है। इसी प्रकार जिस दिन उक्त योग हों तब सूर्य के नक्षत्र से चान्द्र नक्षत्र तक अभिजित् सहित गणना करें और यदि चान्द्र नक्षत्र विषम संख्यक आए तो एकार्गल संज्ञक दोष जानना चाहिए। यह भी शुभ कार्यों में वर्जित है। इसके अतिरिक्त साध्य, गण्ड, शूल, व्यतिपात, वैधृति, हर्षण योग के अन्त में जो नक्षत्र हो तो वह चण्डायुध, ईश्वरायुध, शस्त्रपात दोष से दूषित होता है और यह भी सर्वथा त्याज्य है। यह पातदोष भी कहा गया है।

एकार्गल दोष के सम्बन्ध में रामदैवज्ञ का मत है कि व्याघात, गण्ड, व्यतिपात, विष्कम्भ, शूल, वैधृति, वज्र, परिघ तथा अतिगण्ड इन योगों में से कोई योग हो तथा उस काल में सूर्याधिष्ठित नक्षत्र से विषम नक्षत्र (१, ३, ५, ७, ९, ११, १३, १५, १७, १९, २१, २३, २५, २७) नक्षत्रों पर चन्द्रमा हो तो एकार्गल या खार्जूर संज्ञक दोष होता है, यह विवाह में निन्दित कहा गया है। इसमें नक्षत्र गणना साभिजित् होती है– व्याघातगण्डव्यतिपातपूर्वे शूलान्त्यवज्रे परिघातिगण्डे। एकार्गलाख्यो ह्यभिजित्समेतो दोषः शशी चेद्विषमर्क्षगोऽर्कात्॥ (मुहूर्तचिन्तामणि ६, ६२)

इसी प्रकार पात चण्डायुध के लिए कहा गया है कि शूल, हर्षण, साध्य, वैधृति, व्यतिपात, गण्डान्त तथा विष्टि का अन्त जिस नक्षत्र में होता है उसे चण्डायुध दोष कहा गया है, यह विवाह में त्याज्य होता है– शूलहर्षणसाध्यानां वैधृतिव्यतिपातयोः। गण्डस्यान्ते च यद्विष्टयां तच्चण्डायुधपातितम्॥ (मुहूर्तगणपति १५, १४१) इसी प्रकार की मान्यता त्रिविक्रमशतं में आई है। नारद ने इसे प्रकारान्तर से सम्पादित किया है– सूर्यभात्सार्प पित्र्यान्त्यत्वाष्ट्रमित्रोडुविष्णुभे। सङ्ख्यया दिनभे तावदश्विभात्पातदुष्टभम्॥ (पीयूषधारा टीका ६, ६०)

अथ लत्तासप्तपञ्चशलाकावेधः

अर्क$_{१२}$ त्री$_{३}$ भ$_{८}$ नखेषु$_{२०}$ भेषु दिनकृद्धौमार्क्यगूनां पुरो लत्ता
सप्त च तिर्यगूर्द्ध्वगतिका रेखा लिखेदग्निभात्।
वेधोऽत्रैकगयोरथोद्वहविधौ...............................

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

महादेवटीकया- दिनकृद्भौमार्क्यगूनां रविभौमशनिराहूणां पुरः पुरस्तात् एतेषु भेषु नक्षत्रेषु लत्ता स्यात्। एतेषु केषु अर्कत्रीभनखेषु अर्का द्वादश त्रीणि इभा अष्टौ नखा विंशतिस्तेषु अत्राशुभानां लत्ता कथिता यतः-

'उडुनि निर्दलिते शुभलत्तया न फलमस्ति बलस्य च लत्तया।

अशुभलत्तितमत्ति तदूढयोर्धनसुतानसुतायकरं परम्॥'

च परं तिर्यगूर्ध्वगतिकाः सप्तरेखाः लिखेत् अत्रैकरेखागतयोर्ग्रहयोः सतोर्वेधो भवति, स वेधो व्रतबन्धदेवप्रतिष्ठाचौलादिषु त्याज्यः।

मोहनबोधिनी- विवाह के नक्षत्र से निरन्तर दाहिनी ओर, आगे के १२वें नक्षत्र पर, मङ्गल तीसरे नक्षत्र पर, शनि आठवें नक्षत्र पर और राहु अपने स्थान से आगे के बीसवें नक्षत्र को लात-घात से आहत करता है। इस प्रकार लतादोष अथवा वेध जानना चाहिए। उक्त वेध व्रतबन्ध, देव प्रतिष्ठा, चौलकर्म आदि में त्याज्य कहा गया है। शुभ ग्रहों की लत्ता धन की कारक और सन्तानकारक होती है जैसा कि पूर्वमत है।

अब सप्तशलाका वेध पर विचार किया जा रहा है। इसके लिए सात रेखाएँ तिरछी और सात ही रेखाएँ ऊपर से नीचे की ओर डालें। इनके ऊपर साभिजित् नक्षत्रों का न्यास करें। इसमें देखें कि एक ही रेखा पर दोनों ही सिरों पर जो नक्षत्र विद्यमान होते हैं, उनमें आपस में वेध होता है। इसमें यदि कोई ग्रह कृत्तिका नक्षत्र पर है और दूसरा श्रवण नक्षत्र पर होगा तो उनमे परस्पर वेध माना जाएगा। इसी प्रकार रोहिणी का अभिजित्, मृगशिरा का उत्तराषाढ़ से वेध भी विचारणीय है। यह वेध विवाह को छोड़कर व्रतबन्ध, चौलकर्म, देवस्थापना इत्यादि में ही देखा जाता है। इनमें यह त्याज्य होता है।

लत्तादोष के विषय में कहा गया है- नक्षत्रं द्वादशं भानुस्तृतीयं लत्तया कुजः। षष्ठं जीवोऽष्टं मन्दो हन्ति दक्षिणतः सदा॥ वामेन सप्तमं चान्द्रिर्नवमं सिंहिकासुतः। हन्ति भं पञ्चमं शुक्रो द्वाविंश पूर्णचन्द्रमाः॥ (बालबोध. पृष्ठ १०७)

नारायणदैवज्ञ ने स्पष्ट किया है कि मङ्गल अपने आगे के तीसरे, बुध बाईसवें, वृहस्पति छठे, शुक्र चौबीसवें, शनि आठवें, राहु बीसवें, रवि बारहवें, पूर्ण चन्द्रमा सातवें नक्षत्र को लत्ता से हनन करते हैं। वह लत्ताहत नक्षत्र मालवा देश में अशुभ होता है- भौमात्त्र्याकृतिषड्जिनाष्टनखभं हन्त्यग्रतो लत्तया खेटोऽर्कोर्कमितं शशी मुनिमतं पूर्णो न सन्मालवे॥ (मुहूर्तमार्तण्ड ४, १६) यही मान्यता विट्ठलदीक्षित की है-

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

त्र्याकृतिषट्जिननागनखं भं हन्ति पुरः क्षितिजादपि खेटः। सूर्य इन प्रमितं परिपूर्णो लत्तपतीन्दुरग प्रममृक्षम्॥ (मुहूर्तकल्पद्रुम १३, ६९)

वस्तुतः जिस नक्षत्र में विवाह हो, उससे आगे या पीछे चक्र में निर्दिष्ट नक्षत्रों पर अभिजित रहित ग्रह विशेष की स्थिति होने पर लता दोष होता है।

सूर्यनक्षत्रात् चक्रम्-

ग्रह	सूर्य	चन्द्र	भौम	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु
ग्रहर्क्ष से पूर्व पूर्व विवाहार्क्ष	१२	७	३	२२	६	२४	८	२०
विवाहार्क्ष से आगे ग्रहर्क्ष	१७	२२	२६	७	२३	५	२१	९
फल	वित्तनाश	सर्वक्षय	मरण	विनाश	बंधुनाश	कार्यहानि	कुलक्षय	मृत्यु

अथ पञ्चशलाकावेधमाह-

..................................पञ्चोर्द्धतिर्यग्गता द्वे द्वे

कोणगतेऽत्र विध्यति खगाः कोणे द्विरेखेऽग्निभात्॥ १२॥

महादेवटीकया- अथोद्वाहविधौ विवाहे पञ्चपञ्च ऊर्ध्वतिर्यग्गता रेखा लिखेत्, द्वे द्वे रेखे कोणगते लेख्ये अत्रापि खगो ग्रहः कोणस्य ईशकोणस्थद्विमिताया रेखायाः तत्राग्निभात् स्थितो विध्यतिः तत्र सर्वेषामेव वेधस्त्याज्यः तत्र रोहिण्यां कथं वेधः स्यात् अभिजिति ग्रहे स्थिते रोहिणी विद्धा भवति अभिजित्कथं भवति वैश्वदेवतः चतुर्लवः श्रवणस्य पञ्चभू १५ लवः इह अभिजिति उत्तराषाढायाः प्रान्त्योऽङ्घ्रिः श्रवणस्य पञ्चदशो विभागः एतदभिजिद्धं भवति तत्रस्थे खेटे रोहिणीनां वेधो भवति॥ १२॥

मोहनबोधिनी- विवाहकार्य में वेध के सम्बन्ध में पञ्चशलाकाचक्र पर विचार करना चाहिए। इसके लिए पाँच रेखाएँ खड़ी और पाँच रेखाएँ सीधी डालकर दो-दो रेखाएँ उनको काटती हुई तिर्यक् डालें। इस प्रकार पञ्चशलाका चक्र बनता है। इसके ईशान कोण के अग्रभाग में कृत्तिका नक्षत्र से क्रमशः नक्षत्रों का लेखन करें। जन्म लग्न के निकट जो पूर्णिमा हो, उस दिन के नक्षत्र पर जो चन्द्रमा हो, उसे ही इसमें ग्रहण करना चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

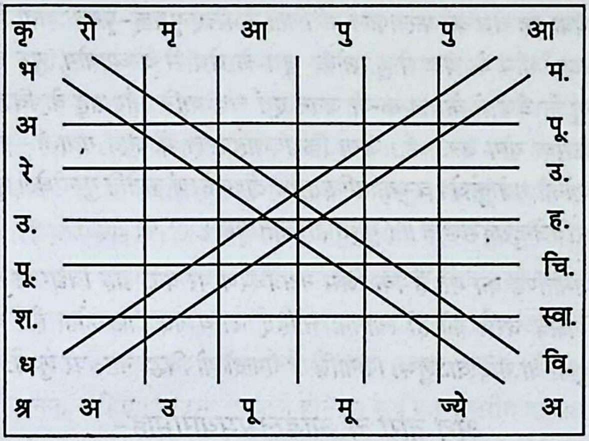

पञ्चशलाका चक्र

विवाह में पञ्चशलाकाचक्र के लिए यह जानना चाहिए कि ५ याम्योत्तर, ५ पूर्वापर और २-२ रेखाएँ कोण में न्यास करें। इस प्रकार पञ्चशलाका चक्र में कोणवाली दूसरी रेखा में कृत्तिका नक्षत्र लिखकर क्रम से साभिजित् नक्षत्रों को लिखें। इस प्रकार बने पञ्चशलाकाचक्र में जिस रेखा में ग्रह हो, उस रेखा के अग्रगत विवाहविहित सम्पूर्ण नक्षत्र को वेधित करता है। उसमें भी पापग्रह कृत वेध वर-वधू की आयु व शुभग्रह कृत वेध वर-वधू के सुख का विनाश करता है- याम्योत्तराः प्रागपराश्च पञ्च द्वे द्वे च रेखे रचयेद्विदिक्षु। विदिग्द्वितीयार्गलिताग्रितारः सहभिजित्तत्र भवेद्भवर्गः॥ तस्मिन्नभिन्नाग्रगतं भिनत्ति ग्रहो विवाहर्क्षम शेषमेव। स्त्रीपुंसयोरायुरसौम्यवेधः सौम्यव्यधो हन्ति सुखानि शश्वत्॥ (विवाहवृन्दावन १, ६-७)

ज्योतिष में श्रीपति की मान्यता के अनुसार वधूप्रवेश, दान, वर-कन्या वरण एवं विवाह में पञ्चशलाका व अन्यत्र सप्तशलाका से वेध विचार किया जाता है- वधूप्रवेशे दाने वरणे पाणिपीडने। वेधः पञ्चशलाकाख्योऽन्यत्र सप्तशलाककः॥ (विवाहवृन्दावन की गणेशकृतटीका में उद्धृत) इसमें ईशान कोणस्थ द्वितीय रेखा पर कृत्तिका नक्षत्र स्थापित कर प्रदक्षिणादिक्रमानुसार साभिजित् नक्षत्रों का न्यास किया जाता है। इसका उपयोग करने के लिए कर्तव्यकर्म में विहित नक्षत्र के सामने वाले नक्षत्र पर कोई ग्रह नहीं होना चाहिए, यही अवलोकनीय होता है। अन्यथा उक्त नक्षत्र विद्ध हो जाने पर उस कर्म के लिए उपयुक्त नहीं माना जाता है। उदाहरण स्वरूप अनुराधा में विवाह हो तो भरणी पर कोई ग्रह स्थित नहीं होना चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

प्रत्येक ग्रह वेध का फलाफल परिणिता के लिए पृथक्-पृथक होता है। रवि के वेध से वैधव्य, भौम के वेध से पुत्रशोक, बुध के वेध से वन्ध्यायोग, गुरु के वेध से प्रव्रज्या, भृगु के वेध से केवल कन्या जनन एवं चंद्र, शनि और राहु के विद्ध होने पर दासी कर्मकारक योग बनता है। जैसा कि विवाहपटल में कहा गया है- रविवेधे च वैधव्यं पुत्रशोको भवेत्कुजे। वन्ध्या पण्डितवेधे दीक्षाकरणं करोति गुरुवेधे॥ भृगुसुतवेधे पुत्री दासी रविजेन्दुराहुसम्भूते॥ (मुहूर्तपारिजात पृष्ठ १४९ पर उद्धृत)

राजमार्तण्ड का मत है कि जिस नक्षत्रचरण पर कोई ग्रह विद्यमान हो, उसके द्वारा विद्ध नक्षत्र चरण को ही त्यागना चाहिए, अन्य पद ग्राह्य होता है- यस्मिन्पादे ग्रहस्तिष्ठेच्छुभो वा यदि वाऽशुभः। तेनांघ्रिणा भपादो यो विद्धो नेष्टः परे शुभाः॥ (वही)

अथ तारा च आडलभ्रमयोगमाह-

जन्मर्क्षाद्दिनभोन्मितिर्नवहृतास्तारास्त्रिबाणाद्रयो

नेष्टास्तद्बलतो विधुर्विधुबलादर्कोऽर्कवीर्यात्परे।

ज्ञेयाः सङ्क्रमणे फलायुतगमे सूर्यर्क्षतश्चन्द्रभं

भक्तागैस्त्रिरसे भ्रमोऽम्बरयमे शेषे शुभश्चाडलः॥ १३॥

महादेवटीकया- स्वकीयजन्मभात् जन्मनक्षत्रात् दिनभोन्मितिः दिननक्षत्रस्य सङ्ख्या कार्या, सा नवहृता नवभिर्हृता कार्या शेषा शेषमिता तारा भवति। तत्र नव ताराः शेषाः कस्माद्भवन्ति शून्यशेषमिताः नवसु त्रिबाणाद्रयस्तृतीयाञ्चमीसप्तम्यो नेष्टाः शुभा न। तथा चोक्तम् *(तुलनीय- नारदसंहिता १३, ३ व ज्योतिषरत्नमाला ११,४)*-

जन्मसम्पद्विपत्क्षेमाः प्रत्यरिः साधका वधा।

मैत्रातिमैत्रास्ताराः स्युस्त्रित्ववृत्त्या न चैव हि॥

तद्बलतो विधुः ताराबलाद्विधुः फलदो भवति यादृशी यद्दिने तारा भवति तद्दिने चन्द्रस्तादृशं फलं ददाति, विधुबलादर्कः यादृशे चन्द्रे सूर्यः सङ्क्रमणं करोति तादृशं फलं सूर्यो ददाति, अर्कवीर्यात् परे भौमादयः षट् सङ्क्रमेण राशिसङ्क्रमेण फलदा ज्ञेयाः, यादृशे सूर्ये भौमबुधगुरुशुक्रशनिराहवो राशिसङ्क्रमणं कुर्वन्ति तादृशं स ग्रहः फलं ददाति तु पुनः गमे गमने सूर्यर्क्षतः सूर्यभात् चन्द्रभं यावत्तमं भवति तदगैः सप्तभिः भक्त्वा शेषं कार्यं त्रिरसे त्रिरसमिते शेष भ्रमः भ्रमणयोगो भवति। अम्बरयमे शून्यद्विशेषे अडलो योगो भवति। भ्रमोऽप्यशुभः अडलोऽप्यशुभः। इति त्याज्यप्रकरणम्॥ १३॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

मोहनबोधिनी- तारा का ज्ञान करने के लिए जन्म के नक्षत्र से वर्तमान दिन के चन्द्र नक्षत्र तक गणना करे और उसमें ९ की संख्या का भाग लगाएँ। जो शेष बचे उसको तारा जानना चाहिए। इनमें से एक बचे तो जन्मतारा होती है। (दूसरी सम्पद, तीसरी विपत्, चौथी क्षेम, पाँचवीं प्रत्यरि, छठी साधक, साधवीं बध, आठवीं मित्र तथा नौ या ०शेष बचें तो परम संज्ञक तारा समझना चाहिए)। ताराएँ अपने नामानुसार ही फल देने वाली कही गई हैं। अर्थात् इनमें विपत्, प्रत्यरि व वध ताराएँ अशुभ फल देने वाली है। जन्मतारा, द्वितीय सम्पद, छठी साधक, आठवीं मित्र तथा नवीं परम ताराएँ शुभ होती है। जब तारा फलवान होती है, चन्द्रमा का फल क्षीण होता है और जब चन्द्रमा बली होता है तब तारा क्षीण होती है। यह क्रमशः कृष्ण और शुक्लपक्ष के सम्बन्ध में जानना चाहिए। चन्द्रमा के बली होने पर सूर्य का गोचरीय तद्नुसार फल होता है। दूसरी ओर, सङ्क्रमणकाल में सूर्य उस दिन के चन्द्रमानुसार ही मासफल का कारक होता है।

इसके अतिरिक्त सूर्य के नक्षत्र से अभिजित् सहित चन्द्र के नक्षत्र तक की कुल संख्या में सात का भाग देवें। यदि तीन व छह शेष रहते हैं तो विडल या भ्रम संज्ञक दोष और यदि दो-सात शेष रहते हों तो आडल संज्ञक यात्रा दोष होता है। ये यात्राकाल में वर्जित दोष हैं।

कहा गया है कि जन्मतारा द्वितीया च षष्ठी चैव चतुर्थिका। अष्टमी नवमी चैव षट् तु तारा शुभावहाः॥ नारद का कथन है कि कृष्णपक्ष में तारा व शुक्लपक्ष में चन्द्रमा बल देता है, उभयपक्ष होने पर या मध्य में दोनों ही साधारण होते हैं- कृष्णे बलवती तारा शुक्लपक्षे बली शशी।

यही बात श्रीपति ने युक्तिपूर्वक समझाई है कि कृष्ण पक्ष में चन्द्रबल की अपेक्षा ताराबल की प्रधानता होती है। क्षीण चन्द्रमा होने पर तारा बलवान होती है जिस प्रकार पति के परदेश में होने पर पत्नी ही गार्हस्थ्य का सारा दायित्व निभाती है। शुक्लपक्ष में चन्द्रमा के बल की प्रधानता होती है न कि ताराबल की। यह उसी प्रकार होता है जैसे कि रात्रि में बली पति के होने पर परिणिता की स्वतंत्रता का अभाव हो जाता है- न खलु बहुलपक्षु शीतरश्मेः प्रभावः कथितमिह हि तारा वीर्यमार्यैः प्रधानम्। अतिविकल शरीरे प्रेयसि प्रोषिते वा प्रभवति खलु कर्तुं सर्वकार्याणि योषा॥ शुक्ले पक्षे शीतरश्मिर्बलीयान् न प्राधान्यं तारकायास्तु तत्र। शक्त्या युक्ते विद्यमानेश्च कान्ते न स्वतन्त्र्यं योषितः क्वापि दृष्टं॥ (पूर्वानुसार ११, ५-६)

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

यह कथन लल्ल के इस कथन का ही पुनर्लेखन जान पड़ता है– न कृष्णपक्षे शशिनः प्रभावो ताराबलं तत्र शुभं प्रदिष्टम्। देशान्तरस्थे विकले च पत्यौ सर्वाणि कार्याणि करोति नारी॥ अत्रापि तारापतिवीर्यमेव वदन्ति पक्षद्वितयेऽपि केचित्। केचिच्च तासां बलयुक्तमिन्दोर्बलं सदा देयमिति ब्रुवन्ति॥ (ज्योतिर्निबन्ध पृष्ठ ४९, श्लोक ८–९)

चन्द्र व ताराबल के सम्बन्ध में मुनि वशिष्ठ का मत है सितपक्षे हिमकिरणो बलवान्कृष्णेऽपि बलवती तारा। शशिबलवत्प्राधान्यं शुक्ले कृष्णे च तारकायाश्च॥ (वशिष्ठसंहिता २१,८)

ज्योतिर्निबन्ध में इस श्लोकार्थ को केशव की उक्ति के साथ उद्धृत किया गया है– पक्षे सिते चन्द्रबलं प्रधानं ताराबलं तत्र न चिन्तनीयम्। सुते गृहस्थे सबले च पत्यौ प्रधानता नास्ति यतोऽङ्गनानाम्॥

यह भी मत है– कृष्णेऽपि पक्षे विधुवीर्यमेव भवेत्प्रधानं ननु तारकायाः। दुःस्थः कृशो वा पतिरेव यद्वत्सर्वाणि कार्याणि विधापयीत॥ (पृष्ठ ४९ श्लोक ७ तथा १०)

रामदैवज्ञ ने आडल–भ्रमण दोषों को दक्षिण में प्रसिद्ध माना है। ये दोनों ही योग यात्रा एवं मार्ग में अड़चनकारक माने गए हैं। इनके लिए महाडल और भ्रम संज्ञाएँ दी हैं– रवेर्भतोब्जभोन्मितिर्नगा वशेषिता द्व्यगा। महाडलो न शस्यते त्रिषण्मिता भ्रमो भवेत्॥ (मुहूर्तचिन्तामणि ११, २५)

गणपति दैवज्ञ का मत है– रविभात् साभिजिच्चन्द्रे ससहृष्ट द्व्याद्रिशेषके। आडलोऽथ त्रिषट्शेषे भ्रमो नेष्टौ गमे त्विमौ॥ (मुहूर्तगणपति १७, ७९)

देवल के नाम से आडल विडल योग सर्वप्रथम नारायण दैवज्ञ ने दिया है– भृग्वर्काह्न्युदगर्कभाद् द्यभमगैस्तष्टं द्विसप्ताडलस्त्र्यङ्गाभ्यां विडलोऽनयोन गमनं श्रीदेवलोक्त्या हितम्॥ (मुहूर्तमार्तण्ड ७, ५) स्वयं नारायणदैवज्ञ ने इस श्लोकार्द्ध की व्याख्या की है और 'अनयोरडविडल–योर्गमनं श्रीदेवलोक्त्या देवलर्षिवचनेन हितं स्यात्' कहकर यात्रा में इन दोनों योगों को शुभफलद बताया है (मार्तण्डवल्लभाटीका, तत्रैव), इसके विपरीत, पं. सीताराम झा ने 'अनयोः श्रीदेवलोक्तया गमन हितं न भवति' कहकर इन दोनों योगों में देवल के मत से यात्रा अशुभ बताई है। (प्रभा समाख्यव्याख्या, तत्रैव)

अथ विवाहमुहूर्तः

रेवत्यां स्थिरमैत्रमूलमृगभे स्वातौ मघायां करे
सौम्येऽर्के शफरोज्झिते तनुषडष्टेन्दुं खलैर्युग्घतम्।

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

विद्धं भं कुलिकार्गलापमतुलां रिक्तां कुहूं पक्षतिं विष्टिं
यामदलं कुयोगकुदिनं त्यक्त्वा विवाहः शुभः॥ १४॥

महादेवटीकया- रेवत्यां स्थिराणि रोहिण्युत्तरभानि मैत्रमनुराधा मूलं मृगभे एषां समाहारः तस्मिन् स्वातौ मघायां करे हस्ते, पुनः क्व सौम्येऽर्के सौम्यायनगते रवौ किंलक्षणे सौम्यायने शफरोज्झिजे शफरो मीनस्तदुज्झितेऽर्केण रहिते गोधूलिकलग्नं कुर्यात्। किं कृत्वा तनुषडेष्टेन्दुं त्यक्त्वा तनौ षष्ठेऽष्टमे चन्द्रं त्यक्त्वा खलैः सूर्यभौमशनिराहुभियुक् युक्तं हतं लत्तितं विद्धं पञ्चशलाकाचक्रे विद्धं भं नक्षत्रं त्यक्त्वा कुलिको मनूक्रमसम इत्यादि अर्गला एकार्गलयोगः योगेष्वेष्विनभादित्यादि अपमतुलां क्रान्तिसाम्यं त्यक्त्वा क्रान्तिसाम्यं तु ब्रह्मतुल्ये पाताधिकारे समायाति।

अन्यच्च-

'शुक्ले खाब्धि $_{४०}$ घटीष्वस्ति पातो ध्रुवस्य दिक्ष्व $_{१०}$ पि।
प्रत्यब्दं गो $_{९}$ पलैर्हीनः खाद्रितिथ्युन्मिताच्छकात् $_{१५७०}$ ॥'

कुहूममावास्यां रिक्ताम् अमासान्निध्यात्कृष्णां चतुर्दशीं पक्षतिं प्रतिपदम्। यदुक्तम्-

'अमातिथिः पार्श्वतिथिद्वयेन समं न माङ्गल्यमुपादधाति।'

इति, विष्टिं भद्रां त्यक्त्वा यामदलं तुर्याद्रिद्विशराष्टमरसकमित्यादि यामदलं त्यक्त्वेत्यर्थः। कुयोगो मृत्युयमघण्टादिः कुदिनमवमं तमपि त्यक्त्वा विवाहो भवति। पुनः क्व शफरोज्झिते मीन सङ्क्रान्तिरहिते सौम्येऽर्के उत्तरायणगे सूर्ये अत्रोत्तरायणग्रहणं सौरमासादरार्थम्। तथा चोक्तम् *(विवाहवृन्दावन १, ३)*-

'रवेर्मीनमकरादिषडग्रही करग्रहे मङ्गलकृन्मृगीदृशाम्।' इति केशवार्कः।

तथापि सौम्यायनवशात्पौषेचैत्रयोः शुक्ल न विवाहः। तथा चोक्तं विवाहप्रकाशे-

'पौषे मृगगे सूर्ये परपक्षे चैत्रमास्यजर्क्षेऽर्के।
उद्वाहः कर्तव्योऽन्यथा भवेत्तावनिष्टफलौ॥'

तत्रैव-

'कार्तिकमासे शुद्धिं गुरोर्विलोक्य रवेश्चन्द्रबलम्।
अक्रूरयुते धिष्ण्ये देवात्थानावशाहे स्यात्॥'

अत्र ग्रन्थान्तरे वक्ष्यमाणश्लोके चापार्कमीनार्कयाम्यायनसिंहस्थगुरुभृगुजीवयोरस्त

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

बाल्यवृद्धत्वातिचारवक्रसमये परं सत्कार्यं न स्यादिति वक्ष्यति तस्मादत्र विवाहादौ गुरु-शुक्रयोः शिशुत्वजरत्वे त्याज्ये। तद्यथा शिशुजरत्वमाह-

'शिशुजरत्वमहान्युदयाऽस्तयोर्दश चतुर्दश चाङ्गिरसः स्फुटम्।

उसनसो दश पञ्च च पश्चिमे गतिवशात्त्रिदशाहमपश्चिमे ॥(*विवाहवृन्दावन* ५,९)

अन्यच्च-

अष्टाविंशतिवासरान् सुरगुरोर्वक्रातिचारे

त्यजेत्सिंहे पञ्चनवांशकान् मृगगते पञ्चैव नीचांशकान्।

बाले वृद्धदशां गतेऽथ नियतं लुप्ताख्यसंवत्सरं

सर्वं चास्तमिते सभीतिरहितः प्रोक्तं हि गर्गेण च॥

अष्टमे द्वादशे वर्षे मासत्रयगते सति।

विवाहं तत्र कुर्वीत गर्भमासविमिश्रणात्॥'

इत्यादि सर्वं विचार्य लग्नं कर्तव्यम्॥ १४॥

मोहनबोधिनी- पाणिग्रहण संस्कार के लिए निम्न मुहूर्त प्रशस्त है- नक्षत्रों में रेवती, स्थिर संज्ञक नक्षत्र (उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी), अनुराधा, मूल, मृगशिरा, स्वाती, मघा और हस्त नक्षत्र शुभ हैं। सूर्य उत्तरायण में हो किन्तु मीन राशि से रहित हों तो शुभ और ऐसे में गोधूली वेला में लग्न करने चाहिए। इसके साथ ही तनुभाव (जन्म का), षड्-अष्टम चन्द्रमा त्याग किया जाना चाहिए। सूर्य, भौम, शनि, राहु से युक्त और लत्तादि दोष, पञ्चशलाका चक्र से विद्ध नक्षत्रों का त्याग करें, कुलिक नक्षत्रों को भी त्यागना चाहिए। एकार्गलयोग, क्रान्तिसाम्य दोष भी वर्जित है। इसमें पाताधिकार पर विचार करें। क्रान्तिसाम्य को ब्रह्मतुल्य पाताधिकार के अनुरूप ग्रहण कर देखें। अमावस्या, रिक्तातिथि (४, ९, १४) कृष्णपक्ष की चतुर्दशी, प्रतिपदा, विष्टि या भद्रा, यामार्द्ध में चतुर्थ, दो, पाँच, आठ, छह का त्याग किया जाना चाहिए। समस्त कुयोगों, मृत्यु, यमघण्ट, कुदिन का भी त्याग कर विवाह किया जाना शुभ होता है। गुरु व शुक्रास्त, बाल्य, वार्द्धक्यादि भी वर्जित माना गया है। जैसा कि कहा गया है कि वृहस्पति के उदय के बाद १० दिन बाल्य और अस्त से पूर्व १४ दिन वृद्धत्व रहता है एवं गतिवश से शुक्र के पश्चिम दिशा के उदयास्त में क्रम से १० तथा १५ दिवस और पूर्व दिशा के उदयास्त में क्रम से ३ एवं १० दिवस स्पष्ट बाल्य व वार्द्धक्य रहता है।

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

आचार्यनीलकण्ठ ने मुहूर्तमुक्तावली में कहा है कि माघ, फाल्गुन, चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़- इन महीनों में, तृतीया, अष्टमी, त्रयोदशी, द्वितीया, सप्तमी, द्वादशी, पञ्चमी, दशमी, पौर्णमासी, चतुर्थी, नवमी, चतुर्दशी, प्रतिपदा, षष्ठी, एकादशी- इन तिथियों में और सब वारों में, उत्तरायण सूर्य में और मूल, मघा, रेवती, मृगशिर, हस्त, स्वाती, तीनों उत्तरा, रोहिणी, अनुराधा- इन नक्षत्रों में स्त्री-पुरुष का विवाह करना शुभ होता है- षण्मासास्तपपूर्वकास्तिथिजयाभद्रा च पूर्णा तथा रिक्तानन्दसमस्तवासरशुभे सौम्यायनेऽर्के वरे। मूलं पैत्रभरेवतीशशिकरे स्वात्युत्तरारोहिणी मैत्रे स्यान्मृगलोचना करतले संपीडनं सिद्धिदम्॥ (श्लोक २३)

केशवार्क का मत है कि ध्रुवसंज्ञक (उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी) अनुराधा, मृगशिरा, मूल, रेवती, हस्त, मघा एवं स्वाती ये ११ नक्षत्र यदि वेधादि दोषों से रहित हो तो स्त्रियों के पाणिग्रहण में मङ्गलकारक होते हैं तथा मीन को छोड़कर ६ राशियों- मकर, कुम्भ, मेष, वृष व मिथुन में सूर्य हो तो विवाह में मङ्गलकारक होता है- ध्रुवानुराधामृगमूलरेवतीकरं मघास्वातिरदूषणोगणः। रवेरमीना-मकरादिषड्ग्रही करग्रहे मङ्गलकृन्मृगीदृशाम॥ (विवाहवृन्दावन १, ३)

अथ घटिकालग्नम्-

लग्ने मानवराशिगे नवलवे चार्केश्चतुर्वर्जिते षष्ठे

लग्नपचन्द्रशुक्ररहिते रन्ध्रे विधोः पञ्चभिः।

हीनेऽथेन्दुगुरुसमौ मदगतौ पापोत्थकर्त्तर्यपि त्याज्या

लग्नशशाङ्कयोस्तनुलवौ तन्नाथदृष्टौ शुभौ॥ १५॥

महादेवटीकया- पूर्वश्लोके एषु योगेषु विवाहः शुभ इत्युक्तमस्ति तत्र लग्न-शुद्धिमाह- लग्ने मानवराशिगे इति। लग्ने मानवराशिगे मनुष्यराशिलग्ने मनुष्यराशय इति तुलामिथुनप्रमदाधनुःप्रथमखण्डमखण्डफलं जगुः वा मानवराशिगे नवलगे नवांशे लग्नस्य त्रिंशदंशाः तेषां नवांशः अंश ३ कला २० एवं राशौ नवनवांशा भवन्ति। तेषां नवांशानां गणना चतुर्भ्यो राशिभ्यो भवति। तद्यथा-

'मेषान्मेषा-श्व-सिंहानां नक्रा-द्वृष-मृगस्त्रियः
घटात्कुम्भत्रिजूकानां कर्कान्मीनालिकर्णिकाम्॥'

अनेन क्रमेण मानवराशिलवे मिथुनकन्यातुलाधनुषामन्यतमस्य नवांशे लग्नगे।

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

किंभूते लग्ने आर्के: शनेः सकाशाच्चतुर्ग्रहवर्जिते शनिरविचन्द्रभौमवर्जिते षष्ठे भवने चन्द्रलग्नपतिशुक्ररहिते षष्ठे लग्नपो भङ्गदः चन्द्रशुक्रौ च अष्टमे विधोः सकाशात्पञ्चभिर्हीने चन्द्रमङ्गलबुधगुरुशुक्रवर्ज्य इत्यर्थः। अथेन्दुगुरु चन्द्रजीवौ तत्र लग्ने मन्दगतौ सप्तमगतौ समौ न निषिद्धौ न श्रेष्ठौ अन्ये सप्तग्रहा जामित्रे भङ्गदाः। तथा चोक्तं त्रिविक्रमाचार्यैः-

'त्याज्या लग्नेऽब्धयो मन्दात्षष्ठे शुक्रेन्दुलग्नपाः।
रन्ध्रे चन्द्रादयः पञ्च सप्तमेऽब्जगुरू समौ॥' (त्रिविक्रमशते)

अथ लग्नशशाङ्कयोः पापोत्थकर्त्तरी त्याज्या लग्नं पापद्वयमध्ये भवति चन्द्रो वा पापद्वयमध्ये भवति एतद्द्वयं त्याज्यम्। तदुक्तम्-

'खलकृता तनुरोहिणीनाथयोर्हरधरा विधुरां कुरुते वधूम।' (त्रिविक्रमशते)

तनुलवौ लग्ननवांशौ तन्नाथदृष्टौ शुभौ॥ १५॥

मोहनबोधिनी- विवाह के उक्त योगों के साथ ही अब लग्नघटिका पर विचार किया जा रहा है। विवाह के प्रसङ्ग में यदि मानवराशियों (मिथुन, कन्या, तुला व धनु का पूर्वार्द्ध) का मेषादि से घटिकानुसार लग्न शुभ माना जाता है। इनके नवांश भी प्रशस्त हैं किन्तु नवांश तब ग्राह्य है जबकि उक्त मानव राशिगत लग्न नहीं हो। यहाँ यह विचारणीय है कि शनि, रवि, सोम और भौम लग्नस्थ नहीं हो। चन्द्रमा और गुरु को लग्नस्थ सम माना जाता है तथा अन्य ग्रह यदि सातवें स्थान पर हों तो किसी भी स्थिति में ग्राह्य नहीं माने। पापकर्त्तरी अथवा लग्न तथा चन्द्रमा से दूसरे स्थान में वक्री खलग्रह और बारहवें स्थान में मार्गी खलग्रह हो तो विवाह में वर्ज्य स्वीकारना चाहिए। इसके अतिरिक्त यदि विवाह के लग्न का स्वामी ही लग्न की ओर दृष्टि किए हुए हो तो शुभस्पद समझना चाहिए; यही नहीं नवांश गणनानुसार यदि नवांश का स्वामी नवांश पर ही दृष्टि किए जो तो विवाह के लिए शुभकारक होता है।

मान्यता यह है कि यदि शनि से चार ग्रह (शनि, रवि, चन्द्र, मङ्गल) छठे भाव में न हो, लग्नाधिपति चन्द्र और शुक्र भी छठे भाव में नहीं तथा चन्द्र से पाँच (चन्द्र, मङ्गल, बुध, गुरु एवं शुक्र) अष्टम में न हो और मानवराशि (मिथुन, कन्या, तुला, धनु का पूर्वभाग, कुम्भ) का लग्न हो अथवा मानव राशि का नवमांश लग्न में हो तो शुभ होता है। चन्द्रमा से गुरु यदि सप्तम में हो तो जामित्र दोष (चन्द्रमा से ग्रह सातवें भाग में हो तो) नहीं होता, यह स्थिति न तो शुभ होती है न ही अशुभ होती है। चन्द्रमा या लग्न यदि पाप कर्तरी (लग्न या चन्द्रमा पाप ग्रहों से मध्य में) हो तो वह त्याज्य होता है। चन्द्रमा लग्न और नवमांश पर शुभ दृष्टि होना भी शुभ के लिए आवश्यक है।

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

राम दैवज्ञ ने घटिका लग्नसिद्धि के लिए प्रक्रिया स्पष्ट करते हुए कहा है कि मेष-वृष आदि राशियों में सूर्य के रहने पर क्रम से स्पष्टगति (स्वल्पान्तर से विकला को छोड़कर) होती है। यथा- मेष राशि के सूर्य में ५८ कला, वृष के सूर्य में ५७ कला, मिथुन के सूर्य में ५७ कला, कर्कस्थ सूर्य में ५७ कला, सिंहगत सूर्य में ५८ कला, कन्या सूर्य में ५९ कला, तुलागत सूर्य की ६० कला, वृश्चिकार्क में ६१ कला, धन्वर्क में ६१ कला, मकरार्क में ६१ कला, कुम्भार्क में ६० कला और मीन के सूर्य में ५९ कला सूर्य की दैनिक गति होती है- मेषादिगेर्केऽष्टशरा५८ नगाक्षाः५७ ससेषवः५७ ससशरा५७ गजाक्षाः५८। गोऽक्षाः५९ खतर्काः६० कुरसाः६१ कुतर्काः६१ क्रङ्गानि६१ षष्टि-६० र्नवपञ्च५९ भुक्ति॥ (मुहूर्तचिन्तामणि ६, १०३)

अथ वधूप्रवेशद्विरागमनमुहूर्तः

स्वातौ मूललघुध्रुवे मृदुमघाकर्णे तथा वासवे रिक्तां

प्रोज्झ्य च भद्रिकां रविबुधक्षोणीजवारांस्तथा।

वध्वां वेश्मनि वेशनं शुभकरं शुक्रं पुरो दक्षिणं

त्यक्त्वाऽब्दे विषमे द्विरागमविधिर्यात्रातिथौ प्रोक्तभे॥ १६॥

महादेवटीकया- स्वाताविति। एषु योगेषु वध्वा नवोढायाः गृहप्रवेशः शुभो भवति, क्व स्वातौ मूललघुध्रुवे मूलं लघूनि च हस्तेज्याश्व्यभिजितानि, ध्रुवाणि च रोहिण्युत्तरात्रयं एषां समाहारस्तत्र, मृदुमघाकर्णे मृदूनि मृगशिरश्चित्रांत्यमैत्राणि च मघा च कर्णं श्रवणश्च एषां समाहारस्तत्र, तथा वासवे धनिष्ठायाम्।

तत्र त्याज्यमाह- रिक्तां च भद्रिकां च भद्रातिथिं तथा रविबुधभौमवारान् प्रोज्झ्य त्यक्त्वा॥ अब्दे विषमे तृतीये पञ्चमे शुक्रं पुरो दक्षिणं त्यक्त्वा द्विरागमविधिः प्रोक्तः। यात्रातिथौ रिक्तावर्जिततिथौ प्रोक्तभगणे स्वातौ मूलेत्यादिनोक्ते। अत्र देशाचारद्दीपोत्सवे द्विरागमं कुर्वन्ति तत्र पठन्ति-

'न शुक्रदोषो न च जीवदोषस्ताराबलं चन्द्रबलं न योज्यम्।

द्विरागमादौ नवकन्यकाया दीपोत्सवे मङ्गलमामनन्ति॥' इति॥ १६॥

मोहनबोधिनी- नववधू के लिए प्रवेश के लिए निम्न मुहूर्त श्रेष्ठ है- नक्षत्रों में स्वाति, मूल, लघुसंज्ञक नक्षत्र (अश्विनी, पुष्य, हस्त, अभिजित) ध्रुवसंज्ञक नक्षत्र (रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराफाल्गुनी), मृदुसंज्ञक नक्षत्र (मृगशिर, चित्रा,

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

अनुराधा, रेवती), मघा, श्रवण एवं धनिष्ठा नक्षत्र शुभ हैं। तिथियों में रिक्तातिथि (४, ९, १४), भद्रातिथि (२, ७, १२ अथवा भद्रा) तथा रवि, बुध, भौमवार त्याज्य कहे गए हैं। यात्रानिर्दिष्ट तिथियों, वार व नक्षत्रों को शुभ जानें किन्तु रिक्ता तिथियाँ वधूप्रवेश के प्रसङ्ग में वर्जित हैं, इसमें भी स्वाती, मूल व रविवार हों। विषम वर्ष देखना चाहिए। इसी प्रकार देशज परम्पराओं के अनुसार दीपोत्सव पर वधू का द्विरागमन (आणा, गोना, मुकलावा) करवाया जा सकता है। ऐसी स्थिति में सम्मुख एवं दक्षिण शुक्र दोष को त्याग दें। दीपोत्सव मङ्गल पर्व है, इस पर द्विरागमन हो सकता है।

नारायणदैवज्ञ का मत है कि विवाह से १६ दिनों में समसङ्ख्यक दिनों में तथा ५, ७, ९वें दिनों में और १६ दिवस बाद एक माह तक विषम दिनों में, एक माह बाद एक साल के भीतर विषम महीनों में, एक वर्ष के उपरान्त पाँच वर्ष तक विषम वर्षों में, ५ वर्ष बाद इच्छानुसार, विषम वर्षादि पर विचार नहीं करते हुए वैशाख, फाल्गुन, मार्गशीर्ष मासों के शुक्लपक्ष में श्रवण, धनिष्ठा तथा विवाहोक्त नक्षत्र, चित्रा, अश्विनी व पुष्य नक्षत्रों में स्थिर लग्नों में रात्रि में पुराने गृह में वधू का प्रवेश पुराचार्यों ने बताया है- लग्नादष्टिदिनान्ततः सममुनिष्वङ्कद्युषूर्ध्वं त्वयुग्घस्रे मास्यपि हायने शरमिताद्वर्षात्परं स्वेच्छया। वैफामार्गसिते जगुः श्रुतियुगोद्वाहर्क्षचित्राश्विनीज्येर्क्षैश्चानवमन्दिरे निशि वधूसम्वेशमङ्गे स्थिरे॥ (मुहूर्तमार्तण्ड ४, ४०)

भोजराजकृत राजमार्तण्ड में कहा गया है कि मृगशिरा, धनिष्ठा, आर्द्रा, तीनों उत्तरा, पुनर्वसु, पुष्य, रोहिणी, अनुराधा, अश्विनी, मूल, हस्त, शततारका (शतभिषा), स्वाती, श्रवण, रेवती नक्षत्र, शुभतिथि, कुम्भ, मेष, वृश्चिकस्थ रवि, शुक्र के उदय में, गुरु, बुध या शुक्रवार में नवीन वधू का गृह में प्रवेश करवाया जाना शुभ होता है- नीहारांशुधनोदितिगुरुब्राह्म्यानुराधाश्विनी शक्रो हस्तभवायुवारुणहरित्वाष्ट्रे प्रशस्ते तिथौ। कुम्भाजालिगते रवौ शुभकरे प्राप्तोदये भार्गवे॥ जीवारास्फुजितां दिने नववधूसद्मप्रवेशः शुभः॥ (राजमार्तण्ड ६१२)

इसी प्रकार वारों और तिथियों का फल कहा गया है- भास्करे रोगयुक्ता च परपुरुषरता बुधे। भौम मृत्युमथायाति प्रवेशेऽवशिष्टा शुभाः॥ अष्टपुत्रवतीजीवे चंद्रेलक्ष्मीप्रवर्द्धिनी॥ अतिप्रिया भवेच्छुक्रे ह्यष्टपुत्रवती शनौ। नन्दायां पुत्रजननी भद्रायां मृत्युरेव च॥ जयापूर्णाकुलं वृद्धी रिक्ता सन्तापकारिणी॥ (तत्रैव ६१३-६१४)

अथ प्रथमार्तवे शुभाशुभविचारः स्नानमुहूर्तश्च-

मासा भाद्रमधूर्जपौषशुचयः पर्वाष्टमी द्वादशी रिक्ता

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

षष्ठिकयाऽन्विता खलदिनान्युग्रर्क्षमिश्रेन्द्रभम्।
सर्पार्द्राः प्रथमार्त्तवे न शुभदाः सन्ध्या च रिक्ताऽष्टमी
तीक्ष्णाश्व्यन्त्यमघानलं कुदिवसं त्यक्त्वा तदीयाप्लवः॥ १७॥

महादेवटीकया– मासा इति। एते पदार्थाः नवाढायाः प्रथमार्तवे प्रथमरजोदर्शने शुभदा न भवन्ति, एते के भाद्रमधूर्जपौषशुचयो मासाः मधुः चैत्रः ऊर्जः कार्तिकः शुचिराषाढ एते पञ्च मासाः नेष्टाः। पर्वणी पौर्णमासीदर्शौ अष्टमी द्वादशी रिक्ता किंलक्षणा षष्ठिकयान्विता षष्ठीसहितेत्यर्थः। खलदिनानि रविभौमशनिवारा नेष्टाः। उग्रर्क्षम्, पितृपूर्विकान्तकं मिश्रे द्वीशानले इन्द्रभं ज्येष्ठा सर्पः आश्लेषाः आर्द्रा च परं संध्या एते पदार्थाः प्रथमार्तवे न शुभदा भवन्ति। ऐतेष्वेव यदि जायते तदा कौशिकोक्ता शान्तिर्लिखिताऽस्ति सा कर्तव्या। तदनन्तरं तया ऋतुस्नानं कर्तव्यम्।

तत्र शुद्धिमाह– रिक्तातिथिः अष्टमी तीक्ष्णं ज्येष्ठार्द्रोरगमूलम्। अश्वि अश्विनी अन्त्यं रेवती मेघा कृत्तिका कुदिवसं रविभौममन्दवारं त्यक्त्वा तदीयस्तस्या अयम् आप्लवः स्नानम् ऋतुमत्या मलस्नानं शुभमिति॥ १७॥

मोहनबोधिनी– नवोढ़ा के लिए प्रथम शुभ रजोदर्शन के लिए निम्न योग शुभ नहीं होते हैं जबकि भाद्रपद, चैत्र, कार्तिक, पौष, आषाढ़– ये पाँच मास हो। पर्व की दृष्टि से पूर्णमासी, अष्टमी, द्वादशी, रिक्तातिथि (४, ९, १४), षष्ठी तिथियाँ अशुभ होती है। रविवार, मङ्गल और शनिवार नेष्ट है। उग्रनक्षत्र (पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़, पूर्वाभाद्रपद, भरणी, मघा), मघा, रेवती, मिश्र या विशाखा, कृत्तिका, विशाखा, ज्येष्ठा, आश्लेषा, आर्द्रा नक्षत्र तथा सन्ध्याकाल के बाद के काल को शुभ नहीं माना गया है। इसके लिए कौशिक ऋषि ने शान्ति के लिए निर्देश दिए हैं। इसके लिए शुद्धि लिखी गई है कि रिक्तातिथि, तीक्ष्णसंज्ञक नक्षत्र या मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, आश्लेषा, अश्विनी, रेवती, मघा एवं कृत्तिका, रविवार, भौमवार, शनिवार को त्याग करें और शुभवार (सोमवार, बुध, गुरु एवं शुक्रवार) व शुभ तिथि में प्रथम ऋतुमती स्त्री को स्नान करना चाहिए।

रामदैवज्ञ का मत है कि माघ, मार्गशीर्ष, वैशाख, आश्विन, ज्येष्ठ और श्रावण– इन सात माहों में, शुक्लपक्ष में शुभवारों– सोमवार, बुध, गुरु तथा शुक्रवार में, शुभलग्नों २, ३, ४, ६, ७, ९, १२ में और दिन के समय स्त्रियों का प्रथम रजोदर्शन होना शुभ होता है। इसी प्रकार श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, मृदुसंज्ञक (मृगशिरा, चित्रा, अनुराधा, रेवती), क्षिप्र या लघु (हस्त, अश्विनी, पुष्य), ध्रुव (उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उत्तराभाद्रपद,

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

रोहिणी) तथा स्वाती इन १५ नक्षत्रों में श्वेत वस्त्र पहने हुए प्रथम रजोदर्शन शुभ माना गया है। मूल, पुनर्वसु, मघा एवं मिश्र संज्ञक या विशाखा तथा कृत्तिका नक्षत्रों में मध्यम और शेष नक्षत्रों भरणी, आर्द्रा, आश्लेषा, पूर्वाफाल्गुनी, ज्येष्ठा, पूर्वाषाढ़ा व पूर्वा भाद्रपदा में प्रथम रजोदर्शन निन्दित होता है- आद्यं रजः शुभं माघमार्गराधेषफाल्गुने। ज्येष्ठश्रावणयोः शुक्ले सद्वारे सत्तनौ दिवा॥ श्रुतित्रयमृदुक्षिप्रध्रुवस्वातौ सिताम्बरे। मध्यं च मूलादितिभे पितृमिश्रे परेष्वसत्॥ (५, १-२)

दैवज्ञवल्लभ नामक ग्रन्थ से श्रीपति के मत को गोविन्द ने उद्धत किया है कि रोहिणी, अनुराधा, अश्विनी, मृगशिरा, हस्त, स्वाती, ज्येष्ठा, धनिष्ठा, उत्तराषाढ़ा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद नक्षत्र में प्रथम रजस्वला को स्नान करवाना चाहिए, इसमें वार विचार भी अभीष्ट है- ब्रह्मानुराधाश्विनिसोमभेषु हस्तानिलाखण्डलवासवेषु। विश्वार्यमर्क्षोत्तरभाद्रभेषु वराङ्गनास्नानविधिः प्रदिष्टः॥ स्नाता प्रसूताऽप्यसुता बुधेन स्नाता च वन्ध्या भृगुनन्दनेन। सौरे मृतिः क्षीरहतिस्तु सोमे पुत्रार्थलाभो रविजीवभौमे॥ (पीयूषधाराटीका तत्रैव। बृहद्दैवज्ञरञ्जनम् में इसे अत्रि मुनि की उक्ति कहा गया है प्रकरण 49, 76)

ऋतुमति के लिए स्नानशुद्धि मन्त्र इस प्रकार बताया गया है- आदिर्भवान् गुसमनुं तन्मध्ये रजस्वलां देवि वयं नमामः। उपोषिता त्रीणि दिना भवन्तो भुक्तैरेतद्वासुदेवं नमामः॥ (बृहद्दैवज्ञरञ्जनम् 49, 80)

अथ गर्भाधानमुहूर्तः

त्यक्त्वा मूलमघान्त्यमादिमनिशं श्राद्धस्य घस्त्रं कुहूं
पक्षार्द्धं च चतुर्दशीं प्रथमतो रात्रीश्चतस्त्रो मुदा।
स्वीयां योषितमार्त्तवे समतमीष्विन्दौ शुभे शोभनैः
खेटैः कण्टककोणगैस्त्र्यरिभवे पापैर्नृपोगेष्वियात्॥ १८॥

महादेवटीकया- त्यक्त्वेति। आर्त्तवे ऋतुकाले स्वीयां योषितं स्वकीयप्रियतमां मुदा हर्षेणेयात् गच्छेत्, क्व? समतमीषु समरात्रिषु षष्ठ्यष्टमीदशमीद्वादशीचतुर्दशीषु किं कृत्वा प्रथमतः ऋतुकालात् चतस्रो रात्रीः त्यक्त्वा च मूलं मघां रेवतीं त्यक्त्वा श्राद्धस्य नैमित्तिकस्य पूर्वरात्रिं तथा तदहोरात्रं च त्यक्त्वा कुहूम अमां च परं पक्षार्धमष्टमीं चतुर्दशीं च त्यक्त्वा। क्व सति इन्दौ शुभै चन्द्रबले सति। शोभनैश्चन्द्रबुधगुरुशुक्रैः कण्टकलग्र-

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

तुर्यसप्तमदशमस्थैः कोणगैः नवपञ्चमगैः सद्भिः त्र्यरिभवे तृतीयषष्ठैकादशस्थैः रविकुजमन्दैः सद्भिः। पुनः क्व नृयोगेषु जातकोक्तनृयोगेषु *(बृहज्जातक ४, ११)*–

'ओजर्क्षे पुरुषांशकेषु बलिभिर्लग्नार्कगुर्विंदुभिः पुंजन्म प्रवदेत् समांशकयुतैर्युग्मेषु तै (वा ?) र्योषितः। गुर्वर्कौ विषमे नरं शशिसितौ वक्रश्च युग्मे स्त्रियः' इत्यादिभिर्योगैः सामान्येन भौमगुरुरविवारे मृगपुनर्वसुपुष्यमूलहस्तश्रवणानामेकतमे नक्षत्रे विषमलग्ने गुरौ त्रिकोणोदयस्थे ऋतुमतीं गच्छेदिति तात्पर्यार्थः॥ १८॥

मोहनबोधिनी– ऋतुकाल में अपनी पत्नी के साथ मुदित, हर्षित भाव को लेकर गर्भाधानार्थ गमन किया जाना चाहिए। इसके लिए यह ज्ञातव्य है कि समरात्रि ६, ८, १०, १२, १४ हो, ऋतुकाल की प्रारम्भ की चार रात्रियों को त्याग किया जाना चाहिए। इसी प्रकार मूल, मघा और रेवती नक्षत्र; ग्रहण, श्राद्धकाल, दिवस, अमावस्या, पक्षार्ध अथवा अष्टमी, चतुर्दशी का त्याग किया जाना चाहिए। इसी प्रकार चन्द्रबल व शुक्लपक्ष को देखना चाहिए अर्थात् गर्भाधान लग्न से केन्द्र, त्रिकोण में शुभग्रह, लग्न में शुभ सहित चन्द्रमा, ३, ६, ११ स्थानों में खलग्रह (सूर्य, मङ्गल, शनि व राहु) एवं पुरुष-जन्मप्रदयोग में गर्भाधान शुभ होता है। केन्द्र, त्रिकोण में शुभग्रह हों, लग्न को पुरुषग्रह (सूर्य, गुरु व मङ्गल) देखता हो, विषम नवांश में चन्द्रमा हो तब गर्भाधान किया जाना चाहिए। सामान्यतया भौमवार, गुरुवार, रविवार, मृगशिरा, पुनर्वसु, पुष्य, मूल, हस्त, श्रवण नामक नक्षत्रों में, विषम राशि, विषम अंश का लग्न, समरात्रि, वृहस्पति, चन्द्रमा, सूर्य विषम या त्रिकोणस्थ हो तब ऋतुमति के समीप जाना चाहिए। यह पुत्रजन्मकारक योग है, इससे विपरीत स्थिति में कन्या का जन्म होता है।

वृद्धवशिष्ठ का मत है– ओजर्क्षांशे लग्नगे वीर्ययुग्मे जीवेन्द्वर्कैरोजराश्यंशसंस्थैः। पुंजन्म स्याद्व्यत्यये कन्यका स्यान्मिश्रैः षण्ढो द्व्यङ्गगैर्द्वित्रिजन्म॥ (सङ्ग्रहशिरोमणि, १४, ३१)

महादेव ने टीका में 'बृहज्जातक' के सन्दर्भ से नरयोग को स्पष्ट किया गया है कि बलवान लग्न सूर्य, वृहस्पति, चन्द्रमा विषम राशि, विषम नवांशकों में आधान या प्रश्नकाल में हो तो पुत्र जन्म होता है। यदि ये ग्रह समराशि सम नवांशकों में हो तो कन्या का जन्म होता है। इसी प्रकार वृहस्पति, सूर्य विषम राशि में बलवान हो तो पुरुषजन्म और चंद्र, शुक्र, मङ्गल बलवान व समराशि में हो तो कन्या का जन्म होता है।

पुंसवनसीमन्तमुहूर्तः

मूलेज्यादितिविष्णुसूर्यशशिभे सीमन्तमङ्गाष्टके

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

मासे पुंसवनं त्रि३पञ्च५कमिते दक्षे तदीशे विधौ।
सद्दृष्टे कुजजीवभानुदिवसे पुंभागलग्ने खलैः
षष्ठत्र्यागतैः शुभैः सुततपःकेन्द्रष्वरिष्फाष्टगैः॥ १९॥

महादेवटीकया- मूलेति। एषु योगेषु सीमन्तकर्मसंस्कारः। एषु केषु अङ्गाष्टके षष्ठेऽष्टमे मासि कुलाचाराद्वा। मूलम् ईज्य पुष्यम् आदित्यं पुनर्वसुः विष्णुः श्रवणः सूयः हस्तः शशी मृगशिरः एषु नक्षत्रेषु त्रिपञ्चकमिते मासे पुंसवनं रक्षाबन्धनं कार्यम्। क्व सति तदीशे दक्षे सति तस्य मासस्य तृतीयपञ्चमषष्ठाष्टममासानाम् ईशे स्वामिनि दक्षे बलवत्तरे सति। मासेशास्तु जातके *(बृहज्जातक ४, १६)* प्रोक्ता-

कललघनाङ्कुरास्थिचर्माङ्गजं चेतनायाः सितकुजजीवसूर्यचन्द्रार्किबुधाः परत।
उदयपचन्द्रसूर्यनाथाः क्रमशो गदिताः भवन्ति शुभाशुभञ्च मासाधिपतेः सदृशम्॥

एतेषामेकतमे बलिनि विधौ चन्द्रे सद्दृष्टे शुभदृष्टे कुजजीवभानूनामेकतमवारे पुंभागलग्ने विषमलवे लग्नके वा विषमलग्ने खलैः पापैः षष्ठतृतीयलाभगैः शुभैः शोभनैः सुत ५ तपः ९ केन्द्रेषु १। ४, ७, १० गतैः अरिष्फाष्टगैः शुभैः रिष्फं द्वादशम् अष्टमं मृत्युभं तत्र गच्छन्ति ते रिष्फाष्टगाः न रिष्फाष्टगैः पुंसवनसीमन्ते स्तः॥ १९॥

मोहनबोधिनी- सीमन्तकर्मादि संस्कार के लिए छठे-आठवें मास में कुलाचार पर विचार करते हुए मूल, पुष्य, पुनर्वसु, श्रवण, हस्त और मृगशिरा नक्षत्र में तीसरे या पाँचवें मास में पुंसवन संस्कार किया जाना चाहिए। पुरुषलग्न को देखें- कुम्भ, मिथुन, धनु व मीन लग्न, मङ्गल, रवि और गुरुवार में, शुक्लपक्ष, शुभचन्द्र और केन्द्र त्रिकोण में शुभग्रहों के होने पर पुंसवन संस्कार शुभद होता है। इसी प्रकार सीमन्तकर्म संस्कार भी किया जाना चाहिए। इसमें लग्न से केन्द्र त्रिकोण, तीसरे व दूसरे स्थान में शुभ होने पर तथा ३, ६, ११ में पापग्रह, छठे, आठवें लग्न व १२वें में चन्द्रमा के न होने पर शुभग्रह के नवांश में, छठे आठवें मास में सीमन्तकर्म करना शुभद होता है।

लल्लाचार्य का कहना है कि नन्दा, भद्रा तिथियों, दूसरे या तीसरे मास के साथ उक्त योग में पुंसवन संस्कार किए जाने से वृद्धि और सुख मिलता है- मूलादित्यशशाङ्क पुष्यहरिभे हस्ते च पुंवासरे लग्ने कुम्भनृयुग्मसिंहगुरुभे नन्दे सभद्रे तिथौ। मासे युग्मतृतीयकेऽथ धवले पक्षे शुभे रात्रिपे कुर्यात्पुंसवन च वृद्धिसुखदं केन्द्रत्रिकोणे शुभे॥ (बृहद्दैवज्ञरञ्जनम् ५०, १५)

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

इसी प्रकार वशिष्ठ का कथन है कि गर्भ की जानकारी मिलते ही सीमन्तोक्त नक्षत्र मासादि में या तीसरे मास में उक्त मास के बली लग्न में, पुष्य या श्रवण में चन्द्रमा के रहने पर कर्क, मिथुन, कन्या लग्न को त्यागकर रिक्ता रहित तिथियों में लग्न से अष्टम में ग्रहों के न रहने पर शुक्र, चन्द्र, बुध और शनिवार में पुंसवन संस्कार किया जाना चाहिए- कुर्यात्पुंसवनं प्रसिद्धविषये गर्भे तृतीयेऽपि वा मासस्फीततनौ तुषारकिरणे पुष्येऽथवा वैष्णवे। हित्वा कर्कटकं नृयुग्ममबलामन्येष्वरिक्ते तिथौ शुद्धे नैधनधाम्नि शुक्र शशभृज्ज्ञेसौरिणां वासरे (शशभृद्विन्मन्त्रिणां वासरे)॥ (वशिष्ठसंहिता २५, १)

श्रीपति का मत है कि श्रवण, हस्त, पुनर्वसु, मूल, पुष्य, मृगशिरा और रविवार, भौम और गुरुवार पुंसवनादिक कर्म में चयनित किए जाने चाहिए- श्रवणः सकरः पुनर्वसुर्निर्ऋतेर्भं च सपुष्यको मृगः। रविभूसुतजीववासरा कथितः पुंसवनादिकर्मसु॥ (ज्योतिषरत्नमाला ४, २०)

सीमन्त कर्म के लिए मुहूर्तचूडामणि ग्रन्थ में कहा गया है कि छठे या आठवें मास, शुभतिथि, कन्या, वृश्चिक, सिंह, मीन या कर्क लग्न, पुरुषग्रहवार, पुरुषनक्षत्र, दोनों आषाढ़ा, आर्द्रा, दोनों भाद्रपद, शुभ करण, लग्न से केंद्र या त्रिकोणस्थ गुरु और ३, ६, १० में पापग्रह होने पर सीमन्तकर्म किया जा सकता है- षष्ठे वाप्यथवाष्टमे शुभतिथौ कन्यालिसिंहे झषे लग्ने कर्कटके नरग्रहदिने पुंभे अषाढाद्वये। रौद्रे भाद्रयुते शुभे च करणे केन्द्रत्रिकोणे गुरौ षट्त्र्यायारिगते खले शुभतिथौ सीमंतकर्मस्मृतम्॥ (बृहद्दैवज्ञरञ्जनम् ५१, १६)

गण्डान्तं सूतिकास्नाननामकरणमुहूर्तश्च-

अश्विन्यन्त्यभयोर्मघोरगभयोर्मूलेन्द्रयोः प्राक् परं
नाडीद्वन्द्वमसद्गमोद्वहजनुः कालेषु गण्डान्तकम्।
मैत्रान्त्यानिलभध्रुवेन्दुषु रवीज्यारेषु सूताप्लवः
केन्द्रे ज्ञेज्यसिते मृदुध्रुवचरे क्षिप्रेषु नामेष्टदम्॥ २०॥

महादेवटीकया- अश्विनीति। गमोद्वहजनुः कालेषु गण्डान्तकम् असत्। तत् कियत्क भवति, तदाह- अश्विन्यन्त्यभयोः अश्विनीरेवत्योः प्राक्परं घटीद्वन्द्वं अश्विन्यां प्राक् घटीद्वन्द्वं रेवत्यामन्त्यं घटीद्वयम् एवं चतुर्घटिकात्मकं गण्डान्तं कालो भवति। एवं मघायाः प्राक्घटीद्वयम् उरगभमाश्लेषा तस्याः प्रान्त्यं घटीद्वयं गण्डान्तकं भवति। मूलस्याद्यं

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

घटीद्वयं इन्द्रस्य ज्येष्ठायाः प्रान्त्यं घटीद्वयं गण्डान्तकं भवति। एवं चतुर्घटिकात्मकं गण्डान्तं भवति। अन्यग्रन्थे गण्डान्तं त्रिविधमुक्तम्-

गण्डान्त त्रिविधं प्रोक्तं नक्षत्रतिथिराशिजम्।

नवपञ्चचतुर्थ्यंते ह्येकार्द्धघटिकामितम्॥

अथ सूतायाः प्लवः स्नानं तत्क मैत्रान्त्यानिलभध्रुवेन्दुषु मैत्रमनुराधा अन्त्यं रेवती अनिलभं स्वातिः ध्रुवाणि रोहिण्युत्तराः इन्दुः मृगशिरः एतेषु भेषु रवीज्यारेषु रविगुरुमङ्गल-वारेषु।

ज्ञेज्यसिते बुधगुरुशुक्रे केन्द्रे सति मृदुध्रुवचरक्षिप्रेषु भेषु मृगशिरश्चित्रान्त्यमैत्र-रोहिण्युत्तरास्वातिपुनर्वसुश्रवणधनिष्ठाशतभिषक्हस्तपुष्याश्विन्यभिजित्सु नामकर्म इष्टदं वाञ्छितप्रदं भवति॥ २०॥

मोहनबोधिनी– यहाँ सर्वप्रथम गण्डान्त पर विचार किया जा रहा है। गण्डान्त तीन प्रकार के हैं– 1. नक्षत्र गण्डान्त 2. तिथि गण्डान्त तथा 3.लग्न या राशि गण्डान्त। ये अनिष्ठकारी होते हैं। शुभकार्यों के प्रसङ्ग में इनका त्याग कर दिया जाना चाहिए। अश्विनी के आरम्भ की दो और रेवती के अन्त की दो घटी; मघा के पूर्व की दो व आश्लेषा के अन्त की दो घटी और इसी प्रकार मूल के प्रारम्भ की दो व ज्येष्ठा के अन्त की दो घटी तक नक्षत्र गण्डान्त होता है। इसी प्रकार पूर्णा (५, १०, १५) के अन्त और नन्दा (१, ६, ११) के आरम्भ की एक-एक घटी को तिथि गण्डान्त माना गया है। लग्न गण्डान्त में मीन लग्न में अन्तिम आधी घटी, मेष में प्रारम्भ, वृश्चिक के अन्त, कर्क के अन्त और सिंह के आरम्भ की आधी-आधी घटियों की गणना की जाती है। (इनकी शान्ति करवाई जानी चाहिए)।

प्रसूता को कब स्नान करवाएँ, इस सम्बन्ध में कहा गया है कि प्रसवोपरान्त नारी को अनुराधा, रेवती, चित्रा, स्वाती, उत्तरात्रय (उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उत्तराभाद्रपद), रोहिणी और मृगशिरा नक्षत्र में; रविवार, गुरु व मङ्गलवार को स्नान करवाना चाहिए।

नामकरण के लिए आया है कि बुध, गुरु व शुक्र के लग्नगत रहते, मृदुसंज्ञक नक्षत्र (मृगशिरा, चित्रा, अनुराधा व रेवती), ध्रुवसंज्ञक नक्षत्र (उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी), चरसंज्ञक नक्षत्र (स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा व शतभिषा) एवं क्षिप्र (हस्त, अश्विनी, पुष्य) इंन नक्षत्रों में बालक का नामकरण संस्कार किया जाना चाहिए। यह इष्टफलकारक होता है।

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

त्रिविध गण्डान्त के विषय में ज्योतिष की मान्यता है कि नक्षत्र, तिथि व लग्न या राशि संज्ञक तीनों ही गण्डान्त का त्याग करना चाहिए। नक्षत्र गण्डान्त में नौ २ के अन्त में २ घटी, तिथि में पाँचवीं २ के बाद १ घटी तथा लग्न या राशि गण्डान्त में चौथी २ के अन्त वाली घटी का त्याग किया जाना चाहिए। शिवराज ने ज्योतिस्सारसागर के मत को उद्धृत करते हुए स्पष्ट किया है कि अश्विनी, मघा व मूल नक्षत्र की ३, ४, ९ आदि घटी का; रेवती, आश्लेषा नक्षत्र की अन्तिम १, ११, ६ घटियों का त्याग करना चाहिए- अश्विनीपौष्णमूलादौ त्रि३वेद४नव९नाडिका। रेवतीसर्पशक्रान्ते मास-रुद्र-रस (शक्र-शिवा?)स्तथा॥ (ज्योतिर्निबन्ध पृष्ठ ७०, श्लोक ३१)

च्यवन ने गण्डान्तापवाद मात्र यही दिया है- तिथ्यादीनां संधिदोषं तथा गण्डान्त संज्ञितम्। हन्ति लाभगतश्चन्द्रः केन्द्रगा वा शुभग्रहाः॥ इसके विपरीत गर्ग का मत है कि नक्षत्रगण्डान्त माता का, तिथिगण्डान्त पिता और लग्नगण्डान्त जातक का विनाश करता है, ऐसे में तीनों का त्याग कर दिया जाना चहिए- नाक्षत्रं मातरं हन्ति तिथिजं पितरं तथा। लग्नोत्थं जातकं हन्ति तस्माद्गण्डान्तमुत् त्येजेत्॥ (तत्रैव पृष्ठ २३९, ९)

राजमार्तण्ड में भोज ने कहा है कि गण्डान्त में उत्पन्न जातक को देखना शुभ नहीं होता, अन्य आचार्यों का कहना है कि होम पूर्वक दान किए जाने से उसे देखना शुभ होता है- गण्डप्रसूतं पुरुषं शुभमाहुरपश्यताम्। अन्ये तु होमपूर्वेण दानेन दर्शनं शुभम्॥ (श्लोक १३८)

तिथिगण्डान्त को स्पष्ट किया गया है कि रवि-चन्द्र का अन्तर अंश १२ होने पर पहली तिथि की पूर्ति, २४° अन्तर में द्वितीया, ३६° अन्तर में तृतीया, ४८° अन्तर होने पर चतुर्थी, ६०° अन्तर पर पञ्चमी का समापन होता है। इसी प्रकार ६०° अन्तर में २ राशि की प्रपूर्ति भी हो जाती है। ऐसे में ५ तिथियों की प्रपूर्ति के साथ ही ६०° या २ राशियों की पूर्ति पहली आवृत्ति में हुई। दूसरी बार छठ से लेकर दशमी तक ५ तिथियों और रवि, चन्द्र का १२०° अन्तर पूर्ण राशि हो जाने से द्वितीय वारावृत्ति में तिथि के साथ ही अन्तरांश का भी समापन हो जाता है। इस तरह आगे भी ४, ५ तिथियों तथा २, २ राशियों की प्रपूर्ति ३, ४, ५, ६ वार आवृत्ति में होती है। इस प्रकार ५, ५ तिथियाँ १, १ खण्ड या वर्ग बन जाता है। इसलिए प्रथम वर्ग का अन्त आगे के वर्ग की आदि को गण्डान्त नाम दिया गया है जो ५, १०, १५, ३० तिथियों के समापन और १, ६, ११ तिथियों के भागों से बनती है। ऐसे में पूर्णा तिथियों (५, १०, १५) के अन्त की १ घटी तथा नन्दादि तिथियों के आदि की १ घटी दोनों को मिलकर दो घटी तिथि गण्डान्त

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

कहलाती है। यह २ घटी तिथि का मान ६० घटी समझकर कहा गया है। तिथि का मान ६० घटी न्यून-अधिक हो तो अनुपात से स्पष्ट किया जाए।

इसी प्रकार नक्षत्रगण्डान्त व लग्न या राशिगण्डान्त के लिए यह जानना चाहिए कि अश्विनी आदि तथा मेष आदि के आरम्भ से इसी प्रकार ९, ९ चरणों की १,१ राशि की गणना करने पर आश्लेषा के अन्त में नक्षत्रों का, कर्क के अन्त में नक्षत्र तथा राशि दोनों का समापन होता है। तदनन्तर, इसी प्रकार गणना किए जाने से ज्येष्ठा के अन्त एवं वृश्चिक के अन्त में द्वितीयावृत्ति में युगपत् दोनों की समाप्ति होती है। तृतीयावृत्ति में रेवती के अन्त और मीन के अन्त दोनों का अवसान होता है। इसलिए आश्लेषा-मघा, ज्येष्ठा-मूल, रेवती-अश्विनी की सन्धि में नक्षत्रगण्डान्त तथा कर्क-सिंह, वृश्चिक-धनु, मीन-मेष की संधि में राशि संयोजन होता है। इसे लग्न या राशि में बदलकर लग्न या राशिगण्डान्त नाम दिया गया है।

प्रसूता स्त्री के स्नान के लिए रामदैवज्ञ का मत है कि रेवती, ध्रुवसंज्ञक, मृगशिरा, हस्त, स्वाती, अश्विनी एवं अनुराधा इन १४ नक्षत्रों में, रविवार, भौम, गुरवारों में प्रसूता स्नान उत्तम होता है। आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, श्रवण, मघा, भरणी, मिश्र, मूल व चित्रा में, बुधवार, शनिवारों में, अष्टमी, षष्ठी, द्वादशी व रिक्ता तिथियों में शुभ नहीं होता। अन्य नक्षत्रों आश्लेषा, पूर्वाफाल्गुनी, ज्येष्ठा, पूर्वाषाढा, धनिष्ठा एवं पूर्वाभाद्रपदा में, सोमवार व शुक्रवार को प्रसूता स्नान मध्यम माना गया है- पौष्णध्रुवेन्दुकरवातहयेषु सूतीस्नानं समित्रभरवीज्यकुजेषु शस्तम्। नार्द्रात्रयश्रुतिमघान्तकमिश्रमूलत्वाष्टे ज्ञसौरिवसुषड्विरिक्ता तिथ्याम्॥ (मुहूर्तचिन्तामणि ५, १२)

यहाँ स्तनपानमुहूर्त भी विचारणीय है जो कि मुहूर्तमुक्तावली में दिया गया है कि पुनर्वसु, पुष्य, मघा, मूल, तीनों उत्तरा, विशाखा नक्षत्र, सूर्य, गुरु, बुध, शुक्र व सोमवार स्तनपान कराने में शुभ हैं- पुनर्वसौ पुष्यमघासु मूले त्रिरुत्तरा चैव विशाखिका च। वारेऽर्कजीवे बुधशुक्रचंद्रे स्तनपानकार्ये शुभदा भवन्ति॥ (बृहद्दैवज्ञरञ्जनम् ५३, ३५७)

दैवज्ञवल्लभकार श्रीपतिभट्टाचार्य का कथन है कि रिक्ता तिथियों, भौमवार, विष्टि, पात व वैधृति दोषों को छोड़कर मृदु, ध्रुव, क्षिप्र नक्षत्र में स्तनपान करवाना शुभ होता है- रिक्तां भौमं परित्यज्य विष्टिं पातं सवैधृतिम्। मृदुध्रुवक्षिप्रभेषु स्तन्यपानं हितं शिशोः॥ (पीयूषधाराटीका ५, १२ पर उद्धृत)

नामकरण संस्कार के लिए चण्डेश्वर का मत है कि धनिष्ठा, हस्त, पुष्य, उत्तरात्रय, पुनर्वसु, मृगशिरा, चित्रा, अनुराधा, स्वाती, मूल, श्रवण नक्षत्र में, रविवार, चन्द्र, बुध व

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

गुरुवार में, लग्नस्थ शुभग्रह होने, बुध या अन्य शुभग्रहों के केन्द्र, नव-पञ्चम में स्थिति और शेष स्थान पापग्रहों के होने पर बालक का नामकरण किया जाना शुभ होता है-
वस्वादित्यगुरूत्तरादितिमृगैश्चित्रानुराधानिलैर्मूलावैष्णवरेवतीन्दुतुरगैः सञ्ज्ञां प्रकुर्याच्छिशोः।
वारेणार्कशशिज्ञवाक्पतिगुरोलग्नस्थिते शोभने सौम्ये केन्द्रनवात्मजन्मसहितैः पापैश्च शेषस्थितैः॥ (बृहद्दैवज्ञरञ्जनम् ५४, २१)

सारसङ्ग्रह में कहा गया है कि ब्राह्मणों को ग्यारहवें दिन, क्षत्रियों को तेरहवें, वैश्यों को सोलहवें दिन तथा शूद्रों को मासान्त में नामकरण संस्कार करना चाहिए-
एकादशेऽह्नि विप्राणां क्षत्रियाणां त्रयोदशे। वैश्यानां षोडशे नाम मासान्ते शूद्रजन्मनाम्॥ (पीयूषधाराटीका ५, ११ पर उद्धृत)

नामकरण के लिए नक्षत्रानुसार निम्न अक्षरों से नाम रखने की परंपरा है।

अथावकहडाचक्रम्

क्रम	नक्षत्र	वर्ण	क्रम	नक्षत्र	वर्ण
१.	अश्विनी	चू चे चो ला	२.	भरणी	ली लू ले लो
३.	कृत्तिका	अ इ उ ए	४.	रोहिणी	ओ बा बी बू
५.	मृगशिरा	वे वो का की	६.	आर्द्रा	कु घ ङ छ
७.	पुनर्वसु	के को हा ही	८.	पुष्य	हू हे हो डा
९.	आश्लेषा	डी डू डे डो	१०.	मघा	म मा मू मे
११.	पूफा	मो टा टी टू	१२.	उफा	टे टो पा पी
१३.	हस्त	पू ष ण ठ	१४.	चित्रा	पे पो रा री
१५.	स्वाती	रू रे रो ता	१६.	विशाखा	ती तू ते तो
१७.	अनुराधा	ना नी नू ने	१८.	ज्येष्ठा	नो या यि यू
१९.	मूल	य यो भा भी	२०.	पूषा	भू ध फ ढ
२१.	उषा	भे भे जा जि	२२.	अभि	जू जे जो षा
२३.	श्रवण	खि खू खे खो	२४.	धनिष्ठा	गा गी गु गे
२५.	शतभिषा	गो सा से सु	२६.	पूभा	से सो दा दी
२७.	उभा	दू थ झ ञ	२८.	रेवती	दे दो चा ची

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

अथ प्रेङ्खारोहणमुहूर्तः

पौष्णेज्याश्विकरद्वयध्रुवचरेष्वारार्किहीने दिने
दन्ता$_{३२}$ष्टादश$_{१८}$षोडशा$_{१६}$र्क$_{१२}$दशमे$_{१०}$ प्रेङ्खाधिरोहः शुभः।
तच्चक्रेऽथ चतुर्दिशं शरमितास्तारा नगा मध्यगाः
सूर्याक्षाच्छुभमृत्युकार्श्यरुदनं दिक्ष्वष्टदा मध्यगाः॥ २१॥

महादेवटीकया- पौष्णेति। अस्मिन्योगे प्रेङ्खाधिरोहः शुभः पौष्णेज्याश्विकरद्वय-ध्रुवेचरेषु भेषु भौमशनिवर्जित वारे दन्त ३२ अष्टादश १८ षोडश १६ अर्क १२ दशमे १० दिने तच्चक्रे तस्याः प्रेङ्खायाश्चक्रे सूर्यर्क्षात् प्रतिदिशं पञ्चभानि नगाः ७ मध्ये देयानि शीर्ष प्रदेशे पञ्च शुभाः ताराः भानि दक्षिणे पञ्च मृत्युदाः पश्चिमे पञ्च कार्श्यकृतः सौम्ये पञ्च रुदनं कुर्वन्ति एताः चतुर्दिक्षु फलाः मध्यगाः नगाः इष्टदाः॥ २१॥

मोहनबोधिनी- बालक को झूले में झुलाने के लिए निम्न मुहूर्त है- रेवती, पुष्य, अश्विनी, हस्त, चित्रा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उत्तराभाद्रपद, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा- इन तेरह नक्षत्रों को ग्रहण करें किन्तु भौमवार, शनिवार को त्याग दें। जन्मदिन से ३२वें, १८, १६, १२, १०वें दिन दोलारोहण करवाएँ तथा शुभवार देखना चाहिए। इसके लिए चक्र भी देखना चाहिए। इस चक्र में सूर्य के नक्षत्र से इष्ट दिन के नक्षत्र तक क्रम से ५, ५, ५, ५ एवं ७ नक्षत्र स्थापित करें। इष्ट दिन का नक्षत्र जिस कोष्ठक में पड़े तद्नुसार उसका फल निम्नानुसार समझना चाहिए।

दोलारोहणचक्रम्

सूर्य नक्षत्र से इष्ट नक्षत्र तक	५	५	५	५	७
फलाफल	आरोग्य	मरण	दुर्बलता	रोग	सुख

दोलारोहण में रामदैवज्ञ का यही मत है- दन्तार्कभूपधृतिदिङ्भितवासरे स्याद्वारे शुभे मृदु-लघु-ध्रुवभैः शिशूनाम्...। दोलारोहेऽर्कभात् पञ्चशरपञ्चेषुसप्तभैः। नैरुज्यं मरणं कार्श्यं व्याधिः सौख्यं क्रमाच्छिशोः॥ (मुहूर्तचिन्तामणि ५, १५ व १४)

मुहूर्तगणपतिकार का मत है- रविभात् पञ्चमे सौख्यं ततः पञ्चदशस्वपि। अशुभं च ततः शेषे शुभं दोलाधिरोहणम्॥ (१४, ५३)

प्रयोगपारिजात में कहा गया है- दोलारोहस्तु कर्त्तव्यो दशमे द्वादशेऽपि वा। षोडशे दिवसे वापि द्वात्रिंशद्दिवसेऽपि वा॥ (पीयूषधारा टीका ५, १५ पर उद्धृत)

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

दीपिकाकार का मत है कि भद्रा, शनि, मङ्गल का दिन व ज्येष्ठा, मूल, आश्लेषा, आर्द्रा, कृत्तिका को छोड़कर प्रशस्त पूर्ण बली चन्द्रमा से युक्त तिथि-नक्षत्र व योग लाभ में दोलारोहण शुभ है- उग्रेन्द्रमूलाहिशिवाग्निवर्ज्यं शस्तेन्दुनायुक्तिथिलग्नयोगे। विष्टिक्षमा पुत्रयमाहवर्ज्यमान्दोलिकारोहणमत्र शस्तम्॥ (पीयूषधारा टीका वही, सङ्ग्रहशिरोमणि १४, १६० पर उद्धृत)

अथ निष्क्रमणमुहूर्तः

निष्क्रामस्त्रितुरीयमासि हरिभद्वन्द्वेऽदितीज्येन्दुभे
मैत्राश्व्यन्त्यकरे चरोदयलवे भौमार्किरिक्तोज्झिते।

महादेवटीकया- निष्क्राम इति। यः प्रेङ्खाधिरूढः तस्य बहिर्निष्क्रमणं भवति त्रितुरीयमासि तृतीय चतुर्थे मासि शिशोर्निष्क्रामः सूर्यावेक्षणं शुभम्। हरिभद्वन्द्वे श्रवणद्वये अदितिः पुनर्वसुः ईज्यं पुष्यं इन्दुभे मृगशीर्षे मैत्रमनुराधा अश्वि अश्विभम् अन्त्यं रेवती करे हस्ते एषु भेषु च चरोदयलवे चरलग्ने मेषकर्कतुलामकराणामेकतमे लग्ने वा तदंशे नवांशे किंलक्षणे भौमार्किरिक्तोज्झिते मङ्गलशनिवाररिक्तातिथिवर्जिते निष्क्रमणं कार्यमित्यर्थः।

मोहनबोधिनी- नवजात को सूतिकागृह से बाहर कब निकालें, इस सम्बन्ध में ज्ञातव्य है कि बालक के जन्म के तीसरे या चौथे मास बहिर्गमन शुभ होता है। इसमें सूर्यावेक्षण शुभ होता है। इसमें श्रवण, धनिष्ठा, पुनर्वसु, पुष्य, मृगशिरा, अनुराधा, अश्विनी, रेवती और हस्त- ये नौ नक्षत्र व लग्न मेष, कर्क, तुला, मकर लें किन्तु मङ्गलवार, शनिवार व रिक्ता तिथियाँ (४, ९, १४) त्याज्य कही गई है अतः अन्य शुभ तिथियाँ लें।

गुरु का मत है कि नवजात का चौथे मास, यात्रा में वर्णित समय, तृतीय मास या बारहवें दिन बहिर्गमन किया जा सकता है- गृहान्निष्क्रमणं सूनोश्चतुर्थे मासि कारयेत्। यात्रोक्त समये मासि तृतीये द्वादशेऽहनि॥ (पीयूषधारा टीका ५, १५ पर उद्धृत)

राजमार्तण्ड में भोजराज का मत है- मासे तृतीये शशिवृद्धिपक्षे'क्षपाकरे शोभन गोचरस्थे। उत्पातपापग्रहवर्जिते भे निष्क्रामणं सौख्यकरं शिशूनाम्॥ (वही)

मुहूर्तसङ्ग्रह में विशेष तिथियाँ, शुभग्रहस्थिति बताई गई हैं। निष्कासन में शुक्लपक्ष शुभ व कृष्णपक्ष की अन्तिम पाँच तिथि रिक्ता, अष्टमी, द्वादशी, अमावस्या को छोड़कर शुभ है। उत्तराफाल्गुनी, हस्तचित्रा, स्वाती, उत्तराषाढ़, श्रवण, धनिष्ठा,

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

उत्तराभाद्रपद, रेवती, अश्विनी, अनुराधा, पुनर्वसु, पुष्य, रोहिणी व अधोमुखी नक्षत्रों में मीन व वृश्चिक लग्न को छोड़कर शुभग्रह का दिन लग्न व अंश, केन्द्र त्रिकोण में शुभग्रह ३, ६, ११ में पापग्रह के होने पर मामा के द्वारा बालका का दूसरा निष्कासन सम्पन्न कराया जाना चाहिए। बालक को तीसरे महीने में सूर्य का और चौथे मास में अग्नि व चन्द्रमा का दर्शन कराना चाहिए- पूर्वपक्षः शुभः प्रोक्तः कृष्णश्चान्त्यत्रिकं विना। रिक्ता षष्ठ्यष्टमीदर्शद्वादशीश्च विवर्जयेत्॥ चत्वार्यम्ण स्ततस्त्रीणि वैश्वात् त्रीणि च बुध्न्यभात्। बुध्न्यभादुत्तराभाद्रपदात् त्रीणि भानि च॥ मैत्रमादित्यपुष्यौ च रोहिणी च शुभावहाः। झषालिमेषा वर्ज्याः स्युस्तथैवाधोमुखानि च॥ सतां तु वारवर्गाश्च शुभदास्तूदयास्तथा। केंद्रत्रिकोणगाः सौम्याः पापाः षष्ठत्रिलाभगाः॥ उपनिष्क्रमणे शस्ता मातुलो वाहयेच्छिशुम्। तृतीये मासि कर्त्तव्यं शिशोः सूर्यस्य दर्शनम्। चतुर्थे मासि कर्त्तव्यमग्नेश्चन्द्रस्य दर्शनम्॥ (वही तथा सङ्ग्रह शिरोमणि १४, १६४-१६८)

अथ चौलमुहूर्तः

चित्रा पौष्णमृगेन्द्रभे लघुचरे रिक्तारसूर्यार्कजान्
षष्ठीपक्षति पर्वजन्मभदिनं त्यक्त्वा शुभं मुण्डनम्॥ २२॥

महादेवटीकया- चित्रापौष्णमृगेन्द्रभे लघुचरे मुण्डनं चौलं शुभम्। रिक्ता तिथिः आरो भौमः सूर्यः प्रसिद्धः अर्कजो मन्दस्तान् वारान् षष्ठीं पक्षतिं प्रतिपदं पर्व पौर्णमासीदर्शौ जन्मभदिनं जन्मनक्षत्रं जन्मदिनं च त्यक्त्वा चौलकर्म कार्यमिति॥

अथ क्षौरकर्म-

'त्वाष्ट्राश्विपौष्णमृगपुष्यकरेन्द्रभं च चौलं चरेषु च बुधेन्दुकवीज्यवारे।
कुर्यात् क्षुरादिकशुभं प्रविहाय रिक्तां पक्षांतपर्वदिनमेव निशां च सन्ध्याम्॥ १॥
मैत्रोत्तराविधिभवह्निभपितृभेष बाणा(५)ब्धि(४)नाग(८)रस(६)वह्नि(३)मितांश्च घस्रान्।
क्षौरी नरो भवति चेच्चतुराननेन तुल्यो न जीवति भृशं शरद बलाढ्यः॥ २॥
भानुर्मासं क्षपयति तथा सप्त मार्तंडसूनुर्भौमश्चाष्टौ वितरति शुभं बोधनः पञ्चमासान्।
सप्तैवेन्दो दश सुरगुरौ शुक्र एकादशेति प्राहुर्गर्गप्रभृतिमुनयःक्षौरकार्येषु नूनम्॥ ३॥'

त्वाष्ट्रं चित्रा अश्वि अश्विनी पौष्णं रेवती मृगः मृगशिरः पुष्यं करो हस्तः इन्द्रः ज्येष्ठा चरेषु स्वातीपुनर्वसुश्रवणधनिष्ठाशतभिषजः तेषु चन्द्रबुधगुरुशुक्रवारेषु क्षौरकार्यम्। किं कृत्वा मैत्रोऽनुराधा विधिभं रोहिणी वह्निभं कृत्तिका पितृभं मघा एते नेष्टाः तान्

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

त्यक्त्वा पक्षान्तं प्रतिपत् पर्व अमावस्यापौर्णमास्यौ च परं रिक्तां विहाय रविकुजमन्दान् त्यक्त्वा क्षौरं कार्यम्॥ २२॥

मोहनबोधिनी– शिशु के मुण्डन संस्कार के लिए चित्रा, रेवती, मृगशिरा, ज्येष्ठा, लघुसंज्ञक नक्षत्र (हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित्), चरसंज्ञक नक्षत्र (स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा) लेना चाहिए। चौलकर्म में भौम, सूर्यवार, शनिवार, षष्ठी, प्रतिपदा, पर्वतिथियाँ पूर्णिमा, अमावस, प्रतिपदा, जन्म का दिन, जन्म नक्षत्र व जन्म तिथि को त्याग किया जाना चाहिए, तभी मुण्डन शुभ होता है। टीका के अनुसार क्षौरकर्म में चित्रा, अश्विनी, रेवती, मृगशिरा, पुष्य और हस्त सहित स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा नक्षत्र भी ग्राह्य हैं। सोमवार, बुध, गुरु एवं शुक्रवार शुभ हैं और इनमें क्षौर करवाने से आयु बढ़ती है।

रामदैवज्ञ ने जन्म के तीसरे या विषम वर्ष में मुण्डन संस्कार का मत दिया है। मनु ने प्रथम व द्वितीय वर्षों में चूडाकरण की व्यवस्था दी है। तिथियों में ८, १२, रिक्तातिथि, ६, पर्वतिथियों में, चैत्र मास रहित उत्तरायण काल में बुध, चन्द्र, गुरु और शुक्रवारों में जन्मलग्न, जन्मराशि से अष्टम राशि को त्यागकर शेष अष्टम शुद्ध लग्न में, जिससे ३, ६, ११वें स्थान में पापग्रह हों, अनुराधा रहित और ज्येष्ठा युक्त, मृदु-चर व लघुसंज्ञक नक्षत्रों में चौलकर्म का उत्तम मुहूर्त कहा गया है–चूडावर्षात्ततीयात्प्रभवति विषमेऽष्टार्करिक्तद्यषष्ठी पर्वोनाहे विचैत्रोदगयनसमये ज्ञेन्दुशुक्रेज्यकानाम्। वारे लग्नांशयोश्चा स्वभनिधतनौ नैधने शुद्धियुक्ते शाक्रोपेतैर्विमैत्रैर्मृदुचरलघुभैरायषट्त्रिस्थपापैः॥ (५, २९)

वशिष्ठ ने तीसरे या पाँचवें वर्ष में या स्वकुल की परम्परानुसार चूडाकर्म करने का मत व्यक्त किया है– तृतीये पञ्चमेऽब्दे वा स्वकुलाचारतो हितम्। चौलं शिशूनां यत्नेन स्वगृह्योक्तविधानतः॥ आधानतो जन्मतो वा सप्तमाब्देऽपि कारयेत्। कृत्वाभ्युदयिकं कर्म पश्चात्सर्वं समाचरेत्॥ (वशिष्ठसंहिता २८, १-२)

आचार्य लल्ल का कथन है– हित्वैकं जन्मर्क्षं द्वे तारे जन्मसंज्ञित शुभदे। उद्वाहे चोपनये यात्रायामन्नभोजने क्षुरे कार्ये॥

अथान्नप्राशनमुहूर्तः

पौष्णत्वाष्ट्रलघुध्रुवादितिहरिद्वन्द्वैन्दवे ज्ञे गुरौ शुक्रे

दर्शमथाष्टमीं हरिदिनं त्यक्त्वा न नन्दां जनेः।

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

लग्नर्क्षाष्टममुज्झ्य केन्द्रनवधीरन्ध्रान्त्यसौम्येष्टषड्
वर्जेन्दौ रसमासि नुः शरमिते स्त्रीणां सदन्नाशनम्॥ २३ ॥

महादेवटीकया– पौष्णेति। एषु योगेषु अन्नाशनं बालानामन्नप्राशनं तत्तु पौष्णत्वाष्ट-लघुध्रुवादितिहरिद्वन्द्वैन्दवे रेवती चित्रा लघुभानि हस्तपुष्याश्विन्यभिजित् ध्रुवाणि रोहिण्युत्तरा अदितिः पुनर्वसुः हरिद्वन्द्वं श्रवणद्वयम् ऐन्दवं मृगः एषां समाहारः तस्मिन् ज्ञे बुधवारे गुरौ जीवे शुक्रे त्रिषु वारेषु दर्शम् अमावस्या, अष्टमी हरिदिनं द्वादशीं नन्दा प्रतिपत्षष्ठ्येकादशीः त्वक्त्वा जनेः जन्मभदिनं जन्मकालस्य लग्नं ऋक्षं राशिस्ताभ्यामष्टमलग्नं उज्झ्य आसमन्तात् उज्झ्य केन्द्रनवधीरन्ध्रान्त्यसौम्ये सति प्रथमतुर्यसप्तमदशमनवमपञ्चमाष्टमद्वादशभवनेषु सौम्यग्रहयोगे अष्टमषष्ठरहिते विधौ षष्ठेऽष्टमे मासि नुः पुरुषस्य स्त्रीणां कन्यानां शरमिते पञ्चमे मासि प्रथमान्नप्राशनं सदिति॥ २३ ॥

मोहनबोधिनी– अन्नप्राशन संस्कार के लिए रेवती, चित्रा, लघु (हस्त, पुष्य, अश्विनी, अभिजित्), ध्रुव (रोहिणी, उत्तरादि), पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, मृगशिरा नक्षत्र शुभ हैं। सोमवार, बुध, गुरु एवं शुक्रवार; अमावस्या, अष्टमी, द्वादशी, नन्दा (१, ६, ११) तिथि को छोड़कर और जन्मदिन व जन्मसमय, जन्मलग्न, जन्मनक्षत्र, जन्मराशि आदि को त्यागकर ही अन्नप्राशन संस्कार करवाना चाहिए। इसी प्रकार लग्न में केन्द्र, चतुर्थ, सप्तम, दशम, नवम, पञ्चम, अष्टम, द्वादश भवन में सौम्य ग्रहों को देखें, षडष्टम नहीं हों। इस प्रकार छठे या आठवें भाव में चन्द्रमा नहीं हो, ऐसे में बालक का छठे व आठवें तथा पाँचवें माह में कन्या का अन्नप्राशन करवाना हितकारी है।

वृहस्पति का मत है कि छठे मास में पुरुषों को एवं स्त्रियों को पाँचवें या आधान से आठवें मास में प्रथम अन्नाहार करवाना चाहिए– पुंसोन्नप्राशनं कुर्यान्मासे षष्ठे सदा बुधैः। स्त्रीणां तु पञ्चमे मासि आधानादष्टकेपि च॥ (बृहद्दैवज्ञरञ्जनम् ६३, ६)

महर्षि नारद का मत है कि पुरुष को छठे या आठवें मास तथा कन्या हो तो पाँचवें या सातवें मास में अन्नप्राशन करवाना चाहिए– षष्ठे मासस्ये वापि पुंसां स्त्रीणा तु पञ्चमे। सप्तमे मासि वा कार्यं नवान्नप्राशनं शुभम्॥ रिक्तादिनत्रयं नन्दा द्वादशीमष्टमीममाम्। त्यक्त्वाऽन्यतिथयः श्रेष्ठाः प्राशने शुभवासरे॥ (ज्योतिर्निबन्ध पृष्ठ ११६, १-२)

राजमार्तण्डकार का कथन है कि हस्त, पुष्य, पुनर्वसु, रोहिणी, चित्रा, मृगशिरा, अनुराधा, अश्विनी, स्वाती, उत्तरा, धनिष्ठा, मघा, रेवती नक्षत्र में, रिक्ता तिथियों को छोड़कर बुध, शुक्र, चन्द्र, सूर्य, गुरुवार में, कन्या, मिथुन, वृष, मीन लग्न में बालक को

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

सर्वप्रथम अन्न दिया जाना शुभ होता है- हस्तः पुष्यपुनर्वसूकमलजत्वाष्ट्रेंदुमित्राश्विनी वायव्योत्तरवासवानिलमघापौष्णेष्वरिक्ते तिथौ। वारेष्विन्दुजभार्गवेन्दुदिनकृद्वाचस्पतीनां शिशोरन्नप्राशनमङ्गनामिथुनगोमीनोदये शोभनम्॥ (राजमार्तण्ड २३८)

दैवज्ञरामदीन ने यह श्लोक भी दिया है- वाचालो बलवान्दिने दिनकरे अत्यन्त दीप्तानलो देहे हीनहुताशनः शशिरुचौ भौमे रुजापीडितः। बोधे भोगसुखी प्रियः प्रथमभुक् जीवे चिरायु सुखी शुक्रे कान्तिबलाधिकेतिमलिनो मन्दे च मन्दानलः॥ (बृहद्दैवज्ञरञ्जनम् ६३, 15)

स्पष्टार्थचक्र-

क्रम	वार	फल
१.	रवि.	वाचाल, बली व प्रबल जठराग्नि
२.	चन्द्र.	मन्दाग्नि
३.	मङ्गल.	रोग से पीड़ित
४.	बुध.	भोग से सुखी, सुन्दर
५.	गुरु.	दीर्घायु, सुखी
६.	शुक्र.	अधिक बली, कान्तिमान
७.	शनि.	अति मलीन, मन्दाग्नि

शिवराज ने ज्योतिर्निबन्ध में वृद्धनारद के मत से कहा है- बुधशुक्रगुरूणां तु वा बालान्न भोजने। चन्द्रवारं प्रशंसन्ति कृष्णे चान्त्यत्रिकं विना॥ मिष्ठान्नभुग्जीवनिशाकराभ्यां शुक्रेण वाग्मी रविणा दरिद्री। कुजेन रोगी शशिजेन भोगी क्षीणायुरादित्यसुतेऽह्नि कुर्यात्॥ अर्काङ्गारकमन्दानां वाराश्चापि शुभप्रदाः। यदा वाराधिपस्तिष्ठेत्स्वोच्चमित्रगृहे तदा॥ गुरुणा बलिना वाऽपि वीक्षितश्च बलान्वितः। जीवसौम्यसितानां तु द्रेष्काणंदिवसांशकाः॥ बालान्नप्राशने शस्ता न चन्द्रार्कार्किजासृजाम्॥ (ज्योतिर्निबन्ध पृष्ठ ११६, ८-१२)

ज्योतिषरत्नमाला (४, २२) का मत है कि रेवती, श्रवण, पुनर्वसु, हस्त, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा और उत्तरात्रय में ऋषियों ने सर्वप्रथम और नवीन अन्नभक्षण करवाने का निर्देश किया है- रेवती श्रुतिपुनर्वसुहस्तब्राह्मतो पृथगपि द्वितये च। त्र्युत्तरेषु गदितं नवान्नप्राशनं तु ऋषिभिः पृथुकानाम्॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

कर्णवेध–भूषणधारणमुहूर्तः

मैत्रेज्यर्क्षमृगेऽन्त्यभश्रुतिकरद्वन्द्वे पृथक् सद्ग्रहै–
स्त्र्यायेऽङ्गे गुरुसंयुते खलखगैर्हीनेऽथ सौम्येऽयने।
ओजेऽब्दे मधुपौषजन्मभदिनं मासं च हित्वा श्रवोवेधः
सन्नथ दस्रपूषवसुभे भूषा करात्पञ्चके॥ २४॥

महादेवटीकया– मैत्रेति। अस्मिन्योगे श्रवोवेधः सन् कर्णवेधः शुभः। क्व मैत्रेज्यर्क्षमृगे अनुराधापुष्यमृगशीर्षे अन्त्यभश्रुतिकरद्वन्द्वे पृथगिति रेवत्याः द्वयं श्रुतिद्वयं करद्वयं सद्ग्रहैः त्र्याये तृतीयैकादशे सद्भिः अङ्गे लग्ने गुरुसंयुते खलखगैः पापग्रहैः हीने लग्ने सौम्येऽयने सौम्यायन ओजेऽब्दे विषमवर्षे मधुश्चैत्रः पौषः जन्मभदिनं मासं च एतानि त्यक्त्वा कर्णवेधः शुभः।

अथ कर्णवेधे भूषा धार्या तत्राह– दस्रमश्विनी पूषभं रेवती वसुभं धनिष्ठा तत्र कराद्धस्तात्पञ्चके हस्तचित्रास्वातीविशाखानुराधासु भूषा कर्णवेधभूषा वलयादि लोकप्रसिद्धं चूडा इत्यादि धार्यम्। तत्र चक्रं वर्तते॥ २४॥

मोहनबोधिनी– शिशुओं के कर्णवेध संस्कार के लिए निम्न मुहूर्त है– अनुराधा, पुष्य, मृगशिरा, रेवती श्रवण, धनिष्ठा, हस्त और चित्रा– ये आठ नक्षत्र उचित हैं। सदग्रहों को देखा जाना चाहिए। तीसरे व एकादश भाव में शुभग्रह, लग्न में गुरु से संयुत पाप ग्रह न हों, सौम्यायन या सूर्य का उत्तरायण काल हों, जन्म से विषम वर्ष देखें जबकि चैत्र, पौष, जन्मनक्षत्र व जन्मदिन व जन्ममास को छोड़कर कर्णवेध करना चाहिए। कर्णवेध के उपरान्त आभूषण धारण करने के लिए अश्विनी, रेवती, धनिष्ठा, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा और अनुराधा– इन आठ नक्षत्रों को लेना चाहिए।

राजमार्तण्ड में कहा गया है कि अनुराधा, हस्त, पुनर्वसु में विष्णु के जागरण पर तथा गुरु के उदय में स्वाती, रेवती, अश्विनी, ज्येष्ठा में सूर्य, बुध अथवा शुभ वार शुक्र या गुरु अथवा सोमवार में, शुक्लपक्ष में, शुक्रास्त न होने पर रिक्ता तिथियों को छोड़कर, केन्द्र में गुरु, शुक्र की स्थिति होने पर तथा तृतीय, षष्ठम भाव में पापग्रह होने पर कर्णच्छेदन किया जाना चाहिए– मैत्रे हस्ते सवित्रे हरिगुरुसहिते स्वातीपौष्ण्याश्विनीषु शक्रादित्ये च सौम्ये शशिकरणसुते भार्गवेन्दौ गुरौ वा। पक्षे शुक्ले च नास्तङ्गतवति भृगुजे नैव रिक्ते तिथौ च केन्द्र जीवे भृगौ वा सहजरिपुगतैः पापकैः कर्णवेधः॥ (श्लोक २९१ एवं बृहद्दैवज्ञरञ्जनम् ५६, २३)

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

श्रीपति का ज्योतिषरत्नमाला में कथन है कि रेवती, श्रवण, हस्त, अश्विनी, चित्रा, पुष्य, धनिष्ठा, पुनर्वसु, अनुराधा और मृगशिरा इन दस नक्षत्रों में बालकों का कर्णवेध करवाया जाना चाहिए– पौष्णवैष्णवकराश्विनिचित्रापुष्यवासवपुनर्वसुमैत्रैः। सैन्दवैः श्रवणवेधविधानं निर्दिशन्ति मुनयो हि शिशूनाम्॥ (वही ४, २२)

इसी प्रकार आभूषण धारण करने के लिए भी कहा है कि हस्तादि पाँच नक्षत्रों, अश्विनी, रेवती एवं धनिष्ठा इन आठ नक्षत्रों में शङ्ख, स्वर्ण, प्रवालाभरण सहित रक्त वस्त्र धारण करने से सौभाग्य की प्राप्ति होती है– करादिपञ्चकेऽश्विते सपौष्ण वासवे स्मृता। धृतिस्तु शङ्ख काञ्चनं प्रवालरक्त वाससाम्॥ (तत्रैव ४, १९)

चूडामणिकार का कथन है कि ज्येष्ठा, पुनर्वसु, स्वाती, हस्त, शतभिषा, पुष्य, श्रवण, अश्विनी, चित्रा, श्रवण, कृत्तिका, रेवती, मृगशीर्ष नक्षत्र में बुध या गुरु अथवा शुक्रवार में, ३, ६, ११ में पापग्रह के रहने पर, केन्द्र व त्रिकोण में शुभग्रहों की स्थिति होने पर विषमवर्ष में नवजात का कर्णवेध संस्कार किया जाना चाहिए– ज्येष्ठादित्य समीरणार्कशतभे पुष्यश्रविष्टाश्विनी चित्रावैष्णववायुपोष्णमृगभे वारे बुधादित्रये। भ्रात्रायारिगते खले च शुभदे केन्द्रत्रिकोणस्थिते वर्षे चायुजि कर्णवेधनविधिः पक्षे सिते शोभनः॥ (बृहद्दैवज्ञरञ्जनम् ५६, २५)

अथ चूडाचक्रम्–

त्री$_{३}$षु$_{५}$त्र्य$_{३}$क्षि$_{२}$नगा$_{७}$क्षि$_{२}$चन्द्र$_{१}$ गुण$_{३}$भू$_{१}$ धिष्ण्यानि
सूर्यर्क्षतः सूर्यासृग्भृगुराहुविच्छनिगुरुग्लौकेतुदैवानि च।
सौम्येर्क्षाणि शुभानि पाणिवलये कर्णत्रयेऽश्व्यानिले पित्र्ये
भाग्यमृगेशभे द्विदयिते सौम्येष्विने कामठम्॥ २५॥

महादेवटीकया– त्रीष्विति। पाणिवलये शङ्खभूषणे सूर्यर्क्षतः सूर्यभात् त्रिपञ्चत्रिद्विसप्तद्व्येकत्र्येकधिष्ण्यानि सूर्यासृग्भृगुराहुविच्छनिगुरुलौकेतुदैवानि भवन्ति। प्रथमं सूर्यस्य त्रीणि असृजो भौमस्य पञ्च भृगोस्त्रीणि राहोरक्षिणी द्वे विदो बुधस्य नगाः सप्त शनेरक्षिणी द्वे गुरोरेकं ग्लावश्चन्द्रस्य त्रीणि केतोः भूरेकं एतानि धिष्ण्यानि वर्तन्ते तन्मध्ये सौम्यर्क्षाणि चन्द्रबुधजीवशुक्रभानि भवन्ति। च परं कर्णत्रये श्रवणत्रये अश्व्याये अश्विन्यां अनिले स्वातौ पित्र्ये मघायां भाग्ये पूर्वाफाल्गुन्यां मृगे ईशभे आर्द्रायां द्विदयिते विशाखायां सौम्येषु सौम्यवारेषु बुधगुरुशुक्रेषु इने रविवारे कामठं कमठपृष्ठवलयानि धार्याणि॥ २५॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

मोहनबोधिनी– चूडाचक्र जानने के लिए सूर्य नक्षत्र से नौ ही ग्रहों का चक्र बनाकर उनके कोष्ठक में क्रमशः तीन, पाँच, तीन, दो, सात, दो, एक, तीन एवं एक नक्षत्र की स्थापना अधो लिखे अनुसार करें और इनके फलाफल का ज्ञान करें। उक्त संख्याओं के अनुसार स्वामियों का लेखन इस क्रम से होगा– सूर्य, भौम, शुक्र, राहु, वित्, शनि, गुरु, चन्द्रमा और केतु। चूड़ाधारण करने के लिए शुभ ग्रहों को ग्रहण करना चाहिए। इसके अतिरिक्त श्रवण, धनिष्ठा, अश्विनी, कृत्तिका, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, मृगशिरा, आर्द्रा और विशाखा– इन नौ नक्षत्रों के साथ-साथ सौम्यवारों में चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र और रविवार के मुहूर्त में कामठ या कमठपृष्ठाभरण, खेटक आदि को धारण करना शुभ होता है।

सूर्यनक्षत्रात्चूडाचक्रम्–

ग्रह	सू.	मं.	शु.	रा.	बु.	श	बृ.	चं.	के
नक्षत्र	३	५	३	२	७	२	१	३	१
फल	अशुभ	अशु.	शुभ	अशुभ	शुभ	अशुभ	शुभ	शुभ	अशुभ

यही चक्र मुहूर्तमुक्तावली में आया है– त्रीणिपञ्च तथा त्रीणि एकं त्रीणि तथैककम्। द्वौसप्त तथा द्वयकं करचक्रं विधीयते॥ रवौ च वैधव्य कुजे च वन्ध्या जयं भृगो विधायते। बुधे च सौख्यं कलहं शनौ च जीवे च लक्ष्मी सौमे सुखदः॥ (श्लोक ४७-४८)

रामदैवज्ञ का मत है कि रेवती, तीनों उत्तरा, रोहिणी, अश्विनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, धनिष्ठा, पुष्य एवं पुनर्वसु नक्षत्रों में और रिक्ता तिथि को छोड़कर अन्य तिथियों में, सोमवार, मङ्गल, शनिवार को छोड़ अन्य दिनों में मूङ्गा, हाथीदाँत, शङ्ख, स्वर्ण के आभूषण और वस्त्रादि धारण करना उचित है। मङ्गल को रक्तिमवस्त्र धारण किए जा सकते हैं, तीनों उत्तरा, पुनर्वसु और पुष्य इन नक्षत्रों में सधवा स्त्री मूङ्गादि को धारण नहीं करें– पौष्णध्रुवाश्विकरपञ्चकवासवेज्यादित्ये प्रवालरदशङ्ख-सुवर्णवस्त्रम्। धार्यं विरिक्तशनिचन्द्रकुजेऽह्नि रक्तं भौमे ध्रुवादितियुगे सुभगा न दध्यात्। (मुहूर्तचिन्तामणि २, १०)

बृहज्योतिसारसंग्रह में चूडाचक्र ज्ञान के लिए किञ्चित भेद मिलता है। जिस नक्षत्र के सूर्य हों, वहाँ से दिन के नक्षत्र तक गिने। प्रथम तीन नक्षत्र सूर्य के हैं जो अशुभ हैं। फिर पाँच मङ्गल के है और वे भी अशुभ हैं। फिर तीन नक्षत्र शुक्र के हैं जो शुभकारक हैं। आगे चार नक्षत्र बुध के हैं जो शुभ हैं। इसके बाद सात नक्षत्र राहु के हैं जो अशुभ हैं। इसके उपरान्त दो नक्षत्र शनिवार के हैं जो भी अशुभ हैं। तदनन्तर एक

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

नक्षत्र बृहस्पति का है जो शुभ, फिर दो नक्षत्र चन्द्रमा के हैं जो शुभ है किन्तु इसके बाद केतु का एक नक्षत्र है जो अशुभ कहा गया है- यावद्भास्करभुक्तिभानि दिवसे धिष्णानि सङ्ख्या ततः वह्निभूतगुणाब्धिसप्तनयनं पृथ्वीकरेन्दु क्रमात्। सूर्यारौ कविसौम्यराहुरविजा जीवः शशी केतवः क्रूरेऽसच्च शुभे शुभं च कथितं चक्रे च चूडाह्वये॥ (पृष्ठ ५१, ५२)

मौञ्जीकर्ममुहूर्त:

हस्तादित्रितयेऽन्त्यहर्यदितिभे द्वन्द्वं पृथक् चन्द्रभे
शुक्रेज्येन्दुबले खलेन्द्वितनुं षष्ठेन्दुमन्त्यारिगम्।
शुक्रं रन्ध्रखगान्विहाय धवले पक्षे द्वितीयाद्वये
पञ्चम्यां दशमीत्रये शुभलवे मौञ्जी तपः पञ्चके॥ २६॥

महादेवटीकया- हस्तादीति। एषु योगेषु मौञ्जी ब्राह्मणानां मेखलाबन्धः श्रेष्ठः क्व हस्तादित्रितये अन्त्यहर्यदितिद्वन्द्वे पृथक् पुनर्वसुपुष्ये रेवत्यश्विन्योः श्रवणधनिष्ठे तत्रे चन्द्रभे मृगशीर्षे शुक्रेज्येन्दुबले गुरुशुक्रचन्द्राणां गोचरबले तपःपञ्चके माघादिपञ्चमासेषु पुनः क्व धवले पक्षे शुक्लपक्षे द्वितीयाद्वये द्वितीयातृतीययोः पञ्चम्यां दशमीत्रये दशम्येकादशीद्वादशीषु शुभलवे सौम्यलवे किं कृत्वा षष्ठेन्दुम् खलेन्द्वितनुं खलैः रविभौमशनिराहुभिरिन्दुना च इतां प्राप्तां तनुं लग्नं विहाय अन्त्यारिगं द्वादशरिपुभावे शुक्रं विहाय रन्ध्रखगान् अष्टमभावे सर्वखगान् विहाय मौञ्जी यज्ञोपवीतकर्म कार्यम्॥ २६॥

मोहनबोधिनी- अब मौञ्जीबन्ध का मुहूर्त दिया जा रहा है- हस्त, चित्रा, स्वाती, रेवती, पुनर्वसु, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा, मृगशिरा- इन नौ नक्षत्रों में; गोचन में चन्द्र, गुरु एवं शुक्र की बलिष्ठता हो; माघ से पाँच मास तक; २, ३, ५, १०, ११, १२ तिथियों में एवं शुक्लपक्ष में मौञ्जीकर्म या उपनयन संस्कार किया जाना शुभ होता है। यह भी स्मरणीय है कि अपराह्णकाल, लग्न से ६, ८वें स्थान में शुक्र, चद्र और लग्नेश तथा १२वें में चन्द्रमा, शुक्र तथा १, ८, ५वें स्थान में पापग्रह हों तो मौञ्जी, यज्ञोपवीत कर्म त्याज्य होता है।

यही मत रामदैवज्ञ का है- क्षिप्रध्रुवाहिचरमूलमृदुत्रिपूर्वारौद्रेऽर्कविद्गुरुसितेन्दुदिने व्रतं सत्। द्वित्रीषुरुद्ररविदिक्प्रमिते तिथौ च कृष्णादिमत्रिलवेऽपि न चापराह्णे॥ कवीज्य चन्द्रलग्नपा रिपौ मृतौ व्रतेऽधमाः। व्ययेऽब्जभार्गवौ तथा तनौ मृतौ सुते खलाः॥ (मुहूर्तचिन्तामणि ५, ३०-३१)

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

लल्लाचार्य का मत है कि जन्म या गर्भ से आठवें वर्ष में वसन्तऋतु में मेखलाबन्धन से बालक मेधावी होता है– वसन्तसमये दद्यादष्टे गर्भाष्टमेपि वा। मेधावी मेखलाबन्धो जन्ममासेष्व जन्मभे॥ (बृहद्दैवज्ञरञ्जनम् ६७, १८)

इसी प्रकार भोजराज ने राजमार्तण्ड में कहा है कि शुक्लपक्ष में चन्द्रमा, सूर्य, गुरु के शुद्ध रहने पर सूर्य, शुक्र, गुरुवार, उत्तरायण, हस्त, चित्रा, अश्विनी, ज्येष्ठा, पुनर्वसु, धनिष्ठा, शतभिषा, श्रवण, पुष्य, मृगशिरा, रेवती व स्वाती नक्षत्र में वेध न हो तो भार्गवादि श्रेष्ठ ऋषियों ने यज्ञोपवीत किया जाना शुभ माना है– शुक्ले पक्षे शशिदिनकरे देवपूज्ये च सम्यक् वारे भानोः सितस्य त्रिदशपतिगुरोश्चोत्तरे तिग्मभानौ। हस्तश्चित्राश्विशक्रादितिवसुवरुणोपेन्द्रपुष्येन्दुपौष्णे स्वातीष्वव्याहतासु स्मृतमुपनयनं भार्गवाद्यैर्मुनीन्द्रैः॥ (श्लोक ३१७, बृहद्दैवज्ञरञ्जनम् ६७, ८४)

मुहूर्ततत्त्व की टीका में स्पष्ट किया गया है कि उत्तरायण एवं चैत्रमास में व्रतबन्ध किया जाना चाहिए, मीन के सूर्य में विवाह एवं मेष के सूर्य में मौञ्जीबन्ध नहीं करना चाहिए। मीन के सूर्य व नीच या शत्रु राशिस्थ गुरु होने पर विन्ध्यपर्वत के उत्तर में रहने वालों को व्रतबन्धादि नहीं करना चाहिए एवं जब बालक की माता पाँच मास से अधिक गर्भवती हो, तो भी इसका निषेध समझना चाहिए– सौम्यायने व्रतं कार्यं चैत्रे मासि विशेषतः। विवाहं नैव मीनस्थे मेषेर्के च व्रतं नहि॥ मीनस्थे पद्मिनीमित्रं नीचेरिस्थे च वाक्पतौ। व्रतादिषु निषेधः स्याद्विन्ध्यस्योत्तरवासिनाम्॥ गर्भिणी यस्य वै माता मासादूर्ध्वं तु पञ्चमात्। तस्योपनयनं नैव प्रागेवादि हि कारयेत्॥ (बृहद्दैवज्ञरञ्जनम् ६७, १४९–१५१)

विद्यारम्भमुहूर्तः

मूलेऽश्वे मृगपञ्चके त्रिषु शरात्कर्णे त्रिपूर्वासु
विच्छुक्रेज्यार्कदिने पुरादिनयुतानध्यायरिक्तोज्झिते।
अब्दे पञ्चमके शिरोरतिशुभो विद्योद्यमोऽथैन्दवे
हौताशे तिसृषूत्तरासु च धनुर्विद्या न विद्या भवेत्॥ २७॥

महादेवटीकया– मूल इति। एषु योगेषु शिशोर्बालस्य विद्योद्यमो विद्यारम्भः शुभः। एषु केषु मूलेश्वे अश्विन्यां मृगपञ्चके मृगार्द्रापुनर्वसुपुष्याश्लेषासु कराद्धस्तात्त्रये हस्तचित्रास्वातिषु कर्णे श्रवणे त्रिपूर्वासु तिसृषु पूर्वासु च एषु भेषु विच्छुक्रेज्यार्कदिनेषु बुधशुक्रगुरुरविवारेषु पञ्चमकेऽब्दे किं लक्षणे पुरादिनयुताः पूर्वतिथियुता ये अनध्याया रिक्ताश्च तद्रहिते अष्टमीनवमीत्रयोदशीचतुर्दश्यमापूर्णिमाप्रतिपच्चतुर्थ्यो निषिद्धाः।

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

'त्रयोदशींचतुष्कं च सप्तम्यादिदिनत्रयम्।
चतुर्थी च तथा त्याज्या अष्टावेते गलग्रहाः॥'

अथ ऐन्दवे मृगे हौताशे कृत्तिकायां तिसृषु उत्तरासु धनुर्विद्या न श्रेष्ठा भवेत्॥ २७॥

मोहनबोधिनी– अब विद्यारम्भ मुहूर्त कहा जा रहा है– मूल, अश्विनी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, हस्त, चित्रा, स्वाती, श्रवण, तीनों पूर्वा नक्षत्रों में; बुधवार, शुक्र, रविवार के दिन जबकि बालक की आयु पाँच वर्ष पूरी हो गई हो विद्यारम्भ करवाया जाना चाहिए। शुक्लपक्ष की दशमी, ज्येष्ठ शुक्ला पञ्चमी, पौष शुक्ला त्रयोदशी और माघ शुक्ला द्वादशी और प्रतिपदा, चतुर्थी, अष्टमी, पूर्णिमा, अमावस्या, सूर्य सङ्क्रमण काल, रिक्ता तिथियाँ (४, ९, १४) विद्यारम्भ में वर्जित कही गई हैं। मृगशिरा, कृत्तिका व तीनों उत्तरा नक्षत्रों में धनुर्विद्या की शिक्षा श्रेष्ठ नहीं होती है। यहाँ गलग्रह त्याज्य जानना चाहिए। त्रयोदशी से चार तिथि अर्थात् १३, १४, १५ और प्रतिपदा, कृष्णपक्ष में ३०, सप्तमी से तीन तिथियाँ अर्थात् ७, ८, ९ व ४ ये आठ तिथियाँ गलग्रह संज्ञक कही गई हैं।

ज्योतिर्निबन्ध में कहा गया है बालक का पाँचवें वर्ष में देवशयनी एकादशी के काल को छोड़कर षष्ठ, प्रतिपदा, अष्टमी, रिक्ता, पूर्णिमा तिथि व शनिवार, मङ्गलवार को छोड़कर श्रेष्ठ निर्णीत काल में विद्यारम्भ कराना चाहिए– प्राप्ते तु पञ्चमे वर्षे अप्रसुप्त जनार्दने। षष्ठीं प्रतिपदं चैव वर्जयित्वा तथाष्टमीम्॥ रिक्तां पञ्चदशीं चैव सौरिभौमदिनं तथा। एवं सुनिश्चिते काले विद्यारम्भं तु कारयेत्॥ (पृष्ठ १२०)

श्रीपतिभट्टाचार्य का मत है कि गुरुवार, शुक्र वार और बुध को विद्यारम्भ किए जाने से उत्तम विद्या की शीघ्र प्राप्ति होती है और अभ्यासी चिरञ्जीवी होता है। रविवार मध्यम है, सोमवार को बुद्धि जड़ होती है, मङ्गलवार और शनिवार को विद्यारम्भ किए जाने से मृत्यु होती है, ऐसा गर्गादि मुनियों ने पूर्वकाल में प्रतिपादित किया है– विद्यारम्भः सुरगुरुसितज्ञेष्वभीष्टार्थदायी कर्तुयायुश्चिरमपि करोत्यंशुमान्मध्यमोऽत्र। नीहारांशौ भवति जडता पञ्चता भूमिपुत्रे छायासूनावपि च मुनयः कीर्तयन्त्येवमाद्याः॥ (ज्योतिषरत्नमाला ३, १९)

महेश्वर का स्पष्टीकरण है– वेदानामधिपाः सुरेज्यसितभूपुत्रेन्दु पुत्राः क्रमात् केन्द्रस्थेधिपतौबलेन सहिते चारेदीये व्रती। विद्यावानविभांशकेऽनिगदित क्रूरोजडः शीतगोपाप्यारस्य पटुर्विदीज्यसितयोर्यद्वा च मूर्खः शनौ॥ (ज्योतिषवृतशतम् २६)

नारायणदैवज्ञ ने कहा कि मौञ्जीबन्धन के उपरान्त, उपनयनोक्त काल में स्थिर,

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

चर लग्न को और तीनों उत्तरा, रोहिणी इन नक्षत्रों को त्यागर शेष लग्न और नक्षत्रों में विधिपूर्वक गणेश व सरस्वती की पूजा कर विद्यारम्भ करना चाहिए- विद्यां मौञ्ज्युक्तकाले स्थिरचरहरिजत्र्युत्तरब्राह्महीने मौञ्ज्या ऊर्ध्वं गणेशं गिरमपि विधिवत्पूजयित्वारमेत्॥ (मुहर्तमार्तण्ड ३, १८)

वस्त्रधारणमुहूर्तः

पौष्णेश्वे करपञ्चके च वसुभे चैलं बुधादित्रये
पुंसां पुष्यपुनर्वसुस्थिरयुते स्याच्छोभनं सत्तिथौ।
तच्चक्रे नवधा सुरासुरनराः कोणेषु मध्ये दशापाशे
स्युः शुभनेष्टशोभनफलं पङ्काञ्जनाङ्कादिकम्॥ २८॥

महादेवटीकया- पौष्ण इति। एषु योगेषु चैलं वस्त्रधारणं शोभनम्। पौष्णे रेवत्याम् अश्वे अश्विन्यां करपञ्चके हस्तादिपञ्चके हस्तचित्रास्वातीविशाखानुराधाः च परं वसुभे धनिष्ठायां बुधादित्रये बुधगुरुभृगुवारे रिक्तावर्जिततिथौ पुंसां पुरुषाणां पुष्यपुनर्वसुसुस्थिरयुते रोहिण्युत्तरात्रये वस्त्रधारण सत्। तच्चक्रे तद्वस्त्रस्य चक्रे नवधा नवभिर्भागे कृते कोणेषु चतुष्कोणेषु मध्यत्रिकोष्ठेषु दशापाशे कोष्ठद्वये सुरासुरनराः वसन्ति, चतुष्कोणे सुरा वसन्ति, मध्यकोष्ठत्रये असुरा वसन्ति, दशापाशे प्रान्ते शेषविभागे कोष्ठे नराः वसन्ति, तत्र पङ्काञ्जनाङ्कादिकं पङ्कस्य वाञ्जनस्य प्रथमं धारणात् अङ्कादिकं चिह्नादिकं भवति। आदिशब्देन दग्धे फाटिते शुभनेष्टशोभनफलं ज्ञेयं देवांशे शुभं रक्षोंऽशे नेष्टं मनुष्यांशे शोभनफलम्। अत्र स्त्रीणां वस्त्रसाहचर्यात् भूषणाद्यपि धारयेत्। तथा चोक्तम्-

'करादिपञ्चकेऽश्विभे सपौष्णवासवे स्मृता।
धृतिश्च शङ्खकाञ्चनप्रवालरक्तवाससाम्॥'

सज्जनवल्लभे (? दैवज्ञवल्लभे)-

'नासत्यपौष्णवसुभे करपञ्चकेषु मार्तण्डभौमगुरुदानवमत्रिवारैः।
मुक्तासुवर्णमणिविद्रुमशङ्खदन्तरक्ताम्बराणि विधृतानि भन्ति सिद्ध्यै॥'॥ २८॥

मोहनबोधिनी- नूतन वस्त्र धारण करने का मुहूर्त दिया जा रहा है। रेवती, अश्विनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा और धनिष्ठा नक्षत्रों को लें एवं बुधवार, गुरुवार व शुक्रवार शुभ है किन्तु रिक्तातिथि (४, ९, १४) को छोड़ दें। पुरुषों

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

के लिए पुष्य, पुनर्वसु, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद व रोहिणी नक्षत्र ग्राह्य है। नक्षत्र, सुस्थिरयोग, शुभ तिथि एवं रोहिणी व उत्तरात्रय वस्त्र धारण की दृष्टि से उचित है (महिलाओं को ध्रुवसंज्ञक पुनर्वसु और पुष्य नक्षत्र में नूतन परिधान धारण नहीं करने चाहिए)। धारण किया जाने वाले नूतन परिधान का कोई अङ्ग संयोगवश आग से जला हुआ, कीचड़ आदि से सना हुआ तो नहीं है, इसका फल जानने के लिए उक्त वस्त्र के नौ विभाग करें तथा चारों कोनों में देवताओं की स्थापना करें। मध्य के तीन भागों में राक्षस व पास के दो विभागों में नरों की स्थापना करें। राक्षसांश में दग्ध, कीचड़ से लिप्त वस्त्र शुभ फल नहीं देता। देवता एवं नरांश में दग्ध, पङ्क से लिप्त वस्त्र से भविष्य की शुभ सूचना जानें।

स्पष्टार्थचक्रम्-

देवता	नर	देवता
राक्षस	राक्षस	राक्षस
देवता	नर	देवता

गर्गमुनि, आचार्य वराहमिहिर, श्रीपति, शिवराज आदि ने इस सम्बन्ध में पर्याप्त मत व्यक्त किए हैं। श्रीपति के मतानुसार अश्विनी नक्षत्र में वस्त्र धारण करने से अधिक वस्त्र मिलते हैं। भरणी में वस्त्रधारण से वस्त्रों की हानि, कृत्तिका में अग्नि से वस्त्रदाह, रोहिणी में धनागम, मृगशिरा में वस्त्रों का चूहे द्वारा नाश, आर्द्रा में मृत्यु, पुनर्वसु में शुभफल, पुष्य में धनलाभ, आश्लेषा में वस्त्रनाश, मघा मे मृत्यु, पूर्वा फाल्गुनी में शासन से भय, उत्तरा फाल्गुनी में धनलाभ, हस्त में कार्य सिद्धि, चित्रा में शुभफल, स्वाती में उत्तम भोजन का लाभ, विशाखा में लोकप्रियता प्राप्त होती है। इसी प्रकार अनुराधा में वस्त्रधारण करने से मित्रलब्धि, ज्येष्ठा में वस्त्र का क्षय, मूल में जल में डूबने की आशंका, पूर्वाषाढ़ा में रोग, उत्तराषाढ़ा में मिष्ठान्न लाभ, श्रवण में नेत्र पीड़ा, धनिष्ठा में अन्नप्राप्ति, शतभिषा में विष का भय, पूर्वाभाद्रपद में जल का भय, उत्तराभाद्रपद में पुत्र का लाभ और रेवती नक्षत्र में नवाम्बर धारण किए जाने पर रत्नों की प्राप्ति होती है- वस्त्रप्राप्तिस्तदपहरणंवडितदाहोर्थ सिद्धिराषोर्भातिमृतिरथधनं प्राप्तिंरर्थागमश्च। मोक्षोमृत्यु र्नरयति भयं सम्पदः कर्मसिद्धि रिष्टाऽवाप्तिस्याः सदशनमथो वल्लभत्वं जनानां॥ मित्रा-मिरम्बरद्भतिः सलिलष्णुतिश्च रोगोप्यमष्टामशनं नयनामयं च धान्यं त्विषोद्भव। भयं जलभीर्धन रत्नाप्तिरम्बरलिलष्णुतिश्चरो गोथमृष्टमशनं न धृतेः फलमश्चिभाच्च॥ (ज्योतिष रत्नमाला १९, १-२)

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

वराहमिहिर का कथन है- लिप्ते मषीगोमयकर्दमाद्यैश्छिन्ने प्रदग्धे स्फुटिते च विन्द्यात्। पुष्टं नवेऽल्पाल्पतरं च भुक्ते पापं शुभं चाधिकमुत्तरीये॥ छत्रध्वजस्वस्तिक वर्धमानश्रीवृक्षकुम्भाम्बुजतौरणाद्यैः। छेदाकृतिर्नैर्ऋतभागगापि पुंसां भयं मृत्युसमं करोति॥ कङ्कप्लवोलूककपोतकाकक्रव्यादगोमायुखरोष्ट्रसर्पैः। छेदाकृतिर्दैवतभागगापि पुंसां भयं मृत्युसमं करोति॥ विप्रमतादथ भूपतिदत्तं यच्च विवाहविधावभिलब्धम्। तेषु गुणै रहितेष्वपि भोक्तुं नूतनमम्बरमिष्टफलं स्यात्॥ (बृहत्संहिता ७१-१०,१३,१२,१४)

इसी प्रकार वर्णभेदानुसार वस्त्रधारण के लिए गोविन्द दैवज्ञ ने पीयूषधारा टीका में दैवज्ञवल्लभ (महादेवभट्ट ने इसे सज्जनवल्लभ की उक्ति बताई है) की उक्ति है- नासत्यपौष्णवसुभैः करपञ्चकेन मार्तण्डभौमगुरुदानवमन्त्रिवारैः। मुक्तासुवर्णमणिविद्रुम शङ्ख दन्तरक्ताम्बराणि विधृतानि भवन्ति सिद्धौ॥ (पीयूषधाराटीका २, १० पर उद्धृत)

शिवराज ने यह मत उद्धृत किया है- शङ्खादिवररत्नानि पुष्यादित्युत्तरासु च। रोहिण्यां नैव युञ्जीत भर्तुर्जीवनकाङ्क्षिणी॥ माञ्जिष्ठेऽर्कः कुः स्वर्णे काचे रौप्याब्जयोर्विधुः। शस्तोऽथ वसनं मध्यत्र्यंशेऽग्न्यादिहतं न सत्॥ भरण्यार्द्रा तथाऽऽश्लेषा वह्नेर्भत्रितयं तथा। जिजीविषुर्न कुर्वीत प्रीत्या चाम्बरधारणम्॥ शुभैः केन्द्रत्रिकोणस्थैः पापैस्त्र्यारिगैः शुभैः। अक्षीणाब्जे दुकूलादिवस्त्रसंधारणं मतम्॥ लब्धं राजप्रसादेन विप्रादेशात्करग्रहे। प्रीत्याऽऽसं चोत्सवे वस्त्रं धार्यं निन्द्येऽपि भादिके॥ (ज्योतिर्निबन्ध पृष्ठ २१९, ६-१०)

श्रीपति का कथन है कि यदि आवश्यकता हो तो कहीं कहीं अशुभ दिन पर भी नए वस्त्र धारण किए जा सकते हैं। वस्त्रधारण करने में निषिद्ध नक्षत्र, वार आदि को भी तथा विवाहकाल और राज्यादि से सम्मान या प्रीतिपूर्वक प्राप्त वस्त्रादि को विप्रों की आज्ञा से धारण कर लेना चाहिए- विप्रादेशात्तथोद्वाहे क्षमापालेन समर्पितम्। निन्द्येऽपि धिष्ण्ये वारादौ धार्यते नवाम्बरम्॥ (तदैव १९, ८)

अथाग्न्याधानमुहूर्तः

उद्वाहे वसुभागधेयकरणेऽग्न्याधानमिन्द्राग्निभे
शाक्राग्नेयमृध्रुवान्त्यगुरुभे लग्ने जलर्क्षोज्झिते।
चन्द्रे कोणचतुष्टयोपचयगैरर्कारजीवेन्दुभिः
शेषैश्चोपचयस्थिरमृतिगैः खेटैः शुभाप्त्यै भवेत्॥ २९॥

महादेवटीकया- उद्वाह इति। उद्वाहे विवाहकाले वसुभागधेयकरणेऽपि वसु

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

धनं तस्य विभागकरणकालेऽपि अग्न्याधान कर्तव्यम्। क्व इन्द्राग्निभे विशाखायां शाक्रं ज्येष्ठा आग्नेयं कृत्तिका मृगः ध्रुवाणि रोहिण्युत्तरात्रयम् अन्त्यं रेवती गुरुभे पुष्ये लग्ने जलर्क्षोज्झ्यते मीनकर्कमकरेभ्योऽन्यलग्ने चन्द्रे जलराशिरहिते। कोणं त्रिकोण ५, ९ चतुष्टयानि १, ४, ७, १० कण्टककेन्द्र चतुष्टयसञ्ज्ञाः। ससमलग्नचतुर्थखभानां उपचयानि षष्ठलाभतृतीयभानि एतेषु अर्कारजीवेन्दुभिः सद्भिः शेषैः शेषग्रहैः बुधशुक्रशनिभिः उपचयस्थितैः सर्वैः अमृतिगैः अष्टमभावरहितैः अग्न्याधान शुभाप्त्यै भवेत्॥ २९॥

मोहनबोधिनी- अग्न्याधान विवाह के अवसर पर होता है, किन्तु इसे उसे समय भी किया जाना चाहिए जब कि पिता-पुत्र द्वारा अपनी सम्पत्ति का विभाजन किया जा रहा हो। यह इन्द्र और अग्नि देवता के नक्षत्रों- विशाखा, ज्येष्ठा, कृत्तिका, मृगशिरा, ध्रुवसंज्ञक नक्षत्र (उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी), रेवती और पुष्य- इन दस नक्षत्रों में किया जाना उचित है। मीन, कर्क, मकरादि लग्न नहीं हों और इन तीनों की राशियों में चन्द्र की स्थिति भी नहीं देखें। केन्द्र अथवा त्रिकोण में सूर्य, मङ्गल, गुरु और चन्द्र हों और बुधादि शेष ग्रह उपचयस्थ होने चाहिए। इसी प्रकार किसी भी ग्रह की स्थिति अष्टम भाव में नहीं होनी चाहिए। यह अग्न्याधान के लिए शुभद है। शुभ तिथि, शोभन लग्नस्थ चन्द्र, प्रबल गुरु और शुभ रात्रीश होने पर अग्नि का परिग्रह करना चाहिए।

ज्योतिर्निबन्धकार का भी यही मत है- अग्न्याधानं दारकाले विधेयं कैश्चित्प्रोक्तं तच्च दायाद(द्य)काले। शक्राग्न्योर्भे शक्रभे कृत्तिकायां सौम्ये ब्राह्मे पुष्यपौष्णोत्तरासु॥ कर्किनक्रघटमीनविलग्ने वांऽऽशके तनुगतेऽथ तदीये। लग्नगे कुमुदिनीदयिते वा नाशमेति जनितोऽपि हुताशः॥ केन्द्रर्क्षोपचयत्रिकोणभगताः सूर्यारजीवेन्दवः शेषाश्चोपचयस्थिता यदि तदाऽग्न्याधानमुक्तं शुभम्। चन्द्रे नैधनगे म्रियते युवती भौमे पुमानष्टमे शेषैर्मृत्युगतै रुजा च सहितोऽग्न्याधानकर्ता भवेत्॥ नो कुर्याद्धुतभुक्परिग्रहमिह क्ष्मापुत्रजीवेन्दु-भिर्नीचस्थैर्विजिते रिपोर्भवनगैरस्तं गतैर्वा द्विजः। चापस्थे तनुगे गुरौ क्रियगते ससाम्बरस्थे कुले शीतांशौ त्रिषडायगे दिनकरे वा स्यात्तदा दीक्षितः॥ अग्न्याधानं न कुर्वीत कर्किनक्रत्रये विधौ। लग्नगे पापे तथा रन्ध्रे ग्रहान्विते॥ (पृष्ठ १६४-१६५, १-५)

श्रीपति का कथन है कि जलचर राशि लग्न या कुम्भ में या इनके नवांश में चन्द्रमा के रहने पर अग्न्याधान होने से जीवनपर्यन्त अग्नि रहती है। त्रिकोण (५, ९) केन्द्र में या उपचय स्थान में सूर्य, गुरु, चन्द्र, मङ्गल हों तथा अन्य ग्रह उपचय में होने पर अग्न्याधान शुभ होता है। चन्द्रमा यदि आठवाँ हो तो पत्नी की मृत्यु होती है और

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

भौम आठवें में होने पर अग्न्याधान करने से कर्ता की शीघ्र मृत्यु होती है। आठवें स्थान पर शनि, गुरु अथवा सूर्य की स्थिति में अग्न्याधान किए जाने पर कर्ता रोग से युक्त होता है और दुष्कर चिकित्सा भी करनी पड़ती है– राशौ (नक्रे?) विलग्नेऽम्बु चरे घटे वा तदंशके वाय्यथवा शशाङ्के। आधानकाले द्विजपुङ्गवानां जातोग्निर्निर्वाणमुपैति वह्निः॥ त्रिकोणकेन्द्रोपचयेषु सूर्ये बृहस्पतौ शीतकरे कुजे वा। शेषग्रहेषूपचयस्थितेषु धूमध्वजोत्पाद- नमामनन्ति॥ चन्द्रे पत्नी मृत्युगे मृत्युमेति क्षिप्रं वह्न्याध्यापकः क्ष्मासुते च। भानोः सूनौ देवपूज्ये रवौ वा रोगैर्युक्तो दुश्चिकिस्यो द्विजेन्द्र॥ (ज्योतिषरत्नमाला १३, १७-१९)

रत्नमाला की टीका में लूणिगसूनु महादेव ने लल्लाचार्य की यह उक्ति उद्धृत की है– जल चर राशेरुदये तदंशके वा घटोदयेऽंशके वा। चन्द्रे वापि विलग्ने जातो निर्वाणमेत्यग्निः॥ यह श्रीपति के श्लोक का उत्स भी है। महादेव की टीका है– जलराशौ उदयति अन्य लग्नेपि जल नवांशे कुम्भ नवांशे वा अथवा यत्र तत्र लग्ने चन्द्रयुते एवं विधे लग्ने आहितोग्निः सुरक्षितोपिशाम्यति। कुम्भस्य रिक्तघटधारिपुरुष रूपत्वात्। जलराशैः पृथक निर्देशः। (तत्रैव)

अथ राज्याभिषेकमुहूर्तः

ज्येष्ठायां हरिभे मृदुध्रुवलघुष्वोस्विभिः पाकपैः
क्ष्माजार्कोदयजन्मपैः स्थिरतनौ शीर्षोदये सद्युते।
रिक्तां प्रोज्झ्य जनुग्रहादुपचये लग्ने त्रि३ षष्ठा६ यगैः
पापैरन्त्यषड६ ष्ट८ वर्जितशुभैर्भूपाभिषेकः शुभः॥ ३०॥

महादेवटीकया– ज्येष्ठायामिति। एषु योगेषु भूपाभिषेकः। क्व ज्येष्ठायां हरिभे श्रवणे मृदूनि मृगचित्रारेवतीमैत्राणि ध्रुवाणि रोहिण्युत्तरर्क्षाणि लघूनि हस्तपुष्याश्विन्यभिजित् तेषु पाकपः तात्कालिकदशानाथः क्ष्माजो भौमः अर्को रविः उदयजन्मपैरिति जन्मलग्नेशो जन्मराशीशः एभिः सर्वैः ओजस्विभिः उदितैः स्थिरतनौ स्थिरलग्ने वृषसिंहकुम्भानामेकतमे वा शीर्षोदये लग्ने।

'युग्मस्त्रीसिंहकुम्भालितुलाः शीर्षोदयाः स्मृताः।'

एतेषामेकतमे लग्ने सद्युते शुभग्रहयुते अत्र सद्दिने इति पाठे सोमबुधगुरुभृगुवारेषु परं रत्नमालायां शनिवारोऽप्युक्तोऽस्ति तेन भौमर्कवारौ निषिद्धौ अन्ये वाराः शुभाः। रिक्तां प्रोज्झ्य

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

जनुग्रहाज्जन्मलग्नात् वा जन्मराशरुपचये ३, ६, १०, ११ लग्ने त्रिषष्ठायगैः पापग्रहैः अन्त्यषडष्ट वर्जितशुभैः शुभग्रहैः द्वादशषष्ठाष्टमरहितैः भूपास्याभिषेकः शुभ इति तात्पर्यार्थः ॥ ३० ॥

मोहनबोधिनी– अब राजाओं के सिंहासनारोहण (वर्तमान में पदग्रहण, शपथ, कर्त्तव्यग्रहण आदि) के सम्बन्ध में मुहूर्त दिया जा रहा है। ज्येष्ठा, श्रवण, मृगशिरा, चित्रा, रेवती, अनुराधा, ध्रुव या रोहिणी, उत्तरात्रय, लघु या हस्त, पुष्य, अश्विनी, अभिजित्– इन चौदह नक्षत्रों में; आधान लग्नेश, राशीश, दशाधिप, स्थिरयोग, शीर्षोदय लग्न (मिथुन, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, कुम्भ) में; शुक्लपक्ष में, रिक्ता तिथि (४, ९, १४) को त्यागकर, उपचय लग्न अथवा ५, ९, १, ४, ७, १०, ३, २ में शुभग्रह, ३, ६, ११ में पापग्रह और ६, ८, १, १२ में चन्द्रमा के न रहने पर राजा का अभिषेक किया जाना शुभ होता है। सोमवार, बुध, गुरु, शुक्र और किसी-किसी के मत में शनिवार को ग्रहण करना चाहिए। इस प्रकार अभिषेक के निमित्त लग्नशुद्धि की जानी अपेक्षित है।

वशिष्ठ ने स्पष्ट किया है कि आधान लग्नेश, राशीश, दशाधिप, सूर्य, चन्द्र, मङ्गल, गुरु, शुक्र के बलवान होने पर और उत्पातादि दोष से रहित हों तब राज्याभिषेक किया जाना श्रेयस्कर होता है। सब ग्रह त्रिकोण, अपनी राशि, उच्चराशि अथवा मीन राशि में हों अथवा इनके नवांश में हों ओर शुभ लग्न में अभिषेक करने से अधिराज को विपुल धन की प्राप्ति होती है। ग्रह अपनी नीच राशि, शत्रुराशि या इनके नवांश में या अस्त हों एवं पापग्रह के लग्न में राजाभिषेक किए जाने से शोक, भय एवं दुर्यश की प्राप्ति होती है– आधानजन्मेषदशाधिनारवीन्दुभौमेज्यसितैर्बलस्थैः। उत्पातदोषादिविवर्जितेषु धराधिपानामभिषेक इष्टः॥ मूलत्रिकोणस्वगृहोच्चमित्रगृहस्थितैर्वापि तदंशसंस्थैः। शुभे विलग्ने सततं ग्रहेन्द्रा दिशन्ति लक्ष्मीं विपुलां च कीर्तिम्॥ स्वनीचगैः शत्रुगृहोपगैर्वा तदंशगैर्वास्तगृहोपगैर्वा। पापोदये शोकभयं त्वकीर्तिं दिशन्ति राज्ञां भृशमम्बराय॥ (वशिष्ठसंहिता ३३, १-३)

विष्णुधर्मोत्तरपुराण के द्वितीयखण्ड में राज्याभिषेक पद्धति की पूरी विधि दी गई है। अभिषेककाल निर्णयाध्याय इस प्रकार है– सम्भृतसम्भारो राज्ञस्सांवत्सरस्तथा। कालेऽभिषेचनं कुर्यात्तं कालं कथयामि ते॥ मृते राज्ञि न कालस्य नियमोऽत्र विधीयते। तत्रास्य स्नपनं कार्यं विवत्तिलसर्षपैः॥ घोषयित्वा जयं चास्य सांवत्सरपुरोहित्तौ। अन्यासनोपविष्टस्य दर्शयेतां जनं शनैः॥ स सान्त्वयित्वा स्वजनं भुक्त्वा बन्धनगांस्तथा। अभयं घोषयित्वा च कालाकाङ्क्षी तथा भवेत्॥ नाभिषेच्यो नृपश्चैत्रे नाधिमासे च भार्गव। न प्रसुप्ते तथा विष्णौ विशेषात्प्रावृषि द्विज॥ न च भौमदिने राम चतुर्थ्यां न तथैव च।

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

नवम्यां नाभिषेक्तव्यः चतुर्दश्यां च भार्गव॥ ध्रुवाणि वैष्णवं शाक्रं हस्तपुष्ये तथैव च। नक्षत्राणि प्रशस्यन्ते भूमिपालाभिषेचने॥ नागचतुष्पदं विष्टिः किंस्तुघ्नः शकुनिस्तथा। करणानि न शस्यन्ते व्यतिपातदिनं तथा॥ नक्षत्रमुल्काभिहतमुत्पाताभिहतं तथा। सौरसूर्यकुजाक्रान्तं परिविष्टिञ्च भार्गव॥ मुहूर्ताश्चोक्तनक्षत्राः सतां मानहितप्रदाः। कुजहोरा तथा नेष्टा सर्वत्र कुलिकस्तथा॥ वृषोऽथकीटसिंहौ च कुम्भो लग्ने च शस्यते। एतेषां जन्मलग्नाभ्यां यः स्यादुपचयस्थितः॥ तारा द्वितीया षष्ठी च चतुर्थी चाष्टमी च या। नवमी च तथा शस्ता अनुकूलश्च चन्द्रमाः॥ सौम्याः केन्द्रगता लग्ना शुभाश्चैव त्रिकोणयोः। पापाश्चोपचयस्थाने शस्तो लग्न दिवाकरः॥ लग्ने नवांशः क्षितिजस्य वर्ज्यो वर्गस्तथा तस्य महानुभाव। सूर्यस्य वर्गः सकलः प्रशस्तो राज्ञोऽभिषेके सग्रहो नृपाणाम्॥ (२, १८, १-१४ तथा पण्डित चक्रपाणि मिश्र कृत राज्याभिषेकपद्धति, नीतिमयूख, राजनीतिप्रकाशादि में भी उद्धृत)

ज्योतिषरत्नमाला में कहा गया है- विलग्नेजन्मेशदशाधिनाथमार्तण्डधात्रीतनयैः बलिष्ठैः। गुर्विन्दुशुक्रैः स्फुरदंशुजालैर्महीपतीनामभिषेक इष्टः॥ (१४, १)

अथ शस्त्रधारणमुहूर्तः

द्व्यादित्ये ध्रुवभेऽन्त्यभे द्विदयिते त्वाष्ट्रद्वये वारुणे
मैत्राश्वे रविजीवभार्गवदिने चन्द्रे शुभैर्वीक्षिते।
कुन्तासिच्छुरिकाधनुःशरतनुत्राणानि कण्टरिका
भूपालैरिति हेतयो विधुबले धार्या जयाप्तीच्छुभिः॥ ३१॥

महादेवटीकया- द्व्यादित्ये इति। भूपालैः राजभिः इति एतावन्मात्राः हेतयः आयुधानि एषु योगेषु धार्याः। किंलक्षणैः भूपालैः जयाप्तीच्छुभिः जयकाङ्क्षिभिः। द्व्यादित्ये पुनर्वसुद्वये ध्रुवेषु अन्त्ये रेवत्यां द्विदयिते विशाखायां त्वाष्ट्रद्वये चित्राद्वये वारुणे शतभिषे मैत्राश्वे अनुराधाश्विन्यौ एषु भेषु रविजीवभार्गवदिने वारेषु चन्द्रे शुभैर्वीक्षिते चन्द्रे शुभे शुभग्रहैर्वा ईक्षिते विधुबले चन्द्रबले सति। कुन्तः भल्लः असिः खङ्गः छुरिका धनुः धनुष्यं शरः बाणः तनुत्राणं कवचम् इति हेतयो धार्याः॥ ३१॥

मोहनबोधिनी- शासकों को विजय की अभिलाषा से शस्त्रायुध धारण करने के हेतु से मुहूर्त दिया जा रहा है। पुनर्वसु, पुष्य, ध्रुव या रोहिणी, उत्तरात्रय, रेवती, विशाखा, अनुराधा, चित्रा, स्वाती, शतभिषा, अनुराधा, अश्विनी- इन नक्षत्रों; रविवार, गुरु, शुक्रवार के दिन, शुभ चन्द्रमा, शुभग्रह, चन्द्रबल को देखकर कुन्त या भाला,

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

तलवार, खड्ग, छुरी, धनुष-बाण, त्राण-कवच आदि आयुध विजय की अभिलाषा रखने वाले को धारण करने चाहिए।

मुहूर्तपारिजात में आयुध-कवचादि धारण करने के लिए कृष्ण पक्ष में १, २, ३, ५, ६, ७, १०, ११, १२, १३ एवं शुक्लपक्ष में १५ तिथियाँ; वारों में सूर्य, चन्द्र, गुरु एवं शुक्रवार; नक्षत्रों में अश्विनी, रोहिणी, मृगशिरा, पुनर्वसु, उत्तरात्रय, हस्त, चित्रा, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, अभिजित् व रेवती शुभ बताए गए हैं। इसी प्रकार लग्न में २, ५, ८, ११वाँ और जब केन्द्र में शुभग्रह हों। चन्द्रमा पर शुभग्रहों की दृष्टि आवश्यक बताई गई है। (पृष्ठ १७४)

चक्रपाणि मिश्र ने 'मुहूर्तमाला' में शस्त्रों के सम्बन्ध में दो मुहूर्त दिए हैं। शस्त्र संस्कार योग के लिए कहा गया है कि तीक्ष्ण और उग्र नक्षत्रों में और क्रूर वारों में सभी शस्त्रों के संस्कार, नियोग और क्रय-विक्रय शुभदायक माने जाते हैं, अतः उन्हें करना चाहिए। तीक्ष्ण, उग्र और ध्रुव नक्षत्रों में, चित्रा, आदित्य का नक्षत्र पुनर्वसु, उत्तरा भाद्रपद, रेवती नक्षत्र खड्गादि अस्त्र, बख्तर को एकत्रित करने के लिए तथा इन्हीं कार्यों के निमित्त गुरुवार, शुक्रवार और रविवार शुभदायक होते हैं। शस्त्र सङ्घटन के लिए साधारण और मङ्गलवार का दिन शुभ है- तीष्णोग्रभेषु कूराह्नि शुभयोक्तोमनीषिभिः। संस्कार सर्वशास्त्राणां नियोगः क्रयविक्रयः॥ तीक्ष्णोग्रे ध्रुवे निश्रेषु चित्रादित्यान्त्ययुग्मके। खड्गाद्यस्त्राणां सन्नाहतिर्गुर्वक भार्गवैः॥ साधारणे च भौमेऽह्नि शस्त्रास्त्रघटनं शुभम् । (मुहूर्तमाला २, ५३-५५)

बृहज्ज्योतिसारसंग्रह में कहा गया है कि पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, चित्रा, रोहिणी, मृगशिरा, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, तीनों उत्तरा, रेवती और अश्विनी नक्षत्रों में रिक्ता तिथि को छोड़कर रविवार, शुक्रवार व गुरुवार को बख्तर, छुरी, तलवार, भाला इत्यादि शस्त्रों को धारण किया जाना शुभ है- पुनर्वसुद्वये हस्ते चित्रायां रोहिणीद्वये। विशाखादित्रये कुर्यात्त्र्युत्तरे रेवतीद्वये॥ रिक्तां विना तिथौ सूर्यशुक्रजीवदिने तथा। सन्नाहच्छुरिकाखड्गकुन्त शस्त्रादिधारणम्॥ (पृष्ठ १२०)

वैशम्पायनकृत नीतिप्रकाशिका में खड्गोत्पतिकथन संज्ञक तृतीयाध्याय में शस्त्रधारण के कर्त्तव्यों पर विपुल प्रकाश डाला गया है। आगे भी धनुर्वेद की महत्ता परिभाषित की गई है- स तथेति प्रतिश्रुत्य गृहीत्वा खड्गमुत्तमं। लोके प्रवर्तयामास राजाधारामुखेन वै त्वमप्येतमसिं मत्तो गृहाण नृपसत्तम। पालयस्व च धर्मेण प्रजाः पुत्रानिवौरसान् कृत्तिकास्तस्य नक्षत्रमसेरग्निश्च देवता। रोहिणी गोत्रमप्यस्य रुद्रस्तस्याधिदैवतं

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

असेरष्टौ हि नामानि रहस्यानि निबोध मे। असिर्विशसनः खड्गस्तीक्ष्णधर्मा दुरासदः श्रीगर्भो विजयश्चैव धर्ममालस्तथैव च। अग्र्यः प्रहारणानां च रुद्रेणैवं समीरतः। असेश्च पूजा कर्तव्या सदा युद्धविशारदैः। जयं कीर्ति लभन्ते ते येऽसिं सम्पूजयन्ति वै कथेयं कथिता तुभ्यं खड्गमाहात्म्यसंयुता। (नीतिप्रकाशिका ३, ३३-३९)

राजमार्तण्ड में धाराधिप भोजराज ने कहा है- मघोत्तरा पावकविष्णु-चित्रास्वात्यश्विजीवादितिभास्कराश्च। वाराः सितार्केन्दुमहीसुतानां शस्ता धनुर्वेदविधौ प्रदिष्टाः॥ अश्विनीमघचित्रायां स्वातौ स्यादुत्तरासु च। पुनर्वसौ मघा मित्रे हस्ते च श्रवणेऽपि वा॥ कृत्तिकास्वपि चारम्भो धनुर्वेदे प्रशस्यते। गुरुशुक्रसुराचार्य्यवारे चाङ्गरके रवौ॥ तिथिनक्षत्रयोगेषु शुद्धेष्वपि निशाकरे। कृषि-व्यायाम-युद्धेषु प्रशस्तो भूमिनन्दनः॥ नशस्तं जन्मनक्षत्रं अविशुद्धं यथा भवेत्। तत्रारम्भ न कुर्वीत तिथिव्या शोभने न च॥ हरौ सुप्ते तथा पौषे चैत्रे वाथ सिते तिथौ। शशिसौम्यार्कजस्याह्नि दिग्वेधो नैव शस्यते॥ (श्लोक १५२-५७)

मुहूर्तकल्पद्रुम में कहा गया है कि मिश्रसंज्ञक (कृत्तिका और विशाखा), दारुण या तीक्ष्णसंज्ञक (मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा व आश्लेषा), मृगशिरा व उग्रसंज्ञक (पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़, पूर्वाभाद्रपद, भरणी, मघा) तथा अश्विनी नक्षत्रों में लोहा-फौलाद आदि के आयुधों का निर्माण और एतद्विषयक कार्य किया जाना चाहिए। चर्म-वर्म कवच और आयुधादि धारण के लिए अनुराधा, मृगशिरा, धनिष्ठा, पुनर्वसु, चित्रा और अश्विनी- ये छह नक्षत्र शुभ हैं- मिश्रदारुणमृगोग्रहयर्क्षैर्लोह शस्त्रघटनं शुभकृत्स्यात्। मित्रचान्द्र वसुभादितिचित्रा दस्रभेऽंशुकजचर्मधृतिः स्यात्॥ (मुहूर्तकल्पद्रुम ७, २१)

इसी प्रकार कौटलीय अर्थशास्त्र, रणदीपिका, विजयकल्पलता, युद्धपद्धति, स्वरोदयशास्त्र, नरपतिजयचर्या, शार्ङ्गधरसंहिता, अग्निपुराण, विष्णुधर्मोत्तरपुराणादि में भी धनुर्वेद का विशद विवरण मिलता है।

अथ यात्राप्रकरणम्-

हस्तेन्दुश्रवणाश्विपुष्यवसुभेष्वादित्यमैत्रान्त्यभे
सद्यानं त्रिकुबाणपर्वतमितास्ताराश्च शाक्रद्वयम्।
मन्देन्दू श्रुतिषट्कमीज्यमरेज्यर्क्षं कभं पूर्वतः शुक्रार्कौ
ज्ञकुजार्यमद्वयमथाऽर्कारार्किरिक्तास्त्यजेत्॥ ३२॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

महादेवटीकया– हस्तेति। एषु योगेषु यानं गमनं सत्। हस्तेन्दुश्रवणाश्विपुष्यवसुभेषु आदित्यमैत्रान्त्यभे आदित्यं पुनर्वसुः मैत्रमनुराधा अन्त्यभे रेवत्यां त्रिकुबाणपर्वत-मितास्तारास्त्यजेत्। च परं पूर्वतः प्राचीदिक्तः शाक्रद्वयं ज्येष्ठामूले। मन्देन्दुवारौ शनिसामौ प्राच्यां त्याजेत्। श्रुतिषट्कं श्रवणादिषट्कं गुरुवारं याम्ये त्यजेत्। अमरेज्यर्क्षं पुष्यं कभं रोहिणीं शुक्रार्कौ पश्चिमे त्यजेत्। ज्ञो बुधः कुजो भौमः अर्यमद्वयम् उत्तराफाल्गुनीहस्तौ उदक् त्यजेद्। अथ अर्कार्किरिक्ताः रविभौमशनिरिक्तास्तिथीः त्यजेत्। तथा चोक्तम्–

'तिथ्यश्चतुर्थी नवमीं चतुर्दशीं विहाय विष्टिं करणं च गच्छतः।

भवन्ति चामीकरवाजिवारणा रथाश्च मुख्या धनवामिवारणाः॥'

अन्य नक्षत्रेषु–

'परित्यजेत्त्वाष्ट्रयमारगाणामर्धं द्वितीयं गमने जयेप्सुः।

पूर्वार्धमाग्नेयमघाद्विदैवं स्वाती मतेनोशनसः समस्तम्॥'

सौम्येवारे शुभा यात्रेति॥ ३२॥

मोहनबोधिनी– अब प्रयाण, यात्रा के मुहूर्त को कहा जा रहा है। हस्त, मृगशिरा, श्रवण, अश्विनी, पुष्य, धनिष्ठा, पुनर्वसु, अनुराधा और रेवती– इन नौ नक्षत्रों में यात्रा शुभ होती है। यात्रा के समय यात्री की तीसरी, पाँचवीं और सातवीं तारा का त्याग कर दिया जाना चाहिए, वे अनिष्ठ फल देती है अर्थात् जन्म नक्षत्र से १, ३, ५, ७, १०, १२, १४, १६, १९, २१, २३, २५वें नक्षत्र में यात्रा नहीं करनी चाहिए। ज्येष्ठा और मूल नक्षत्र में, शनिवार, सोमवार को पूर्व दिशा में गमन नहीं करना चाहिए। श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद एवं रेवती– इन छह नक्षत्र व गुरुवार को याम्य या दक्षिण दिशा में यात्रा का त्याग करें। पुष्य, रोहिणी में शुक्रवार व रविवार को पश्चिम दिशा में गमन नहीं करें। बुधवार, भौमवार को उत्तराफाल्गुनी व हस्त नक्षत्र में उत्तर में गमन नहीं करना चाहिए। इसके अतिरिक्त यात्रा में रविवार, शनिवार को रिक्तातिथि (४, ९, १४) होने पर यात्रा का त्याग करना चाहिए। शुभवार में यात्रा शुभ होती है।

आचार्य वराहमिहिर ने यात्रा पर बृहद्योगयात्रा, योगयात्रा, लघुयात्रा या टिक्कनिका जैसे ग्रन्थों का प्रणयन किया है जबकि अन्य ज्योतिर्विदों ने भी यात्रा विषय पर पर्याप्त लिखा है। रामदैवज्ञ ने प्रश्नलग्न के आधार पर शुभाशुभ ज्ञान निर्णय के साथ यात्रा के समय पर विचार करते हुए लिखा है कि मेष, सिंह एवं धनु राशियों के सूर्य में यात्रा शुभ होती है। मकर, कुम्भ, कन्या, मिथुन, वृष और तुला राशि के सूर्य में यात्रा मध्य फलद

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

होती है। कर्क, वृश्चिक एवं मीन राशि के सूर्य में यात्रा बहुत दीर्घावधि वाली व हीन फलद हो जाती है, इसमें यात्रा की तीसरी, पाँचवीं व सातवीं तारा अभुभ फल देने वाली होती है- धनुर्मेषसिंहेषु यात्रा प्रशस्ता शनिज्ञोशनोराशिगे चैव मध्या। रवौ कर्कमीनालि संस्थेऽतिदीर्घा जनुः पञ्चसप्तत्रितारश्च नेष्टाः॥ (११, ८)

यही विचार लल्लाचार्य का भी है- यात्राजसिंहतुरगोपगते वरिष्ठा मध्या शनैश्चरबुधोशनसां गृहेषु। भानौ कुलीरवृषवृश्चिकगतेऽतिदीर्घा शस्तस्तु देवलमतेऽध्वनि पृष्ठगोऽर्कः॥ (पीयूषधाराटीका ११, ८ पर उद्धृत)

रामदैवज्ञ का मत है कि शुक्लपक्ष की प्रतिपदा, षष्ठी, द्वादशी, अष्टमी तथा रिक्ता, पूर्णिमा, अमावस्या तिथियों में यात्रा का निषेध है। अश्विनी, पुनर्वसु, अनुराधा, मृगशिरा, पुष्य, रेवती, हस्त, श्रवण और धनिष्ठा नक्षत्रों की यात्रा शुभावह मानी जाती है- न षष्ठी न च द्वादशी नाष्टमी नो सिताद्या तिथिः पूर्णिमाऽमा न रिक्ता। हयादित्यमित्रेन्दु जीवान्त्यहस्तश्रवोवासवैरेव यात्रा प्रशस्ता॥ (वही ९)

भोजकृत राजमार्तण्ड में स्पष्ट किया गया है कि किस दिन क्या फलाफल रहता है- सूर्यदिनेऽध्वनि नाशश्चन्द्रे शक्तिक्षयोऽर्थनाशश्च। ज्वलनासृक्पित्तरुजः कौजे बौधे सुहृत्प्राप्तिः॥ जीवे जयधनलब्धिः शुक्रे स्त्रीवस्त्रगन्ध लाभः। दैन्यवधबन्धरोगान् प्राति दिनेऽर्कपुत्रस्य॥ वारस्तुषारकरसूर्यसुताऽवनीज तीक्ष्णत्विषाम शुभदः कथितः प्रयाणे। आचार्यकं पुनरिदं त्वशुभः शुभो वा यः स्याद्ग्रहः शुभफलो दिनपः प्रशस्तः॥ उपचयकर ग्रहदिने सिद्धिः क्रूरेऽपि पापिनां भवति। सौम्येऽप्यनुपचयस्थे न भवति यात्रा शुभा यातुः॥ (राजमार्तण्ड 652-655)

श्रीपति का मत है कि हस्त, मृगशिरा, अनुराधा, श्रवण, अश्विनी, पुष्य, रेवती, धनिष्ठा व पुनर्वसु ये नौ नक्षत्र यात्रा की दृष्टि से उपर्युक्त हैं किन्तु ३, ५, ७ तारा गमन में वर्जितहैं-हस्तेन्दुमैत्रश्रवणाश्वितिष्यपौष्णश्रविष्ठाश्वपुनर्वसुश्च। श्रेष्ठानि धिष्णानि नवप्रयाणे त्यक्त्वा त्रिपञ्चादिमसप्ततारा:॥ (ज्योतिषरत्नमाला १५, १७)

पूर्वस्थ सात नक्षत्रों से अग्निकोण की यात्रा शुभदायक होती है। दक्षिणस्थ नक्षत्रों में नैर्ऋत्यकोण की, पश्चिमस्थ नक्षत्रों में वायव्यकोण और उत्तरस्थ नक्षत्रों में ईशान कोण की यात्रा सुविधाप्रद होती है। कार्य सिद्धि के निमित्त पुष्य, हस्त, मैत्र, अश्विनी इस क्रम से नक्षत्रों की गणनाकर सृष्टिक्रम से दिशाओं की यात्रा पर विचार किया जाना चाहिए। श्रवण, पुष्य, मृगशिरा और हस्त को सर्वकालिक यात्रा नक्षत्र कहा

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

गया है-यायात्पूर्वद्वारकैरनिग्नि कोष्टां प्रादक्षिण्यां नेवमाशांवपूर्वाम्। पुष्योहस्तौमैत्रमप्याश्विनं च चत्वायाहुः सर्वदिग्द्वारभानि॥ (वही १२)

नारदसंहिता का का मत है- पौष्णर्केन्द्वश्विमित्राग्निहरितिष्यवसूड्डुषु। नवसप्तपञ्च-मायेषु यात्राभीष्टफलप्रदा॥ (३३, ४)

अथ शुभशकुनानि-

विप्रा गोफलपुष्पदुग्धमणयो वेश्या दधीभो हय-
श्छत्रादर्शमधुज्वलच्छिखिसुरामांसास्त्रकन्यामृगाः।
बभ्रुश्चाषमयूरपूरितघटाः पुत्रान्विता स्त्री सुवाग्
वाद्यं चारमधौतवस्त्ररजका दृष्टा गमे स्युः शुभाः॥ ३३॥

महादेवटीकया- अथ शकुनान्याह- विप्रा इति। एते पदार्थाः गमे दृष्टाः स्युः। एते के विप्राः एकाधिका द्विजाः गावः फलं पुष्पं दुग्धं मणिः स्फटिकादिवज्रान्तः वेश्या सामान्यवनिता दधि इभो गजः हयोऽश्वः छत्रमातपत्रम् आदर्शो दर्पणः मधु क्षौद्रं ज्वलच्छिखी ज्वलमानो वह्निः सुरा मद्यं मांसम् अपक्वामिषम् अस्त्रं खड्गभल्लखेटकादि कन्या मृगः एणः बभ्रुर्नकुलः चाषो नीलपक्षी मयूरः शिखण्डी पूर्णघटाः पुत्रयुक्ता स्त्री सुवाक् शोभनाशीः प्रयुक्ता वाणी वाद्यं चतुर्विधम्।

'ततं वीणादिकं प्रोक्तं सन्नद्धं मुरजादिकम्।
घनं तालादिकं ज्ञेयं सुषिरं वंशपूर्वकम्॥' इति।

एषां मध्ये एकतमं वाद्यम्। चामरं वायुव्यजनं धौतानि वस्त्राणि यत्पार्श्वे एवं विधो रजकः एते पदार्थाः अन्यच्च सुवाक् वेदध्वनिरपि ग्राह्यः वाद्यध्वनिरपि तथा मृदङ्गादिघोषः श्रेष्ठः। दर्शनं नकुलचाषमयूराणामपि श्रेष्ठम्। छागो भरद्वाजः पक्षी दृष्टः शुभ॥ ३३॥

मोहनबोधिनी- यात्रा करते समय शुभ शकुन लेना चाहिए। शुभ शकुनों में ब्राह्मण, गाय, फल, पुष्प, दूध, मणि आदि रत्न, वेश्या, दही, अश्व, छत्र, दर्पण का दिखाई देना मुख्य हैं। इसी प्रकार मधु, जलती हुई अग्नि, सुरा, मांस, आयुध, कन्या, मृग, बभ्र या नकुल, चाख या नीलकण्ठ, मयूर, जल से भरा हुआ कलश, पुत्रान्वित महिला, वाद्यवृन्द, चामरधारी, श्वेत परिधान वाला पथिक, रजक आदि का दिखाई देना भी शुभ है। वाद्यों में चार प्रकार के वाद्य हैं वीणादि तार वाले वाद्य तत् संज्ञक, मुरज या

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

मृदङ्गादि अवनद्य, ताल वाले घन और वंशी की तरह फूंक से बजने वाले वाद्य सुषिर कहे गए हैं। इनका स्वर शुभ है।

श्रीपति के मत से उक्त शकुन वर्णन तुलनीय है- छुच्छुकाकभवनगोधिका रलापिङ्गलारिकारिवधूश्च पोतकी। सूकरी पुरुषसञ्ज्ञिता: शिवा वामत: खलु यियासतां शुभा:॥ ऋक्षो भास: छिक्करो वानरश्च श्रीकण्ठश्च पिप्लाख्यो रुरुश्च। ये स्त्री सञ्ज्ञा दक्षिणा: स्यु: प्रशस्ता: प्रोक्ता: पूर्वै: सूरिभिस्ते प्रयाणे॥ भृङ्गाराञ्जन वर्द्धमानमुकुराबद्धेक पश्चामिषोष्णीष क्षीरनृयानपूर्णकलशच्छत्राणि सिद्धार्थका:। वीणाकेतन मीनपङ्कजदधि-क्षौद्राज्यगोरोचना: कन्याशङ्खसितोक्षवस्तुमनोविप्राश्वरत्नानि च॥ प्रज्वलज्वलन दन्ति तुरङ्गाभद्रपीड गणिकाङ्कुशमृत्स्ना:। अक्षतेक्षुफलचामरभक्षाण्यायुधानि च भवन्ति शुभानि॥ भेरिमृदङ्गमृदुर्मद्दल शङ्खवीणा वेदध्वनिर्मधुरमङ्गलगीतघोषा:। पुत्रान्विता च युवती: सुरभि: सवत्सा धोताम्बरश्चरजकोऽभिमुख: प्रशस्त:॥ (ज्योतिषरत्नमाला १५, ५८-५९, ६२-६४)

अथापशकुनानि-

काष्ठं चर्म तृणाहितूललवणास्थ्यङ्गारतैलं गुडो
वन्ध्याऽरि: कलिमुक्तकेशवसनोऽभ्यक्तौषधि: क्लीबविट्।
तक्रं पङ्कवसार्द्रवस्त्रजटिलश्यामान्नमुण्डक्षुतं
प्रव्राड्दीनसुमत्तवान्तविगलन्दुष्टोक्तयो नो शुभा:॥ ३४॥

महादेवटीकया- काष्ठमिति। एते पदार्था: गमे गमने दृष्टा: नो शुभा:। एते के काष्ठम् इंधनादि चर्म उपानदादि तृणं घासादि अहि: सर्प: तूलं कार्पासादि लवणं पञ्चविधं लवणं काललवणं सैन्धवं सौवर्चलं सामुद्रकं यद्यप्यौषधमध्ये एतेषामन्तर्भाव: तथापि जवक्षारसाजिक्षारावौषधमध्ये ग्राह्यौ अस्थिदन्तादि अङ्गार: शान्ताग्निकाष्ठेऽङ्गार: तैलं सर्वमपि वन्ध्या वनिता अप्रसूता स्त्री अभ्यक्तो नर: तैलाभ्यक्त: औषधं चूर्णगुटिकादि क्लीब: षण्ढ: विट् पुरीषं तक्रं पङ्क: जटिलो जटावान् श्यामान्नं माषमुद्गतिलादि मुण्ड: क्षपणक: क्षुतं क्वचित् छिक्का प्रव्राट् संन्यासी दीन: सुमत्त: क्षीब: वान्तो वमन् विगलन् पतन् दुष्टोक्तयो मा याहि क्व यास्यसीति नो शुभा:॥ ३४॥

मोहनबोधिनी- अब यात्रा में होने वाले अपशकुनों का विवरण दिया जा रहा है। काष्ठ, चमड़ा, तृण, सर्प, रुई, पाँचों प्रकार के लवण, अस्थि, बिना जले अङ्गारक या कोयला, तेल, गुड़, बाँझ महिला, दुश्मन, कलह-दर्शन, खुले केश व निर्वस्त्र, मालिश

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

किए या भूखा व्यक्ति, औषधि, खून, हिजड़ा, विष्ठा, छाछ, कीचड़, वसा, गीले कपड़े, जटाजूटधारी, काला अन्न, मुण्डन कराया व्यक्ति, सम्मुख छींक, प्रवाड् या परिव्राजक-संन्यासी, दुर्भाषणकर्ता, दुष्ट, वात या उल्टी-मितली करते व्यक्ति आदि का मिलना या दिखाई देना अशुभ सूचक समझना चाहिए।

मत्स्यपुराण के शकुनाध्याय में नाना शकुनापशकुनों की गणना इस प्रकार बताई गई है- अथेष्टानि प्रवक्ष्यामि मङ्गल्यानि तथानघ। श्वेताः सुमनसः पृष्ठा पूर्णकुम्भस्तथैव च॥ जलजाः पक्षिणश्चैव मांसमत्स्यस्यपार्थिवाः। गावस्तुरङ्गमो नागो वृद्ध एकः पशुस्त्वजा॥ त्रिदशाः सुहृदो विप्रा ज्वलितश्च हुताशनः। गणिका च महाभागा दूर्वाचार्द्राश्चगोमयम्। रुक्मं रूप्यं च ताम्रं च सर्वरत्नानि चाप्यथ॥ औषधानि च सर्वज्ञा यवाः सिद्धार्थकास्तथा। खड्गं पात्रं पताका च मृत्तिकायुधपीठकम्॥ राजलिङ्गानि सर्वाणि शवं रुदितवर्जितम्। घृतं दधि पयश्चैव फलानि विविधानि च॥ स्वस्तिवृद्धिनिनादश्च नद्यावर्तः स कौस्तुभः। वादित्राणां शुभः शब्दो गम्भीरः सुमनोहरः॥ गान्धारषडजऋषभा ये गीताः सुस्वराः स्वराः। वायुः सशर्करोत्युष्णः सर्वविघ्नविनाशकृत्॥ प्रतिलोमस्तथा नीचो विज्ञेयो भयकृद्द्विजः। अनुकूलो मृदुः स्निग्धः सुखस्पर्शः सुखावहः॥ शस्तान्येतानि धर्मज्ञ यत्रस्यान्मनसः प्रितम्। मनसस्तुष्टिरेवात्र परमं जललक्षणम्॥ मनोत्सुकत्वं मनसः प्रहर्षः शुभस्य लाभो विजयप्रवादः। मङ्गल्यलब्धिः श्रवणं च राज्ञां ज्ञेयानि नित्यं विजयावहानि॥ (२४३, १४-२८)

उक्त शकुन वर्णन न्यूनभेद से विष्णुधर्मोत्तरपुराण (खण्ड २, १६३, १७-३०) में 'अथेष्टानि प्रवक्ष्यामि मङ्गल्यानि तथानघ' श्लोकानन्तर उद्धृत किया गया है। शकुन वर्णन नारदपुराण (पूर्वभाग, द्वितीय पाद, ५६, ६९८-७९९) में भी उपलब्ध है।

नारदसंहिता (३३, ८७, ९०) में कहा गया है- प्रज्वलाग्निः शुभं वाक्यं कुसुमेक्षु सुरागणाः॥ गन्धपुष्पाक्षतच्छत्रचामरान्दोलका नृपाः। भक्ष्यं शुभफलं चैवभोऽश्वाजौ दक्षिणे वृषः॥ मत्स्यं मांसं सुधौतं च वस्त्रं श्वेतवृषध्वजः। पुण्यस्त्री पूर्णकलशरत्नशृङ्गारगोद्विजाः। भेरीमृदङ्गपटहशङ्खरागादिनिस्वनाः। वेदमङ्गलघोषः स्युर्यायिनां कार्यसिद्धिदाः॥

शकुन को ज्योतिष के संहिता स्कन्ध का अङ्ग माना गया है। मत्स्य, विष्णुधर्मोत्तर, बृहत्संहिता दि के आधार पर कालान्तर में कई शकुन ग्रन्थों का प्रणयन हुआ इनमें बसन्तराजशाकुनम्, अक्षरचिन्तामणि, कष्टावलीचक्रम, कालचक्रम्, केरलीयप्रश्नम्, खञ्जनदर्शनफलम्, गृहगोधिकाविचार, पञ्चपक्षीप्रश्न, पञ्चपक्षीटिप्पण, पञ्चपक्षीनिदर्शनम्, पञ्चसार, पल्लिकादि विचार, पवनविजयम्, शकुनप्रदीप, गार्गीयसंहिता, मेघमाला, प्रश्नविद्या,

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

मयूरचित्रम्, रघुवंशशकुनावली, बसन्तराजसारोद्धार, शकुनदिशाफलम्, शकुनप्रदीप चूडामणि, शकुनशास्त्रम्, शकुनसार, शकुनावली, शतसंवत्सरिः, शुभाशुभफलचक्रम्, स्वप्नचिन्तामणि, स्वरपञ्चाशिकाल, स्वप्नाध्यायः, समरसार आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

अथ गृहारम्भमुहूर्तः

मासे फाल्गुनमार्गमाधवनभः पौषे ध्रुवेन्द्वीज्यभे
हस्तस्वातिवसुद्वये शनिभृगुज्ञेज्ये गृहारम्भणम्।
द्वारं प्राक्तिमिमेषकौर्पिषु शुभं याम्ये नृयुग्माङ्गनानक्रे
पश्चिममुक्षतौलिकलशे कर्काश्विसिंहे उदक्॥ ३५॥

महादेवटीकया– मास इति। एतेषु योगेषु गृहारम्भणं वास्तुप्रकरणं कर्तव्यम् क्व फाल्गुनमार्गमाधवनभः पौषे फाल्गुनः प्रसिद्धः मार्गो मार्गशीर्षः माधवो वैशाखः नभः श्रावणः पौषः प्रसिद्ध एतेष्वेव मासेषु गृहारम्भः। तदुक्तं वास्तुशास्त्रे *(राजवल्लभवास्तुशास्त्रम् १, १७)* –

'चैत्रे शोककरं गृहादिरचनं स्यान्माधवेऽर्थप्रदं
ज्येष्ठे मृत्युकरं शुचौ पशुहरं तद्वृद्धिदं श्रावणे।
शून्यं भाद्रपदेऽश्विने कलिकरं भृत्यक्षयं कार्तिके
धान्यं मार्गसहस्ययोर्दहनभीमाघे श्रियः फाल्गुने।'

इति। ध्रुवेषु रोहिण्युत्तरासु इन्दौ मृगे ईज्यभे पुष्य हस्तस्वातिवसुद्वये धनिष्ठाशतभिषे शनिभृगुज्ञेज्ये वारे मन्दशुक्रबुधगुरुवारेषु गृहारम्भणं कार्यन्तिमिमेषकौर्पिषु राशिषु सत्सु मीनमेषवृश्चिकेषु एतेषां राशीनां प्राग्द्वारं गृहं सत्, नृयुग्मे मिथुने अङ्गना कन्या नक्रे मकरे एतेषां याम्यद्वारं गृहं सत्, उक्षतौलिकलशे वृषतुलाकुम्भे पश्चिमद्वारं सत्, कर्के अश्विनि धनुषि सिंहे उदग्द्वारं गृहं सत्॥ ३५॥

मोहनबोधिनी– अब गृहारम्भ के सम्बन्ध में प्रशस्त मासादि पर विचार किया जा रहा है। गृहारम्भ के लिए उपयुक्त मास हैं– फाल्गुन, मार्गशीर्ष, वैशाख, श्रावण तथा पौष। शुभ नक्षत्रों में रोहिणी व उत्तरात्रय, मृगशिरा, पुष्य, हस्त, स्वाती, धनिष्ठा, शतभिषा हैं। वारों में शनिवार व शुक्रवार, बुध एवं गुरुवार शुभ कहे गए हैं। सङ्क्रान्त्यानुसार मीन, मेष, वृश्चिक राशि पर सूर्य हो तो पूर्व दिशा का गृहद्वार रखना उत्तम होता है।

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

मिथुन, कन्या, एवं मकर राशि पर दक्षिण दिशा; वृष, तुला एवं कुम्भ राशि में सूर्य सङ्क्रमण होने पर पश्चिम तथा कर्क, धनु एवं सिंह राशि पर सूर्य होने पर उत्तर दिशा का द्वार रखना उत्तम होता है।

सूत्रधारमण्डन के राजवल्लभवास्तुशास्त्रम् सहित अन्य वास्तुग्रन्थों में गृहारम्भ में मास फलाफल पर विचार किया गया है। इनका उत्स श्रीपति का मत है जिसमें कहा है कि कहा गया है चैत्रादि चान्द्रमास में गृह निर्माण करने पर शोक, वैशाख में धन-धान्य, ज्येष्ठ में मृत्यु, आषाढ़ में पशुहरण व चोरी, श्रावण में द्रव्यवृद्धि, भाद्रपद में विनाश होता है। इसी प्रकार आश्विन में युद्ध, कार्तिक में नौकरों-भृत्यों का क्षय, मार्गशीर्ष व पौष में लक्ष्मी, माघ में अग्निभय और फाल्गुन में मकान निर्माण से लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। यह फल वास्तुशास्त्र के उपदेशकर्ताओं ने चैत्रादि मास क्रम से वर्णित किया है- शोको धान्यं मृतपशुहर्ती द्रव्यवृद्धिर्विनाशो युद्धं भृत्यक्षतिरथ फलं श्रीश्च वह्नेर्भयं च। लक्ष्मीप्राप्तिर्भवति भुवनारम्भकर्तुः क्रमेण चैत्रादूचे मुनिरिति फलं वास्तुशास्त्रोपदिष्टम्॥ (१७, १४)

यही मत सूत्रधार मण्डन कृत राजवल्लभवास्तुशास्त्रम् (१, १७) का है जिसका श्लोक महादेव ने उद्धृत किया है कि चैत्र मास में गृह का आरम्भ और उसमें प्रवेश करने से शोक की प्राप्ति होती है, वैशाख में धन की प्राप्ति, ज्येष्ठ में मृत्यु और आषाढ़ में पशुओं का नाश होता है। श्रावण में ऐसा किए जाने पर पशुधन में वृद्धि, भाद्रपद में घर खाली, आश्विन में क्लेश और कार्तिक में भृत्य या नौकर की मृत्यु होती है। मार्गशीर्ष व पौष माह में धन-धान्य की प्राप्ति, माघ में आगजनी की आशंका तथा फाल्गुन में लक्ष्मी की अभिवृद्धि होती है।

गृहारम्भ में मासफल विश्वकर्मा ने इस प्रकार बताया है- चैत्रे शोककरं विद्याद् वैशाखे च धनागमम्॥ ज्येष्ठे गृहाणि पीड्यन्ते आषाढे पशुनाशनम्। श्रावणे धनवृद्धिश्च शून्यं भाद्रपदे भवेत्॥ कलहश्चाश्विने मासे भृत्यनाशनश्च कार्तिके। मार्गशीर्षे धनप्राप्तिः पौषे च धनसम्पदः॥ माघे चाग्निभयं कुर्यात् फाल्गुने श्रीः शुभोत्तमा॥ (ज्ञानप्रकाशदीपार्णव १, ३-६)

श्रीपति का मत है कि कर्क (श्रावण), नक्र (माघ), सिंह और कुम्भ राशि के सूर्य में (कुम्भ सङ्क्रान्ति विशिष्ट फाल्गुन मास में) पूर्वमुखी द्वार व पश्चिम दिशा में दरवाजे का मुख; तुला, मेष, वृष, वृश्चिक राशि के सूर्य में दक्षिण और उत्तर दिशा में द्वारमुख रख रखकर गृह निर्माण करना चाहिए। यहाँ कुम्भ के रवि और फाल्गुन मास

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

को एकत्र करने से एकवाक्यता होती है- *कर्कनक्रहरिकुम्भगतेऽर्के पूर्वपश्चिममुखानि गृहाणि। तौलिमेषवृश्चिकयाते दक्षिणोत्तरमुखानि च कुर्यात्॥ (पूर्वानुसार १७, १५)*

सङ्क्रान्त्यानुसार विश्वकर्मा का मत है- कन्या तुला वृश्चिकेऽर्के न गृहं पूर्वसन्मुखम्। धने च मकरे कुम्भे न कुर्याद् दक्षिणोन्मुखम्॥ मीने मेषे वृषे चैव न कुर्यात्पश्चिमोन्मुखम्। मिथुने कर्कटे सिंहे न कुर्यादुत्तरोन्मुखम्॥ (दीपार्णव 1, 8-9)

क्रम	मास	फल	क्रम	मास	फल
1.	चैत्र	शोक	7.	आश्विन	कलह
2.	वैशाख	अर्थलाभ	8.	कार्तिक	भृत्यनाश
3.	ज्येष्ठ	मृत्यु	9.	मार्गशीर्ष	धान्य
4.	आषाढ़	पशुनाश	10.	पौष	धान्य
5.	श्रावण	पशुवृद्धि	11.	माघ	अग्निभय
6.	भाद्रपद	शून्य	12.	फाल्गुन	धनप्राप्ति

गृहारम्भेविदिग्वस्थितं राहुमुखं-

सिंहात्त्रि३त्रि३रिहालये हरदिशः कोणेषु सव्यं
भ्रमेच्छेषस्याननपृष्ठपुच्छमपरं शून्य च खातं शुभम्।
मीनाद्देवगृहेऽपसव्यमृषभाद्वेद्यां च चापादगुः
सव्यं पूर्वदिशः क्रमेण तमसि द्वारं न सत्सम्मुखे॥ ३६॥

महादेवटीकया- सिंहादिति। इहालये गृहे सत् सिंहात् त्रिषु तिसृषु सङ्क्रान्तिषु हरदिशः ईशानकोणतः सव्यं सव्येन शेषस्य शेषनागस्याननं पृष्ठं पुच्छं भ्रमेत् अपरं शून्यं तच्छून्यदिशि खातं शुभं सिंहकन्यातुलासङ्क्रान्तिषु शेषस्येशानकोणे मुखम् आग्नेय्यां पृष्ठं नैर्ऋतौ पुच्छं वायव्ये शून्यं तत्र खातं कर्तव्यम्। एवं वृश्चिकादिषु तिसृषु सङ्क्रान्तिषु वह्निकोणे मुखं नैर्ऋतिकोणे पृष्ठं वायव्ये पुच्छम् ईशाने खातः। एवं कुम्भादितिसृषु नैर्ऋतौ मुखं वायव्ये पृष्ठम् ईशाने पुच्छम् आग्नेयां खातः। एवं देवगृहे मीनात्त्रयं त्रयं गणनीयं जलाशये मकरादेवमेव गणनीयम्। तथा च मुहूर्तचिन्तामणौ *(१२, १९)*-

'देवालये गेहविधौ जलाशये शेषाननं शम्भुदिशः क्रमेण।
मीनार्कसिंहार्कमृगार्कतस्त्रिभे खाते मुखात्पृष्ठविदिक्षु भावयेत्॥'

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

दैवज्ञवल्लभेऽपि-

'ऐन्द्र्या शिरो भाद्रपदात्त्रये च याम्ये तु मार्गात्त्रितयेऽहिवक्त्रम्।

तपस्यमासात्त्रिषु पश्चिमायां ज्येष्ठादिमासात्त्रितयेऽप्युदकूस्यात्॥'

इति यत्कन्यादिगणना कृता तद्वास्तुशास्त्रोक्ता।

'प्राच्या नागमुखं बुधैर्निगदितं भाद्राश्विने कार्तिके

मार्गात्फाल्गुनशुक्रतस्त्रिषु मुखं याम्ये जले चोत्तरे।

क्षेत्रेऽष्टाष्टविभाजिते दिनकराद्वाराल्लिखेत्कोष्ठकाः

शन्यङ्गारयोश्च तत्र फणिनः शारीरतो नो खनेत्॥'

इति राजवल्लभोक्तम् *(१, २३)*।

'पूर्वास्ये निखातकं यमदिशास्ये खातमीशानके

आग्नेय्यां खननं च पश्चिमदिशावक्त्रे तथैवोत्तरे।

वक्त्रे नैर्ऋतिकोणके च खननं वा शङ्कु संस्थापनम्'

इत्युक्तिवशात् परं च भाद्रपदः श्रावणपूर्णिमातस्तदा तुं सिंहसङ्क्रान्तिसम्भवात् रामदैवज्ञादिभिमुहूर्तचिन्तामणौ सिंहादितो गणना कृता अथ ऋषभात् वृषभराशितोऽपसव्य वामभ्रमेण गणना। वेद्यां विवाहवेद्यां मण्डपवेद्यां वा श्रोताधानवेद्यां खननमुक्तम्। अन्यच्च-

'वृषाद्वेद्यां गृहे सिंहात्त्रिकं मीनात्सुरालये।

सृष्ट्या सञ्चरते नागो वेदीरुद्रालयं विना॥'

अत्रे खाते बहवो भ्रमन्ति वलनं च कुर्वन्ति। राजवल्लभोक्तम् चतुःषष्टिकोष्ठगतं भौमशनिगतफणिनः शरीरे नो खनेत् अत्र सिंहादित्रये पूर्वमुखे नागे वायव्ये शून्यमायाति उत्तराभिमुखे नैर्ऋतिकोणे शून्यमायाति इत्यलं चापधन्वर्कात्त्रयेऽप्यगुः राहुः पूर्वदिशः सकाशात् क्रमेण भ्रमति तमसि राहौ सम्मुखं द्वारं न सत्॥ ३६॥

र	चं	मं	बु	गु	शु	श	र
चं	मं	बु	गु	शु	श	र	चं
मं	बु	गु	शु	श	र	चं	मं
बु	गु	शु	श	र	चं	मं	बु
गु	शु	श	र	चं	मं	बु	गु

ईशाने		अग्नि	ईशाने		अग्नि
५,६,७		८,९,१०	२,३,४		११,१२,१
		गृह खात			वेद्यां तत्खात

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

शु	श	र	चं	मं	बु	गु	शु						
श	र	चं	मं	बु	गु	शु	श	वायव्य		नैर्ऋत	वायव्य		नैर्ऋत
र	चं	मं	बु	गु	शु	श	र	२,३,४		११,१२,१	५,६,७		८,९,१०

मोहनबोधिनी- मानववास्तु या मनुष्यालय के लिए खात करने के सम्बन्ध में कहा जा रहा है कि सिंह से ३, ३ राशियों में सूर्य के रहने पर ईशान कोण में खात करना चाहिए। इस प्रकार राहु मुख, पुच्छ व पीठ पर विचार किया जाना चाहिए। यह सूर्य के सिंहादि से ३,३ राशि सव्य क्रम से परिभ्रमित करता रहता है। यदि सूर्य कन्या, तुला व वृश्चिक में हो तो वास्तु-नाग का मुख पूर्व दिशा में होगा एवं अन्य तीन दिशाओं-दक्षिण, पश्चिम एवं उत्तर में पूँछ, पीठ एवं सिर रहेगा। सूर्य की स्थिति यदि धनु, मकर एवं कुम्भ में हो तो नाग का मुख दक्षिण दिशा में और पूँछ, पीठ व सिर क्रमशः पश्चिम, उत्तर एवं पूर्व दिशा में रहेगा। मीन, मेष एवं वृष राशि में सूर्य की स्थिति हो तो नाग का मुख पश्चिम, कर्क, एवं सिंह की राशि में होने पर नाग वास्तु का मुख उत्तर दिशा में, पूँछ पूर्व, पीठ दक्षिण ओर सिर पश्चिम दिशा में होगा। इस प्रकार यह निर्णय करना चाहिए कि नाग-मुख पर गृहद्वार का निर्माण भयदायक होता है तथा दोनों कुक्षियों पर प्रवेशद्वार की निर्मिति सुख प्रदान करती है। नाग के शरीर के पूर्व भाग एवं शिरोभाग में खनन होने पर दुःख एवं कुक्षि में खनन किए जाने पर सुख-सिद्धि होती है। देवालय के खात प्रकरण में मीन राशि से ३, ३ राशि में सूर्य के रहने पर और जलाशय के लिए मकर से ३,३ राशि में सूर्य के रहने पर क्रम से पूर्वानुसार ईशान कोण से उलटे (ईशान, वायव्य, नैर्ऋत्य, अग्निकोण) में राहु या नाग वास्तु का मुख रहता है और उसके पीछे के कोण में पीठ होती है।

यही मत ज्योतिषचिन्तामणि में गर्गोक्ति के रूप में आया जिसे टोडरानन्द में नीलकण्ठ दैवज्ञ ने उद्धृत किया है कि वेदी के प्रसङ्ग में वृष आदि तीन में, सूर्य के सङ्क्रमण को गिनना चाहिए तथा गृहनिर्माण के लिए सिंहादि की गणना करनी उचित है। देवालय बनाने के लिए मकर से प्रारम्भ्न कर मीन तक गणना करना उचित है-
वृषार्कादित्रिकं वेद्यां सिंहादि गणयेद् गृहे। देवालये च मीनादि तडागे मकरादिकम्॥
(वास्तुसौख्यम १२)

इसी प्रकार वृद्धवशिष्ठ का मत है कि चरवास्तु के लिए सदैव पूजा करना शुभ है। नाग श्रावण मास से तीन-तीन परिभ्रमण करता रहता है। जिस दिशा में नाग का मुख हो, उधर गृह का मुख शुभ होता है अन्य दिशाओं में दुःख और शोककारक

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

जानना चाहिए- चरवास्तु चरत्येवं पूजनीयो गृहाधिपैः। त्रिषु-त्रिषु च मासेषु नभस्यादिषु च क्रमात्॥ यद्दिङ्मुखो वास्तुनरस्तन्मुखं सदनं शुभम्। अन्यदिङ्वक्त्रगेहं तु दुःखशोक भयावहम्॥ (वशिष्ठसंहिता ३९, ५९-६०)

ज्योतिषरत्नमाला में स्पष्ट किया गया है कि गृह निर्माणकर्ता को गृहारम्भ से पूर्व आय, व्यय, नक्षत्र, अंश, चन्द्रमा, ताराबल आदि के सम्बन्ध में विभिन्न शास्त्रों के मतों का भली-भाँति अवलोकन करना चाहिए। उचित विचार से ही गृहस्थ की आयु, धन, आरोग्यता और यश की वृद्धि होती है- आयव्ययर्क्षांशक चन्द्रताराबलानि शास्त्रादवलोक्य सम्यक्। आयुर्धनाऽऽरोग्यमशीभिवृद्ध्यै गृहं गृहस्थो हि निधापयीत॥ (१७, १, विशेष द्रष्टव्य मेरी सम्पादित ज्योतिषरत्नमाला अध्याय १७)

सूत्रधार मण्डनकृत राजवल्लभवास्तुशास्त्रम् में कहा गया है कि भाद्रपद, अश्विन और कार्तिक महीने में नाग का मुख पूर्व में, मार्गशीर्ष, पौष, माघ में दक्षिण में, फाल्गुन, चैत्र, वैशाख में पश्चिम में तथा ज्येष्ठ, आषाढ़ व श्रावण में नाग का मुख उत्तर दिशा में रहता है। नाग के मस्तक पर गृहारम्भ किए जाने से गृहपति के माता-पिता की मृत्यु, पूंछ पर करने से रोग, पीठ पर करने से हानि तथा भय और कुक्षि से गृह निर्माण प्रारंभ करने पर पुत्र व धान्य की प्राप्ति होती है- शीर्षे मातृपितृक्षयस्तद्भितश्चाङ्गे रुजः पुच्छके पृष्ठे दुष्यति दक्षकुक्षिखनने स्यात् पुत्रधान्यादिकम्। पूर्वास्येऽनिलखातनं यममुखे खातं शिवे कारयेच्छीर्षे पश्चिमगे च वह्निखननं सौम्ये खनेन्नैर्ऋते॥ (१, २४)

क्रम	नागमुख दिशा	कहां खुदाई करें
1.	पूर्व मुख	वायव्य कोण
2.	दक्षिण मुख	ईशान कोण
3.	पश्चिम मुख	अग्निकोण
4.	उत्तर मुख	नैर्ऋत्य कोण

फल इस प्रकार होगा-

क्रम	शीर्ष भागादि	फल
1.	शीर्ष भाग पर खनन	माता-पिता की मृत्यु
2.	पूंछ पर खनन	रोग, व्याधि
3.	पीठ पर खनन	हानि, भय
4.	कुक्षि भाग पर खनन	पुत्र, धान्यादि प्राप्ति

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

अथ द्वारादीनां–

याम्योदक्प्रथमालितौलिवृषभे द्वारं सतीने शुभं
प्राक्पश्चाद्घटसिंहकर्किमकरेऽथो वास्तुकुम्भेऽर्कभात्।
षष्ठा६दष्ट८सु भेषु सद्ग्रहमथो द्वाविंशतेः षट् शुभाः
सत्खेटे दशमस्थिते स्थिरगृहं द्व्यङ्गोदये सद्युते॥ ३७॥

महादेवटीकया– याम्योदगिति। प्रथमालितौलिवृषभे प्रथमो मेषः अलिर्वृश्चिकः तौलिः तुला वृषश्च एषां समाहारः तत्र राशिषु इने सूर्ये गते सति याम्योदक् द्वारं शुभम्। घटसिंहकर्किमकरे इने गते सति प्राक् पश्चाद्द्वारं गृहं शुभम्। एतेन वत्सः कथितः। वत्स पूर्वादिषु दिक्षु कन्यादितस्त्रये त्रये वत्सो वसति गृहेषु सम्मुखपृष्ठतो न सत्। उक्तं च–

'अग्रतो हरते आयुः पृष्ठतो हरतो धनम्।
वामदक्षिणयोर्वत्से गृहद्वारं सुशोभनम्॥' *(शिल्पदीपक २, ५०)*

अथो वास्तुकुम्भे वास्तुकलशे अर्कभात् षष्ठात् धिष्ण्यात् अष्टसु भेषु गृहप्रवेशः। अथो अथवा द्वाविंशतेः नक्षत्रात्षट्सु प्रवेशः शुभः। सत्खेटे शुभग्रहे दशमस्थिते स्थिर-राशिलग्ने द्व्यङ्गोदये द्विस्वभावलग्ने सद्युते शुभग्रहयुते लग्ने सति गृहारम्भः कार्यः। इति गृहारम्भः॥ ३७॥

मोहनबोधिनी– अब भवन में द्वार रखने पर विचार किया जा रहा है। मेष, वृश्चिक, तुला व वृष राशियों पर सूर्य संक्रमण हो तो दक्षिण, उत्तर का द्वार रखना शुभ होता है। कुम्भ, सिंह, कर्क व मकर राशियों में सूर्य हो तो आवास में द्वार को पूर्व-पश्चिम रखना चाहिए। अन्य द्विस्वभाव संज्ञक राशियों में द्वार किसी भी दिशा का नहीं रखना चाहिए। इसके लिए (टीका में) वत्सचक्र कहा गया है। वास्तुकलशचक्र में आठ स्थानों पर नक्षत्रों का न्यास किया जाकर गृहप्रवेश की शुभाशुभता को देखना चाहिए। बाईस न्यस्त नक्षत्रों में से छह में प्रवेश शुभ कहा गया है। गृहारम्भ कार्य में शुभग्रह दशम स्थान पर, स्थिर राशि लग्न, द्विस्वभावलग्न, शुभग्रहों की युति पर अवश्य ही विचार किया जाना चाहिए।

वास्तुकार्य में प्रधानता से वत्सचक्र देखने का नियम है। वास्तुकलशचक्र ज्योतिषप्रकाश, मुहूर्तचिन्तामणि आदि ग्रन्थों में दिया गया है। एक ग्रन्थ में कहा गया है कि प्रवेशकाल में सूर्य जिस नक्षत्र में हो, उससे ५, ८, ८, ६ नक्षत्र में प्रवेश नक्षत्र हों

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

पर अशुभ, शुभ, अशुभ, शुभ फल होता है– प्रवेशे कलशेर्कर्क्षात्पञ्चनागाष्ट षट् क्रमात्। अशुभं च शुभं ज्ञेयमशुभं च शुभं तथा॥

स्पष्टार्थ चक्र

५	८	८	६	२७ नक्षत्र
अशुभ	शुभ	अशुभ	शुभ	फल

अथ गृहप्रवेशमुहूर्तः

द्वाश्चक्रं रविभाद्युग$_{४}$ द्वि$_{२}$ जलधि$_{४}$ द्वय$_{२}$ ब्धि$_{४}$ द्वि$_{२}$ वेद$_{४}$ द्वयं$_{२}$
शेषं शीर्षभुजोर्ध्वकोणगणनान्मध्योर्ध्व पार्श्वद्वयम्$_{२}$।
सत्कोणाधरगेन चाथ चरभांशार्कारिरिक्ताः कुहूं
वामेऽर्केऽथ मृदुध्रुवेज्यहरिभे द्वन्द्वे च वासोऽनिले॥ ३८॥

महादेवटीकया– द्वाश्चक्रमिति। रविभाद्द्वाश्चक्रं शीर्षभुजोर्ध्वमस्तकस्वशाखोर्ध्व कोणशाखाकोणगणनात् युगद्विजलधिद्वयब्धिद्विवेदद्वयं लिखेत्। तत्र मध्योर्ध्वपार्श्वद्वये सत्। कोणेषु अधरगतकोणेषु चेद्ध्र द्वारस्थापनसमये समायाति तदोर्ध्वं सम्भयेत्। अथो देहल्यां धनहानिः स्यात्। अथ चरभांशार्कारिरिक्ताः कुहूममावास्यां त्यक्त्वा वामेऽर्के सति अत्र गृहे वासः कर्तव्यः। क्व मृदुध्रुवेज्यहरिभद्वन्द्वेऽनिले मृदूनि चित्रारेवत्यनुराधाः ध्रुवाणि रोहिण्युत्तरत्रयाणि ईज्य पुष्यं हरिभद्वन्द्व श्रवणधनिष्ठे अनिले स्वातौ। वामार्कस्तु बहुधाप्रोक्तः। एक प्रकारस्तु कार्शानवात्ससससनक्षत्राणि चतुर्दिक्षु लिखेत्। तत्र धिष्ण्ये रविर्भवेत्। द्वितीय प्रकारस्तु–

'दग्धा द्विगुक्ता रविणा प्रभुक्ता यस्यां रविर्यास्यति धूमिता सा।
दीप्तार्कयुक्ता रजनीभवान्त्ययामार्धतो याममिता गति स्यात्॥'

तृतीय प्रकारस्तु– लग्नकुण्डलिकायां लग्नद्वितीयद्वादशेषु यो ग्रहः स पूर्वगः एकादशदशमनवमेषु दक्षिणगः अष्टसप्तमषष्ठेषु पश्चिमगः पञ्चमचतुर्थतृतीयेषूत्तरगः एवं क्रमेण रविमानयन्ति॥ ३८॥

मोहनबोधिनी– अब द्वारशाखाचक्र कहा जा रहा है। सूर्य नक्षत्र से ४, २, ४, २, ४, २, ४, २ और अन्य ३ के क्रमानुसार गिने। उसमें चार नक्षत्र द्वारशाखा के ऊपर

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

रखें, दो-दो नक्षत्र चारों कोणों में न्यास करें। दोनों शाखाओं में चार-चार नक्षत्र रखें। मध्य में चार नक्षत्र रखें और इसका फलाफल जानने का उपक्रम करें। आशय यह है कि सूर्य के नक्षत्र से चान्द्र नक्षत्र तक गणना करें और यदि पच्चीसवें नक्षत्र के उपरान्त द्वार का निम्नस्थ हो तब प्रवेश किया जाना शुभ होता है। गृहप्रवेश के समय चर सूर्य का २९वाँ अंश , रविवार, भौम, रिक्तातिथि (४, ९, १४), अमावस्या को त्याग दिया जाना उचित है। वामार्क आदि के त्याग पर विचार किया जाना चाहिए। उत्तरायण सूर्य हों, मृदुसंज्ञक नक्षत्र (मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा), ध्रुव संज्ञक नक्षत्र (उत्तरात्रय व रोहिणी), पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा, स्वाती नक्षत्रों में निवास प्रशस्त होता है।

टीका में दग्धादि सूर्य की दिशाओं को देखने का निर्देश है जो कि शकुनादि में प्रयुक्त है। रात्रि के अन्तिम प्रहर से चार घण्टा दिन तक सूर्य पूर्व में रहे तो ईशानकोण को दग्धा समझना चाहिए। इस समय पूर्व में ज्वाला होती है। इसी तरह अग्निकोण धूमिता (धुआं वाली), उत्तर भस्मयुत और शेष सभी चारों दिशाएँ एवं कोण शान्त होते हैं। जिस दिशा या कोण में सूर्य रहे, उस दिशा में ज्वाला जिस ओर हो, उसे दग्धा जानें। इस दग्धा दिशा या दग्ध कोण के आगे की दिशा या कोण को भस्मयुता समझें। यदि चार घण्टा दिन चढ़ने तक सूर्य अग्निकोण में हो तो उस कोण में ज्वाला समझें और पूर्व दिशा को दग्ध समझें। ईशानकोण भस्मयुत समझें और इस दौरान दक्षिण दिशा धुआँ वाली समझें। सभी कार्यों में शान्त दिशा या कोण में शकुन हो तो श्रेष्ठ समझें, लेकिन भयादिक के कारण दिस दिशा में शकुन हो तो श्रेष्ठ नहीं होते हैं। (यह विचार अग्निपुराण राजवल्लभवास्तुशास्त्रम् तथा बृहत्संहिता में आया है।) इसी प्रकार गृहप्रवेशावधि की कुण्डली बनाकर देखें कि जो ग्रह आलग्र, दूसरे और बारहवें में हों वह पूर्व में जाने वाले; ११, १० और ९वें स्थान के ग्रह दक्षिण; ८, ७, ६वें स्थानस्थ ग्रह पश्चिम और इसी प्रकार ५, ४, ३ स्थानस्थ ग्रह उत्तर दिशागत माने गए हैं। ऐसे में सूर्य को सदा ही वाम भाग में रखते हुए गृह प्रवेश करना चाहिए।

इसी प्रकार द्वारशाखा चक्र अन्यत्र भी समझाया गया है कि जिसमें अधस्थान पर तीन नक्षत्र न्यास करने का निर्देश है। इसके अनुसार फल इस प्रकार बताया गया है कि ऊपर के चार नक्षत्र में द्वारशाखा का रोपण किए जाने पर राज्य प्राप्ति, कोणों में दो-दो नक्षत्र उद्वेगकारक जानें, शाखाओं के चार-चार नक्षत्रों में लक्ष्मी प्राप्ति तथा मध्य के चार नक्षत्र में द्वारशाखा रखें तो राज्यप्रदायक है। नीचे के तीन नक्षत्र मरणप्रद कहे गए हैं-अर्काच्चत्वारि ऋक्षाणि ऊर्ध्वे चैव प्रदापयेत्। द्वौ-द्वौ कोणेषु दद्याद्वै शाखायां च

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

चतुश्चतुः॥ अधश्च त्रीणि देयानि मध्ये चत्वारि दापयेत्। ऊर्ध्वं तु लभते राज्यमुद्वेगः कोणकेषु च। शाखायां लभते लक्ष्मीं मध्ये राज्यप्रदं तथा। अधस्थे मरणं प्रोक्तं द्वारचक्रं प्रकीर्तितम्॥ (वेधवास्तु, पृष्ठ १०५ तथा बालबोधज्योतिषसारसंग्रह, पृष्ठ ३६)

ज्योतिर्विदाभरण में कालिदासदैवज्ञ का मत है कि सूर्य जिस नक्षत्र में हो, उससे द्वार के ऊपरी भाग या उत्तुरङ्ग से ४, ४, २, ४, २, २, ४, २, ३ नक्षत्रों का न्यास समस्त दिशाओं में द्वार बनाने पर करना चाहिए, इसमें कोणस्थ व देहरी के नक्षत्र में द्वार बनाना अशुभ होता है- दिनकरकिरणाक्रान्तर्क्षतो द्वारचक्रे युगगुगयमवेदद्विद्वि वेदद्विरामैः। मितमुडुगणभागं विन्यसेदूर्ध्वतान्तर्नियममखिलदिङ्नाप्यधः कोणभं सत्॥ (१६, ५५)

इसी प्रकार रामदैवज्ञ ने फलाफल बताया कि सिर के ४, कोण के ८, शाखा के ८, देहरी के ३ तथा मध्य के ४ नक्षत्र क्रमशः धनागम, उद्वास, सौख्य, मरण तथा सुखकारक होते हैं- सूर्यर्क्षायुगभैः शिरस्यथफलं लक्ष्मीः ततः कोणभैर्नागैरुद्वसनं ततो गजमितैः शाखासु सौख्यं भवेत्। देहल्यां गुणभैर्मृतिगृहपतेर्मध्यस्थितेर्वेदभैः सौख्यं चक्रमिदं विलोक्य सुधिया द्वारं विधेयं शुभम्॥ (मुहूर्तचिन्तामणि १२, २९)

प्रवेश के विषय में रामदैवज्ञ का भी उक्त मत ही है- सौम्यायने ज्येष्ठतपोऽन्त्यमाधवे यात्रानिवृत्तौ नृपतेर्नवे गृहे। स्याद्वेशनं द्वाःस्थमृदुध्रुवोडुभिर्जन्मर्क्षलग्नोपचयोदये स्थिरे॥ (तदैव १३, १)

स्पष्टार्थचक्र

कोण	१-४ मस्तक	कोण
११-१२	शाखा	५-६
शाखा		शाखा
	२४-२७	
१९-२०		१५-१६
	१७-१८	
९-१०	शाखा	७-८
कोण	२१-२३ देहरी	कोण

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

अथ हलारम्भः

द्वीशे मूललघुध्रुवे मृदुचरे पैत्र्ये हलारम्भणं त्यक्त्वा
मन्दकुजौ हरिद्युसहितां रिक्तां च पर्वाष्टमीम्।
तच्चक्रे रविभुक्तभाद्गणनया त्री$_{३}$षु$_{५}$त्रि$_{३}$बाण$_{५}$त्रयं$_{३}$त्री$_{३}$
ष्वृ$_{५}$क्षेष्वशुभं शुभं फलमिहाशाशूलपूर्वं त्यजेत्॥ ३९॥

महादेवटीकया- द्वीश इति। द्वीशे मूललघुध्रुवे मृदुचरे पैत्र्ये हलारम्भणं के ते द्वीशे विशाखायां मूलं प्रसिद्धं हस्तपुष्याश्व्यभिजित् ध्रुवाणि रोहिण्युत्तरात्रयाणि मृदुनि चित्रारेवत्यनुराधाः चरभानि स्वातिपुनर्वसुश्रवणधनिष्ठाः पैत्र्यं मघा एतेषु ऋक्षेषु हलारम्भणं हलप्रवहणं कार्यम्। मन्दकुजौ वारौ द्वादशीसहिता रिक्तां पर्वणी पूर्णिमामावास्ये अष्टमीं च त्यक्त्वा।

अथ तच्चक्रे हलचक्रे रवेः सूर्यस्य भुक्तभात् गणना कार्या, त्रि त्रीणि इषवः पञ्च त्रि त्रीणि बाणाः पञ्च त्रयं त्रिणि त्रि त्रीणि इषु पञ्च ऋक्षेषु नक्षत्रेषु फलं शुभमशुभम् ज्ञेयम्। इह गमने आशाशूलपूर्वं दिक्शूलं वारशूलं त्यजेत्॥ ३९॥

मोहनबोधिनी- अब कृषिकार्य में हल चलाने का मुहूर्त दिया जा रहा है। विशाखा, मूल, हस्त, पुष्य, अश्विनी, अभिजित्, रोहिणी व उत्तरात्रय, चित्रा, रेवती, अनुराधा, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा और मघा नक्षत्रों में खेतों में हल प्रवाह किया जाना शुभ कहा गया है। इस कार्य में शनिवार, मङ्गलवार, द्वादशी सहित रिक्तातिथि (४, ९, १४), पर्वतिथियाँ पूर्णिमा, अमावस्या और अष्टमी का त्याग कर दिया जाना चाहिए। हलप्रवहणावसर पर हलचक्र का अवलोकन करें जिसमें सूर्य के नक्षत्र से भुक्त नक्षत्र तक गणना करें, तीन, पाँच, तीन, पाँच, तीन-तीन व पाँच नक्षत्रों का न्यास करते हुए शुभाशुभ फल को जाने। फलाफल क्रमशः शुभ, अशुभ, शुभ, अशुभ, शुभ, अशुभ और शुभ होता है। हल प्रवाह के लिए गमन करते समय दिशाशूल, वारशूल का भी त्याग करें।

दैवज्ञभानुनाथकृत 'व्यवहाररत्नम्' में ३, ५, ७, १०, ११, १३ ये तिथियाँ प्रथम हलप्रवाह के लिए शुभ बताई हैं। मृदु, ध्रुव, क्षिप्र, चर संज्ञक तथा मूल, मघा, विशाखा, इन नक्षत्रों में स्वस्थ साँड को हल में जोतकर हल चलाना शुभ होता है। कृषक को चाहिए कि विष्कुम्भ, वज्र, व्यतिपात, गण्ड, अतिगण्ड योगों और भौम तथा शनिवार

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

को छोड़कर दूसरे योगों, वारों में दूर्वा, चन्दन, अक्षत आदि पूजाद्रव्यों से हल का पूजन करे व प्रवाह करें- सप्तम्येकादशी चैव पञ्चमी दशमी तथा। त्रयोदशी तृतीया च प्रशस्ता हलकर्म्मणि॥ मृदु-ध्रुव-क्षिप्र-चरेषु मूल-मघा-विशाखासहितेषु भेषु। हलप्रवाहं प्रथमं विदध्यानि रोगमुष्कान्विसौरभेयैः॥ विष्कुम्भ-वज्र-व्यतिपात-गण्डाऽतिगण्डा-मन्दारदिनं विहाय। सम्पूज्य दूर्वाक्षगन्ध- पुष्पैर्हलं विदध्यात् कृषिकर्म्मकर्ता॥ (३, २-४)

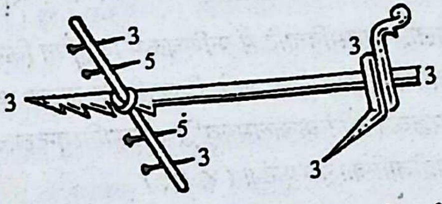

दिक्शूल, विदिक्शूल- शनिवार और सोमवार को पूर्व दिशा में, गुरुवार को दक्षिण, रवि व शुक्र को पश्चिम तथा बुध व मङ्गलवार को उत्तर दिशा में शूल रहता है अतः गमन नहीं करना चाहिए। मङ्गलवार को वायव्यकोण में न जाएँ, बुध व शनि को ईशान, शुक्र व रवि को नैर्ऋत्य तथा गुरु व सोमवार को आग्नेय कोण में नहीं जाना चाहिए- शनौ चन्द्रे त्यजेतपूर्वां दक्षिणां च दिशं गुरौ। सूर्ये शुक्रे पश्चिमां बुधे भौमे तथोत्तराम्॥ मङ्गले मारुते शूलमीशाने बुधमन्दयोः। नैर्ऋते शुक्रसूर्याभ्यामाग्नेयां गुरुचन्द्रयोः॥

अथ बीजोप्तिमुहूर्तः

मैत्रान्त्ये वसुभे करत्रयमघामूलाश्विचान्द्रे ध्रुवे पुष्ये
सत्खलु बीजवापनमहेश्चक्रे रवेर्भुक्तभात्।
त्रि$_3$स्त्रि$_3$मूर्ध्नि गले न शोभनफले तुन्देऽर्क$_{12}$ताराः शुभाः
पुच्छेऽन्यत्र चतुष्क$_4$पञ्चक$_5$ इमे बीजोप्तिकाले खले॥ ४०॥

महादेवीटीकया- मैत्रेति। एषु योगेषु बीजवपनं सत्। केषु मैत्रे अनुराधायां अन्त्ये रेवत्यां वसुभे धनिष्ठायां करत्रये हस्तचित्रास्वातौ मघायां मूले अश्विन्यां चान्द्रे मृगे ध्रुवे रोहिण्युत्तरासु पुष्ये अहेश्चक्रे सर्पाकारचक्रे रवेर्भुक्तभात् त्रिस्त्रिर्मूर्ध्नि त्रीणि गले शोभनफले न, तुन्दे जठरे अर्कतारा द्वादश धिष्ण्यानि शुभाः पुच्छेऽन्यत्र चतुष्कपञ्चके पुच्छे चतुष्कं अन्यत्र बहिः पञ्चकं इमे बीजोप्तिकाले खले दुष्टफले भवतः॥ ४०॥

मोहनबोधिनी- खेत के अनाज की बुवाई के लिए अनुराधा, धनिष्ठा, मघा,

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

मूल, मृगशिरा, रेवती, चित्रा, तीनों उत्तरा, रोहिणी, स्वाती, हस्त, अश्विनी और पुष्य नक्षत्रों को ग्रहण करना चाहिए। बीजारोपण के अवसर पर सर्पाकारचक्र देखना चाहिए। इसके लिए सूर्य के नक्षत्र से दिन के नक्षत्र तक गिनें व प्रथम तीन नक्षत्र सिर पर जानकर धान्य का नाश जानें। बाद में तीन नक्षत्र कण्ठ में रखें जिनका फल अशुभ होता है। इसके बाद बारह नक्षत्र उदर में होते हैं जो धान्यवृद्धि को दर्शाते हैं जबकि पुच्छ के चार नक्षत्र अशुभ होते हैं। इसी प्रकार अन्त के पाँच नक्षत्र धान्यनाशक सूचक होते हैं।

ज्योतिषरत्नमाला, नारदसंहितादि में फणिचक्रम् विश्लेषित किया गया है। श्रीपति का कथन है-मूर्ध्नि त्रीणि गल त्रयं च जठरे धिष्ण्यानि च द्वादश स्यात्पुच्छे भचतुष्टयं बहिरतो भानां स्थितं पञ्चकं। कीटं कज्जलमत्रवृद्धि रधिकानिस्तुन्दलत्वं क्रमात् स्यादीति प्रभवं भयं च फणिभाद्बीजोप्तिकाले स्फुटं॥ (४, ४३)

बीजोप्तौ फणिचक्रम्-

स्थान	शीर्ष	कण्ठ	उदर	पुच्छ	बहिः
नक्षत्र	३	३	१२	४	५
फल	धान्यनाश	अशुभ	वृद्धि	अशुभ	धान्यनाश

अथौषधदान-रोगिस्नानमुहूर्तः

पौष्णऽश्वेऽदितिभद्वये च शशिभे हस्ताच्च कर्णात्त्रये
मैत्रे कोणपभे सदौषधमथ त्यक्त्वा च रिक्तार्कजान्।
तत्स्नानं चरभाङ्गयोरिनकुजे रिक्तासु कृष्णे दले
शुक्रेन्दुध्रुवसार्प पौष्णपितृभादित्यानिलर्क्षं त्यजेत्॥ ४१॥

महादेवीटीकया- पौष्ण इति। एषु योगेषु औषधं सत्। एषु केषु पौष्णे रेवत्यां अश्वे अश्विन्याम् अदितिभद्वये पुनर्वसुपुष्ये शशिभे मृगे हस्तात्त्रये हस्तचित्रास्वातौ कर्णात्त्रये श्रवणधनिष्ठाशतभिषक्षु मैत्रे अनुराधायां कोणपभे मूले। किं कृत्वा रिक्तार्कजान् त्यक्त्वा औषधं सद्भवति इति शेषः। तस्य रोगिणः स्नानं चरभाङ्गयोः चरभेषु स्वात्यादित्यहरित्रये चरलग्ने मेषकर्कतुलाकरेषु इनकुजे सूर्यभौमवारे रिक्तासु तिथिषु कृष्णे दले कृष्णपक्षे अत्रापि शुभचन्द्रे। रत्नमालायां *(४, ५२)* यदुक्तम्-

'रिक्तातिथौ चन्द्रबलेविहीने' इत्यत्र चन्द्रबले स्वकीये नैसर्गिकबले क्षीणचन्द्र

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

इत्यर्थः। तत्र शुक्रवारं चन्द्रवारं ध्रुवभानि सार्पमाश्लेषां पौष्णं रेवती पितृभं मघान् आदित्यं पुनर्वसुम् अनिलर्क्षं स्वातीं त्यजेत्॥ ४१॥

मोहनबोधिनी- औषधदान के मुहूर्त के लिए कहा गया है कि रेवती, अश्विनी, पुनर्वसु, पुष्य, मृगशिरा, हस्त, चित्रा, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, अनुराधा व मूल नक्षत्रों में; रिक्तातिथि (४, ९, १४), शनि व मङ्गलवार को छोड़कर औषध को दिया जाना प्रशस्त होता है। इसी प्रकार रोग निर्वृत्त्योपरान्त व्यक्ति को स्नान कब करवाएँ, इसके लिए कहा गया है कि चरनक्षत्र (पुनर्वसु, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा), स्वाती, शतभिषा, चरलग्न या मेष, कर्क, तुला, मकर लग्न में, रविवार, भौमवार व रिक्ता तिथि (४, ९, १४), कृष्णपक्ष होना चाहिए। शुभचन्द्रमा को देखना चाहिए किन्तु सोमवार, शुक्रवार और रोहिणी, उत्तरात्रय, आश्लेषा, रेवती, मघा, पुनर्वसु, कृत्तिका एवं स्वाती नक्षत्र रोगी के नहाने में त्याज्य जानना चाहिए।

शुकदेवकृत ज्योतिषसार में कहा गया है कि सोम, शुक्रवार एवं ध्रुव नक्षत्र- रोहिणी, तीनों उत्तरा और आश्लेषा, पुनर्वसु, स्वाती नक्षत्र रोगमुक्तिस्नान में शुभ है जबकि मघा, रेवती में रोगी का स्नान अयोग्य एवं दुःखदायक होता है- इन्दोर्वारे भार्गवे च ध्रुवेषु सर्पादित्यस्वातियुक्तेषु भेषु। पित्र्ये चान्त्ये चैव कुर्यात्कदाचिन्नैव स्नानं रोगमुक्तस्य जन्तोः॥ (पृष्ठ २७ एवं रत्नमाला का नक्षत्रप्रकरण)

इसी प्रकार कहा गया है कि मेष, कर्क, तुला व मकर इन चार लग्नों, रविवार, भौम, गुरुवार और रिक्ता तिथि और चन्द्रबलहीन हो, केन्द्र तथा त्रिकोण में पापग्रह हों, ऐसे लग्न में स्नान कराएं तो आरोग्य होता है- लग्ने चरे सूर्यकुजेज्यवारे रिक्तातिथौ चन्द्रबले च हीने। केन्द्रत्रिकोणार्थगते च पापे स्नानं हितं रोगविमुक्तिकानाम्॥ (वही)

अथ सङ्क्रान्ति-

घोरा क्रूररवौ लघूडुशशिनि ध्वाङ्क्षी महोदर्यथो
क्षोणीजे चरभे मृदुज्ञदिवसे मन्दाकिनीज्ये ध्रुवे।
मन्दा मिश्रसिते च मिश्रकथनात्तीक्ष्णार्कजे राक्षसी
श्रेष्ठा शूद्रकवैश्यचौरनृपविट्पश्वन्त्यजानां क्रमात्॥ ४२॥

महादेवटीकया- घोरेति। क्रूरेषु रविवारे या सङ्क्रान्तिः सा घोरा भवति, लघूडुषु शशिनि ध्वाङ्क्षी भवति, क्षोणीजे भौमवारे चरभेषु या सङ्क्रान्तिः सा महोदरी भवति,

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

मृदुभेषु ज्ञदिवसे या सङ्क्रान्तिः सा मन्दाकिनी भवति, इज्ये गुरुवारे ध्रुवभेषु या सङ्क्रान्तिः सा मन्दा भवति, मिश्रभे सिते या सङ्क्रान्तिः सा मिश्रा भवति, तीक्ष्णभेषु शनिवारे या सङ्क्रान्तिः सा राक्षसीनाम्नी भवति। एवमत्र युगपद्वारभयोगे सम्पूर्णनाद्वयोः अन्यथा त्वेकवारवशाद्भिन्नाम तदा नामद्वयं भवति। क्रमेण सप्तापि सङ्क्रान्तयः शूद्रवैश्यचौरक्षत्रिय-द्विजपशुम्लेच्छानां सा शुभा भवति। घोरा शूद्रान् सुखयति, ध्वाङ्क्षी वैश्यान् सुखयति, महोदरी चौरान् सुखयति, मन्दाकिनी नृपान् सुखयति, मन्दा द्विजान् सुखयति, मिश्रा पशून्सुखयति, राक्षस्यन्त्यजान् सुखयति॥ ४२॥

मोहनबोधिनी- सङ्क्रान्ति के नाम नक्षत्र एवं वारानुसार होते हैं। ये तदनुसार ही शूद्रादि वर्णों के लिए शुभ फल देने वाली होती है। इनको इस प्रकार समझा जा सकता है-

सङ्क्रान्तिफलज्ञानसारणी-

वार	नक्षत्र	संज्ञा	फल
रवि	क्रूर (पूर्वात्रय, भरणी, मघा)	घोरा	शूद्रों को सुख
सोम	लघु (हस्त, पुष्य, अभि., अश्विनी)	ध्वांक्षी	वैश्य सुख
मङ्गल	चर (स्वा., पुन., श्रवण, धनिष्ठा, शत.)	महोदरी	चोरों को सुख
बुध	मैत्र (मृग., रेवती, चित्रा, अनुराधा)	मन्दाकिनी	क्षत्रिय सुख
गुरु	स्थिर (तीनों उत्तरा, रोहिणी)	मन्दा	विप्र को सुख
शुक्र	मिश्र (विशाखा, कृत्तिका)	मिश्रा	पशु सुख
शनि	तीक्ष्ण (मूल, आर्द्रा, ज्येष्ठा, आश्लेषा)	राक्षसी	अन्त्यज सुख

इस सम्बन्ध में कश्यप की उक्ति है- घोरा ध्वाङ्क्षी महोदर्यो मन्दा मन्दाकिनी तथा। मिश्रा राक्षसिका सूर्यसङ्क्रान्तिश्चार्कवासरात्॥ (पीयूषधाराटीका ३, १ पर उद्धृत)

श्रीपति का कथन है कि पूर्व राशि को त्यागकर सूर्य जब अन्य राशि में गमन करता है तो उसे सङ्क्रांति कहा जाता है। वारानुसार सङ्क्रान्ति के नाम हैं- रविवार को घोरा, सोम में ध्वाङ्क्षी, भौमवार में महोदरी, बुध में मन्दाकिनी, गुरु में मन्दा, शुक्र में मिश्रा और शनिवार में सङ्क्रान्ति राक्षसी संज्ञा- घोरा रवौ ध्वाङ्क्ष्यमृतद्युतौ च सङ्क्रान्तिवारे च महोदरी स्यात्। मन्दाकिनी ज्ञे च गुरौ च मन्दा मिश्रा भृगौ राक्षसी चार्कपुत्रे॥ (९,१)

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

ज्योतिर्निबन्धकार का भी यही मत है- सूर्ये घोरा विधौ ध्वाङ्क्षी भौमवारे महोदरी। बुधे मन्दाकिनी ज्ञेया मन्दाख्या देवमन्त्रिणी॥ मिश्राभिधा कवेर्वार ज्ञेया क्रूरवारे राक्षसी स्यादिनात्मजे। केचिदाहुरिने ध्वाङ्क्षी घोराऽरेब्जे महोदरी॥ (ज्योतिर्निबन्ध पृष्ठ १३, १-२)

वृद्धवशिष्ठ का मत है- घोरोग्रर्क्षे ध्वाङ्क्षी लघुभे महोदरी मृदुभे। मन्दकिनी चरर्क्षे मन्दा मिश्रे च राक्षसी तीक्ष्णे॥ (वशिष्ठसंहिता १९, ३२)

सङ्क्रान्तिपुण्यकालः

द्व्यङ्गर्क्षे षडशीतिवक्त्रमयनं सौम्यं मृगे चोत्तरा
नाड्यः षोडश पुण्यदाश्च विषुवन्मेषे तथा तौलिनि।
मध्याः पुण्यतमाः स्थिरे हरिपदं याम्यायनं कर्कटे
पूर्वाः पुण्यतमाश्च तत्र तिलयुग्धान्यं घृतं चार्पयेत्॥ ४३॥

महादेवटीकया- द्व्यङ्गर्क्षे इति। द्व्यङ्गर्क्षे द्विस्वभावराशौ या सङ्क्रान्तिः तस्याः षडशीतिवक्त्रं द्विस्वभावराशयो मिथुनकन्याधनुर्मीनाः एताः षड्शीतिमुखाभिधाः। मृगे मकरे या सङ्क्रान्तिः तत्सौम्यायनं भवति। अत्र पञ्चसङ्क्रान्तिषु उत्तराः सङ्क्रान्ति-कालात्पराः षोडश नाड्यो घटिकाः पुण्यदाः। इदं साधारणेन कथितम् (ज्योतिषरत्नमाला ९, ९)-

'पूर्वतोऽपि परतोऽपि सङ्क्रमात्पुण्यकालघटिकास्तु षोडश।'

इति वचनात्। अन्यथां अनयोर्विशेष उक्तः ब्रह्मवैवर्तादौ-

'अतीतानागते पुण्ये द्वे उदग्दक्षिणायने।
त्रिंशत्कर्कटके नाड्यो मकरे तु दशाधिकाः॥'

इति मकरे चत्वारिंशत् घटिका उक्ताः। मेषे तथा तौलिनि तुलायां सङ्क्रान्तिषु विषुवत्यां तत्र मध्याः पुण्यतमाः विशेषवचनात् दश प्रोक्ता वर्तन्ते।

'वर्त्तमाने तुलामेषे नाड्यास्तूभयतो दश'

इति वचनात्। स्थिरे स्थिरराशौ वृषसिंहवृश्चिककुम्भसङ्क्रान्तिषु हरिपदं भवति। कर्कटे याम्यायनं भवति। तत्र पूर्वाः सङ्क्रान्तितः प्राक् त्रिंशन्नाड्यः पुण्यदाः। तत्र सङ्क्रमकाले तिलान् धान्य घृतं अर्पयेत्। तथा चोक्तम्-

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

'सङ्क्रान्तौ यानि दानानि हव्यकव्यानि भारत।
तानि तान्युपतिष्ठन्ति पितृणामक्षयाय च॥'
इति व्यास॥ ४३॥

मोहनबोधिनी– सङ्क्रान्तियों में द्विस्वभावसंज्ञक राशियों– धनु, मिथुन, कन्या और मीन का नाम षडशीतिवक्त्र या षडशीत्यानन होता है। तुला और मेष दोनों की संज्ञा विषुवसंज्ञा होती है। सिंह, वृश्चिक, वृष, कुम्भ (स्थिरसंज्ञक) राशियों की सङ्क्रान्ति को हरिपद या विष्णुपद कहा जाता है। याम्यायन (कर्क) सङ्क्रान्ति और विष्णुपद (वृष, सिंह, वृश्चिक, कुम्भ राशियों की) सङ्क्रान्तियों का पुण्यकाल सङ्क्रान्ति लगने से पूर्व होता है, तुला, मेष, सङ्क्रान्ति का पुण्यकाल मध्य में (या सङ्क्रान्तिकाल से पहले और बाद, दोनों ही काल में) तथा षडशीत्यानन (३, ६, ९, १२ राशियों) और सौम्यायन (मकर) राशि की सङ्क्रान्तियों का पुण्यकाल सङ्क्रान्ति लगने के बाद होता है। ज्ञातव्य है कि सूर्य सङ्क्रान्ति काल से पहले और बाद में १६,१६ घटी अथवा ३२ घटी पुण्यकाल होता है। यदि अर्द्धरात्रि के पहले सङ्क्रान्ति लगे तो पूर्व के दिन के उत्तरार्द्ध (अथवा १२ बजे से सूर्यस्त तक) और अर्द्ध रात्रि के बाद सङ्क्रान्ति लगे तो दिन के पूर्व भाग (सूर्योदय से १२ बजे तक) तक पुण्यकाल होता है।

वृद्धवशिष्ठ का मत है– स्थिरराशिषु विष्णुपदं षडशीतिमुखं यद्युभयभे चैव। मृगकर्कटसङ्क्रान्ति ह्युदगयनं दक्षिणायनं चैव॥ अजघट सङ्क्रान्तिद्वयं विषुवत् प्रकीर्तितं नित्यम्॥ (वशिष्ठसंहिता १९, १४–१५)

ज्योतिषरत्नमाला में कहा गया है कि याम्यायन (कर्क), विष्णुपद (वृष, सिंह, वृश्चिक और कुम्भ) की सङ्क्रान्तियों में सङ्क्रमण काल से पूर्व की सोलह घटी अथवा छह घण्टे चौबीस मिनिट स्नान में अधिक पुण्यदायी है। तुला एवं मेष सङ्क्रान्तियों में मध्य की अथवा आठ पहले और आठ पश्चात की तथा षडशीत्यायन (मिथुन, कन्या, धनु, मीन) एवं सौम्यायन (मकर) की सङ्क्रान्तियों में बाद की सोलह घटी पुण्य प्रदायक होती है– याम्यायने विष्णुपदे तदादौ दानाद्यनन्तं विषुवे च मध्ये। वदन्त्यतो ते षडशीतिवक्त्रे महर्षयः खल्वयने च सौम्ये॥ (९, १२)

वृद्धवशिष्ठ का मत है– हरिपदयाम्यत्वयने पूर्वदिनं स्नानदानयोः पुण्यं। षडशीतिमुखे त्वयने सौम्ये पुण्यं च परदिनं निशि चेत्॥ (वशिष्ठसंहिता १९, १६)

सङ्क्रान्ति से पूर्व और पश्चात् १६ घटी पुण्य काल माना जाता है अर्थात् १६

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

घटी पहिले व १६ ही घटी बाद में, कुल ३२ घटी का पुण्यकाल होता है। यदि अर्द्धरात्रि के बाद सङ्क्रान्ति हो तो पुण्यकाल दूसरे दिन होता है। जब समस्त सङ्क्रान्तियाँ अर्द्धरात्रि में होती है, तो स्नान-दान में पूर्व एवं बाद वाला दिन अर्थात् दोनों दिन पुण्य काल होता है- पूर्वतोपि परतोऽपि सङ्क्रमात्पुण्यकालघटिकास्तु षोडश। अर्द्धरात्रि समयादनन्तरं सङ्क्रमे परदिनं हि पुण्यदम्॥ यद्यर्धरात्र एवं स्यात्सम्पूर्णो सङ्क्रमो रवेः। तदा दिनद्वयं पुण्यं स्नानदानादिकर्मसु॥ *(ज्योतिषरत्नमाला ९,९-१०)*

करि-वाजिकर्म-

द्व्यादित्येऽश्वकरत्रये$_3$ च करिणां कर्माथ पौष्णद्वये$_2$
स्वातीज्यादितिभे करे मृगवसुद्वन्द्वे तथा वाजिनाम्।
शाक्रेऽर्के वसुभद्वयेऽदितियुगे द्वीशाश्विपौष्णे गवां
नो कर्णध्रुवपर्वपक्षकदले त्वाष्ट्रे च रिक्तार्कयोः॥ ४४॥

महादेवटीकया- द्व्यादित्येति। एषु योगेषु करिणां हस्तिनां कर्म आरोहणानयन-शिक्षादिकर्म कर्तव्यम्। केषु? आदित्यादिद्वः द्व्यादित्यं पुनर्वसुपुष्ये तत्र अश्विकरत्रये अश्विन्यां हस्तात्त्रये हस्तचित्रास्वातौ करिणां हस्तिनां कर्म कुर्यात्।

अथ पौष्णद्वये रेवत्यश्विन्योः स्वातौ ईज्ये पुष्ये अदितिभे पुनर्वसौ करे हस्ते मृगे मृगशीर्षे वसुद्वन्द्वे धनिष्ठाशतर्क्षयोः वाजिनां कर्म कुर्यात् आनयनारोहणादिशिक्षाकर्म कुर्यात्। शाक्रे ज्येष्ठायां अर्के हस्ते वसुभद्वये धनिष्ठाशतभिषजोः अदितियुगे पुनर्वसुपुष्ये द्वीशे विशाखायाम् अश्विन्यां पौष्णे रेवत्यां गवां गोवृषाणाम् आनयनादिक्रयविक्रयदमनादिकर्म कुर्यात्। कर्णे श्रवणे ध्रुवेषु रोहिण्युत्तरासु पर्वणोः दर्शपौर्णमास्योः पक्षकदले अष्टम्यां त्वाष्ट्रे चित्रायां रिक्तातिथौ अर्कवारे पशूनां पूर्वोक्तकरितुरङ्गगवां किमपि कार्यं न कार्यम्। तथा चोक्तम् *(ज्योतिषरत्नमाला ४, ४०)* -

'चित्रोत्तरावैष्णवरोहिणीषु चतुर्दशीदर्शदिनाष्टमीषु।
स्थानप्रवेशं गमनं विदध्याद्धीमान् पशूनां न कदाचिदेव॥ ४०॥'

मोहनबोधिनी- अग्रोल्लेखित योगों में गजविद्या से सम्बन्धित कार्य किए जाने चाहिए। गजारोहण, क्रय, शिक्षादि कर्म में ये योग विचारणीय है। नक्षत्रों में पुनर्वसु, पुष्य, अश्विनी, हस्त, चित्रा, स्वाती प्रशस्त होते हैं। इसी प्रकार रेवती, अश्विनी, स्वाती, पुष्य, पुनर्वसु, हस्त, मृगशिर, धनिष्ठा, शतभिषा नक्षत्रों में अश्व विषयक कार्य-क्रय,

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

अश्वारोहण, शिक्षादि किए जाने चाहिए। इसी प्रकार ज्येष्ठा, हस्त, धनिष्ठा, शतभिषा, पुनर्वसु, पुष्य, विशाखा, अश्विनी, रेवती नक्षत्रों में गाय, गोवत्सादि का क्रय-विक्रय, दमनादि कर्म किए जा सकते हैं। इस प्रसङ्ग में ज्ञातव्य है कि श्रवण, ध्रुवसंज्ञक नक्षत्र (उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी), पूर्णिमा व अमावस्या पर्वों पर, अष्टमी, चित्रा, रिक्तातिथियों (४, ९, १४), रविवार हो तो हाथी, अश्व, गौ आदि विषयक उपर्युक्त कार्य नहीं करने चाहिए।

वशिष्ठ का मत है- हस्तत्रये सौम्यहरित्रये च पौष्णद्वये पुष्यपुनर्वसौ च। मैत्रेऽपि सर्वाण्यपि कुञ्जराणां कर्माणि शस्तान्यखिलानि यानि॥ इसी प्रकार व्यवहार में कहा गया है- शुभतारे शुभे लग्ने शुभांशे शोभने तिथौ। अङ्कुशा करिणां योज्याः शनिलग्ने शनेर्दिने॥ गजाश्वारोहण के लिए व्यवहार में मुहूर्त है- पौष्णाश्विनीवरुण मारुतशीतरश्मि चित्रादिति श्रवणपाणिसुरेज्यवित्तैः। वारेषु जीवशशिसूर्यसितेन्दुजानामारोहणं गजतुरङ्गरथेषु शस्तम्॥ (पीयूषधाराटीका २, १८ पर उद्धृत)

अथाश्वचक्रम्-

चक्रेऽश्वे शिरसि त्रयं सुखकरं वक्त्रे त्रयं₃ मानदं
वृद्ध्यै पञ्च हृदिस्थभानि चरणेष्वष्टौ तु दुष्टानि च।
पुच्छे स्वक्षयकृच्चतुष्टयमथो पृष्ठे चतुष्कम् मृतौ
सूर्यर्क्षाद्दिनभावधेः फलमिदं वाहर्क्षतः केचन॥ ४५॥

महादेवटीकया- चक्रे इति। अश्वे चक्रे अश्वाकारचक्रे सूर्यर्क्षाद्भत्रयं शिरसि देयम् अत्र मुहूर्ते सुखकरं ततस्त्रयं वक्त्रे मुखे मानदं भवति ततः हृदि पञ्चभानि वृद्ध्यै वाहनवृद्ध्यै भवन्ति चतुश्चरणेषु ततोऽष्टौ भानि दुष्टानि भवन्ति पुच्छे चतुष्टयम् स्वक्षयकृद्धननाशकृद्भवति पृष्ठे चतुष्कम् मृतिनिमित्तं भवति इति सूर्यभाद्दिनभावधेः फलं केचन वदन्ति केचन वाहर्क्षतः अश्वस्य नामनक्षत्राद्दिनभावधे फलं वदन्ति तत्तु नरपतिजयचर्यायां युद्धसमये शनिस्थितिविलोकनार्थे तुरङ्गभाल्लिखन्ति *(चक्रप्रकरणे अश्वचक्र १-७)* अत्र तु सूर्यभादेव गणना कार्या॥ ४५॥

मोहनबोधिनी- अश्वचक्र को घोड़े के समान बनाएँ और उसमें सूर्य के नक्षत्र से गणना करते हुए सिर से क्रमशः नक्षत्रों का न्यास करें। सिर पर ३ नक्षत्र सुखकर है। मुख पर ३ मानदायक, हृदय में ५ नक्षत्र वृद्धि, पैरों में चार और आठ नक्षत्र दुष्ट होते

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

हैं। पुच्छ पर चार नक्षत्र स्वयं का क्षय या नाशकारक हैं जबकि पीठ पर चार नक्षत्र मृत्युकारक कहे गए हैं। इस प्रकार अश्वचक्र में जहाँ पर शनि की स्थिति हों, उससे फल पर विचार किया जाना चाहिए। कोई-कोई अश्व के ही नाम से दिन के नक्षत्र तक भी करने का निर्देश करते हैं।

स्पष्टार्थचक्र

अङ्ग	सिर	मुख	हृदय	उदर	पैर	पूंछ
नक्षत्र	३	३	५	५	८	४
फल	सुख	यश	लाभ	लाभ	हानि	मृत्यु

महादेवदैवज्ञ ने यहाँ नरपतिजयचर्यास्वरोदय शास्त्रोक्त अश्वचक्र का सङ्केत किया है। नरपति कवि ने कहा है कि अश्व के समान आकार बनाकर उसमें अश्व के नाम के नाम के नक्षत्र से मुख से आरम्भ करते हुए नक्षत्रक्रम से २८ नक्षत्रों को लिखें। मुख, आँख, कान, सिर, पूँछ चारों पैरों में दो-दो नक्षत्र और पाँच-पाँच पीठ और पेट पर रखें। जहाँ शनि हो, उसके आधार पर फल का विचार करें। यदि अश्वमुख, आँख, पेट एवं सिर के नक्षत्र में शनि हो तो सङ्ग्राम में उस घोड़े पर चढ़कर युद्ध करने से राजा शत्रुओं का संहार करता है। कान, पैर और पूँछ के नक्षत्रों में शनि हो तो वह अश्व युद्ध में भ्रम व हानि करता है। इन स्थानों यदि शनि हो तो राजा को चाहिए कि वह उस घोड़े को पट्टबन्धन, यात्रा, युद्ध में त्याग कर दें। जिस राजा का घोड़ा पृथ्वी पर घूमता है, उसके देशान्तर स्थित सभी शत्रु सशङ्कित रहते हैं। जिसके पास अश्व है, उसी की पृथ्वी है, ऐसा विज्ञजनों ने कहा है। अश्वविहीन राजा के सभी पदार्थ शोभायमान नहीं होते- अश्वाकारं लिखेच्चक्रं अश्वधिष्ण्यादितारकाः। वदनात्पृष्ठिगा देया अष्टाविंशतिसङ्ख्यया॥ मुखाक्षिकर्णशीर्षेषु पुच्छाङ्घ्रिषु युग युगम्। पञ्च पञ्चोदरे पृष्ठे सौरिर्यत्र फलं ततः॥ मुखाक्ष्युदरशीर्षस्थो यदा सौरिस्तुरङ्गमे। तदारिर्भङ्गमायाति रणेन्यत्र पराजयः॥ कर्णाङ्घ्रिपुच्छपृष्ठस्थो यदा यस्य हयस्य च। विभ्रमं भङ्गहानी च करोत्यश्वो महाहवे॥ एतत्स्थानगतः सौरिर्यदा काले हयस्य च। पट्टबन्धे गमे युद्धे वर्जयेत्तं हयं नृपः॥ देशान्तर स्थितास्तस्य रिपवः सन्ति शङ्किताः। तुरगा यस्य भूपस्य विचरन्ति महीतले॥ मेदिनी तस्य यस्याश्वा इति वाक्यं विपश्चिताम्। सर्वाः श्रियो न राजन्ते विनाऽश्वेन महीभुजाम्॥ (नरपतिजयचर्या चक्रप्रकरणम् अश्वचक्रम् १-७)

नरपति ने यह भी कहा है कि जिस दिन अश्वकर्म करना हो, उस दिन के नक्षत्र को सूर्य के नक्षत्र से गिनकर अश्वमुख में ३ नक्षत्र रखें, यह लाभकारी है। पुनः ५ नक्षत्र

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

पेट में न्यसित करें जो लाभकारी, ६ नक्षत्र पाद में परिकल्पित करें तो हानिकर है और पूँछ में ४ नक्षत्र मृत्युकारक है– *सूर्यभात्स्थिरऋक्षेषु मुखे रामा यशस्तथा। हृदये पञ्च लाभोयं पादे षट्श्च भङ्गदः॥ पुच्छे वेदा महाहानिः पृष्ठेब्धिर्मृत्युरादिशेत्। (वही, शुद्धमुहूर्तविषये अश्वचक्रम् २-३)*

श्रीपति ने कहा है कि पुष्य, धनिष्ठा, अश्विनी, मृगशिरा, रेवती, स्वाती, पुनर्वसु, हस्त, शतभिषा नक्षत्रों में अश्व पालनादि समस्त कार्य किए जाने चाहिए, ऐसा ज्ञानियों की स्मृतियाँ कहती आई है– *पुष्यश्रविष्ठाश्विनिसौम्यभेषु पौष्णानिलादित्यकराव्ययेषु। सवासवर्क्षेषु बुधैः स्मृतानि सर्वाणि कार्याणि तुरङ्गमाणाम्॥ (ज्योतिषरत्नमाला ४, ३७)*

दैवज्ञमनोहर में अश्वचक्र इस प्रकार दिया गया है– *अश्वाकारं लिखेच्चक्रं साभिजिद्भानि विन्यसेत्। स्कन्धे च सूर्यभात्पञ्च पृष्ठे च दश भानि च॥ पुच्छे द्वे स्थापयेत्प्राज्ञश्चतुष्पादे चतुष्टयम्। उदरे विन्यसेत्पञ्च मुखे द्वे तुरगस्य च॥ अर्थलाभो मुखे सम्यग्वाजी नश्यति चोदरे॥ चरणस्थे रणे भङ्ग पुच्छे पत्नी विनश्यति॥ अर्थसिद्धिर्भवेत्पृष्ठे स्कन्धे लक्ष्मीपतिर्भवेत्॥ (पीयूषधाराटीका २, १८)*

ज्योतिर्निबन्ध में अश्वारोहणचक्र इस प्रकार समझाया गया है– *चक्रेश्वः शिरपञ्चके सुखकरः पृष्ठे च दिग्लाभदः पुच्छे द्वे गृहिणीविनाशकरः पादेऽब्धिभङ्गो भवेत्। नाशं चोदरपञ्चभिश्च कुरुते चाऽऽस्ये द्विलाभे भवेद्देहे चायनरोहणे फलमिदं सूर्यर्क्षतो वा क्रमात्॥*

स्पष्टार्थचक्रम्

अङ्ग शिर ·	पृष्ठ	पुच्छ	पाद	उदर	मुख	
२८ नक्षत्र	५	१०	२	४	५	२
फलाफल	सुख	लाभ	स्त्रीहानि	भङ्ग	नाश	लाभ
	१५ लाभ		१२ हानि		२ लाभ	

उष्ट्रमहिषी-मन्थान-तोयार्चाः

सौम्ये पौष्णयुगे करेऽदितियुगे द्वीशे धनिष्ठाद्वये
पूर्वास्विन्द्रयुगे सदुष्ट्रमहिषीकर्माथ मन्थानकम्।
मूले पौष्णकरत्रये ध्रुवमृगे मैत्रेऽश्विभे वासवे
तोयार्चा शशिजीवभार्गवदिने मूले करे वैष्णवे॥ ४६ ॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

महादेवटीकया- सौम्य इति। एषु योगेषु उष्ट्रकर्म सत्। एषु केषु? सौम्ये मृगे पौष्णयुगे रेवत्यश्विन्योः करे हस्ते अदितियुगे पुनर्वसुद्वये द्वीशे विशाखायां धनिष्ठाद्वये धनिष्ठाशतभिषजोः पूर्वासु तिसृषु, इन्द्रयुगे ज्येष्ठामूलयोः उष्ट्रस्य दतिबन्धनक्रयविक्रयादि कार्यं महिषी आनेया दोह्या।

अथ मन्थानकं दधिमन्थनमुहूर्तः- मूले पौष्णे रेवत्यां करत्रये हस्तचित्रास्वातौ ध्रुवाणि रोहिण्युत्तरात्रयाणि मृग मैत्रे अनुराधायाम् अश्विभे वासवे धनिष्ठायां दधिमन्थनस्य नवीनारम्भः कार्यः।

अथ तोयार्चा- प्रसूताभिः स्त्रीभिः जलमातृणां पूजा कार्या सा तोयार्चा चन्द्रगुरु-भार्गववारेषु मूलभे हस्त वैष्णवे श्रवणे अन्यत्र कुलाचारादपि पूजा॥ ४६॥

मोहनबोधिनी- ऊँटों के पालन के लिए निम्न योग श्रेष्ठ हैं- मृगशिरा, रेवती, अश्विनी, हस्त, पुनर्वसु, पुष्य, विशाखा, धनिष्ठा, शतभिषा, तीनों पूर्वा, ज्येष्ठा और मूल नक्षत्र। इनमें दतिबन्धन, क्रय-विक्रय कार्य एवं भैंस के आदान-प्रदान व दोहन का कार्य आरम्भ किया जा सकता है। दही बिलौने के नवीन कार्य के लिए निम्न नक्षत्रों को लिया जाना उचित है- मूल, रेवती, हस्त, चित्रा, स्वाती, रोहिणी, उत्तरात्रय, मृगशीर्ष, अनुराधा, अश्विनी और धनिष्ठा। इसी प्रकार प्रसव के बाद महिलाओं को जलमा पूजन का मुहूर्त निम्न उचित है। वारों में सोमवार, गुरुवार एवं शुक्रवार तथा नक्षत्रों में मूल, हस्त और श्रवण नक्षत्र श्रेष्ठ हैं।

मुहूर्तमुक्तावली में आचार्य नीलकण्ठ ने कहा है कि उत्तरात्रय, रोहिणी, अनुराधा, मृगशिर, रेवती, हस्त, चित्रा, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद नक्षत्रों में और शुभवारों में मंथनकार्य शुभ है, ऐसा संतों का कथन है- ध्रुवानुराधामृगरेवतीषु हस्ते च चित्रासु वसुत्रयेषु। शुभेषु वारेषु हि शस्तं मन्थानकार्यं प्रवन्ति सन्तः॥ (श्लोक ५३)

शीध्रबोध में कूपजलाशय पूजन के लिए कहा गया है कि मूल, पुनर्वसु, पुष्य, श्रवण, मृगशिरा व हस्त नक्षत्र में, शुक्रवार, शनिवार, रविवार, भौमवार को त्यागकर प्रसूता को जलपूजन करवाएँ- मूलादितिद्वयं ग्राह्यं श्रवणश्चमृगः करः। जलवाप्यर्चनहेयाः शुक्रमन्दार्कभूमिजाः॥ (२, १७)

कूपखननमुहूर्तः

मासे फाल्गुनपौषमाधवनभोमार्गेऽष्टमी द्वादशीं
रिक्तां प्रोज्झ्य शशिज्ञजीवदिवसे हस्तेऽथ मैत्रे ध्रुवे।

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

पुष्ये मैत्रवसुद्वये शनिबुधेज्यर्क्षे तनौ कर्किणी
श्रेष्ठः कूपविधिश्च सौम्यखचरैः केन्द्रत्रिकोणस्थितैः ॥ ४७ ॥

महादेवटीकया- मास इति। एषु योगेषु कूपविधिः श्रेष्ठः। एषु केषु ? फाल्गुनपौष-माधवनभोमार्गे मासे। माधवो वैशाखः नभः श्रावणः मार्गः मार्गशीर्षः। तत्र अष्टमीं द्वादशीं रिक्तां प्रोज्झ्य त्यक्त्वा। शशी चन्द्रः ज्ञो बुधः जीवो गुरुः एषां दिवसे वारे हस्तभे पैत्र्ये मघायां ध्रुवे रोहिण्युत्तरात्रयेषु पुष्ये मैत्रे अनुराधायां वसुद्वये धनिष्ठाशतभिषग्द्वये शनिबुधेज्यर्क्षे शनिबुधगुरुणाम् ऋक्षे राशौ तनौ लग्ने कर्किणि लग्ने सौम्यखचरैः सौम्यग्रहैः केन्द्रे १, ४, ७, १० त्रिकोणे ५, ९ स्थितैः कूपखननारम्भः कार्यः ॥ ४७ ॥

मोहनबोधिनी- कूप, वापी, कुण्डादि खनन की दृष्टि से निम्न मुहूर्त उपयुक्त है- फाल्गुन, पौष, वैशाख, श्रावण, मार्गशीर्ष माह में; कृष्णपक्ष में प्रतिपदा से तृतीया, पञ्चमी से सप्तमी, दशमी और एकादशी को लें। सितपक्ष में द्वितीया, तृतीया, षष्टमी से अष्टमी, दशमी से त्रयोदशी और पूर्णिमा ग्राह्य है।

इसी प्रकार नक्षत्रों में हस्त, मघा, रोहिणी, तीनों ही उत्तरा, पुष्य, अनुराधा, धनिष्ठा और शतभिषा नक्षत्रों को ग्रहण करना चाहिए। शनि के लग्न अर्थात् मकर व कुम्भ, बुध की लग्न अर्थात् मिथुन, कन्या तथा गुरु की लग्न अर्थात् धनु व मीन सहित कर्क लग्न प्रशस्त होता है। लग्न, केन्द्र व त्रिकोण में १, ३, ४, ५, ७, ९, १०वें स्थान में शुभ ग्रह हों- ऐसा योग देखकर कुएँ की खुदाई की जा सकती है।

ज्योतिषसार में कहा गया है कि हस्त, चित्रा, स्वाती, धनिष्ठा, शततारका, आर्द्रा, मघा, तीनों उत्तरा और रोहिणी नक्षत्र में मुनीश्वरों ने कूपारम्भ करवाने का विधान किया है- हस्तातिस्त्रो वासवं वारुणं च शैवं पित्र्यं त्रीणि चैवोत्तराणि। प्राजापत्यं चापि नक्षत्रमाहुः कूपारम्भे श्रेष्ठामाद्या मुनीन्द्रा ॥ (पृष्ठ २८)

कूपखननदिक्-द्रुमारोपमुहूर्तश्च-

ग्रामाद्वायुहुताशराक्षसदिशं त्यक्त्वाऽम्बुकूपं
खनेत्तच्चक्रेऽर्कभतस्त्रिकं क्रमगतं मध्येन्द्रित्तो लिखेत्।
चन्द्रर्क्षावधि मध्यसौम्यवरुणाग्नेयाः शुभाः पादपारोपे
पुष्यमृदुध्रुवाश्विशतभं द्वीशं समूलम् करः ॥ ४८ ॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

महादेवटीकया– ग्रामादिति। ग्रामात् वायुकोणाग्निकोणराक्षसकोणान् त्यक्त्वा राक्षसं नैर्ऋतिकोणम् अम्बुकूपं जलभरणार्थं कूपं खनेत्। तच्चक्रे कूपचक्रे अर्कभतः सूर्यभात् त्रिकं मध्यद्रदिक्तोऽपि क्रमगतं लिखेत्। तत्र मुहूर्तनक्षत्रावधि गणना कार्या। मध्यसौम्यवरुणाग्नेयाः शुभाः। मुहूर्तनक्षत्रं मध्ये आयानि तच्छुभं वा सौम्यदिशि उदक् श्रेष्ठं वरुणा दिक् पश्चिमायां श्रेष्ठम् आग्नेयकोणेऽपि श्रेष्ठम्।

अथ पादपारोपे वृक्षारोपणे पुष्यः श्रेष्ठः मृदूनि चित्रा रेवती अनुराधा मृगः श्रेष्ठानि ध्रुवभानि रोहिण्युत्तराणि अश्विनी शतभं शततारा द्वीशं विशाखा मूलेन सह करः हस्तः एषु वृक्षाः रोपणीयाः बीजवापो वृक्षस्य कार्यः॥ ४८॥

मोहनबोधिनी– ग्राम, नगर में कूप कहाँ खुदवाएँ, इस सम्बन्ध में कहा गया है कि ग्राम के वायव्यकोण, आग्नेयकोण तथा नैर्ऋत्यकोण को छोड़कर, ईशानकोण में कूपखनन करवाएँ। इसके लिए कूपचक्र लिखकर शुभाशुभ देखना चाहिए। इसमें सूर्य के नक्षत्र से तीन-तीन नक्षत्रों को मध्य सहित उत्तर, पूर्व, आग्नेयादि क्रम से आठों दिशाओं में स्थापित करें और दिन के नक्षत्र तक गणना करें (इसमें जब मध्य में दिन या चन्द्रमा का नक्षत्र होता है तो मीठा, शीघ्र जल, पूर्व में हो तो जलाभाव, अग्निकोण में होने पर जल, दक्षिण में जलहीन, नैर्ऋत्य में अच्छा पानी, पश्चिम में ठण्डा पानी, वायव्य में परिजन विनाश, उत्तर में उत्तम जल और ईशान कोण में होने पर खारा या कटु जल अथवा जलाभाव होता है)। जैसा कि चक्र में आया है–

दिशा	मध्य	पूर्व	अग्नि.	दक्षिण	नैर्ऋ.	पश्चि.	वाय.	उत्त.	ई.
सूर्यर्क्ष से गिने	३	३	३	३	३	३	३	३	३
फल	शुभ	अशुभ	शुभ	अशुभ	शुभ	शुभ	सामा.	शुभ	अ.

इसी प्रकार पुष्य, मृदु (मृगशिरा, चित्रा, अनुराधा, रेवती) रोहिणी, तीनों उत्तरा, अश्विनी, शतभिषा, विशाखा, मूल एवं हस्त– इन पन्द्रह नक्षत्रों में पादपरोपण या वृक्षरोपण किया जाना श्रेयस्कर होता है।

उपर्युक्त कूपचक्र बृहद्दैवज्ञरञ्जनम् में स्पष्ट किया गया है– अथाहं सम्प्रक्ष्यामि कूपचक्रं समासतः। रोहिण्यादिश्च गणयेद्यत्र तिष्ठति चन्द्रमाः॥ अथवा सूर्यनक्षत्राद्गणयेच्च त्रिकं त्रिकम्। मध्ये शीघ्रजलं स्वादु पूर्वे भूमिश्च खण्डकम्॥ आग्नेयां सजलं प्रोक्तं याम्ये निर्जलता तथा। नैर्ऋत्ये चामृतं वारि वारुण्यां शीतलं जलम्। वायव्ये परिजनं हन्ति उत्तरे चात्तमं जलम्। ईशाने कटुकं क्षारं भूमिरेव न संशयः॥ (७०, ६१-६४)

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

ब्रह्मयामल में तडागचक्र कहा गया है जिसमें गोचरी सूर्य नक्षत्र से चन्द्रमा के नक्षत्र तक गिनकर देखने का निर्देश है। आठों दिशाओं में दो-दो नक्षत्र, बीच में पाँच और मेघ या बादल में छह नक्षत्रों स्थापना करें। जब पूर्व दिशा में दिन नक्षत्र या चन्द्र का नक्षत्र होता है तो शोक, अग्निकोण में हो तो जलाधिक्य, दक्षिण में जलाभाव, नैर्ऋत्य में अमृततुल्य जल, पश्चिम में अधिक पानी, वायव्य में जलहीनता, उत्तर में सुन्दरजल, ईशान में दूषितजल, मध्य में शीघ्र जल और मेघों में दिन नक्षत्र होने पर जल का नाश होता है- तडागचक्र वक्ष्यामि यदुक्तं ब्रह्मयामले। सूर्यर्क्षाच्चन्द्रमा यावद्गणयत्सततं बुधैः॥ दिक्षु ऋक्षद्वयं न्यस्य मध्ये पञ्च नियोजयेत्। ऋक्षाणि वारिवाहे षट् फलं तत्र विचारयेत्॥ पूर्वस्थाने भवेच्छोको आग्नेय्यां सलिलं बहु। दक्षिणे वारिनाशं च नैर्ऋत्ये चामृतं जलम्॥ पश्चिमे बहुभिर्वारि वायव्ये निर्जलं तथा। उत्तरे चोत्तमं वारि ईशाने कुत्सितं तथा। मध्ये शीघ्रजलं प्रोक्तं वारिवाहेम्बुनाशम्॥ (वही ७०, ६६-७०)

पौधरोपण के लिए बृहद्दैवज्ञरञ्जनम् में कहा गया है कि हस्त, पुष्य, अश्विनी, ध्रुवसंज्ञक, विशाखा, मृदु, आश्लेषा, शतभिषा नक्षत्रों में वृक्षारोपण श्रेष्ठ है किन्तु बिना पापग्रह के केन्द्र में गुरु, दसवें में चन्द्र या जलचर राशि में, धनस्थान शुभग्रह से युक्त अथवा दृष्ट होने पर शुभग्रह के वार या शुभग्रह के लग्न में वृक्षारोपण किया जाना चाहिए- लतागुल्मवृक्षरोपो हस्तपुष्याश्विनीध्रुवैः। विशाखामृदुमूलाहि वरुणश्च प्रशस्यते॥ गुरौ केन्द्रे विपाके खे विधौ वारि विधूदये। शुभयुक्तेक्षिते बन्धौ सद्वारे वा शुभोदये॥ (वही ७६, ३०-३१)

वृक्षारोपण के लिए मन्त्र में कहा गया है- हे वसुधे, हे सीते, हे पुण्य देने वाली पृथ्वी, हे सुभगे देवि तुम्हे नमस्कार है, मेरे लगाए हुए वृक्ष को बड़ा करो- ॐ वसुधेति च सीतेति पुण्यदेति धरेति च। नमस्ते सुभगे देवि द्रुमोयं वर्द्धतामिति॥ (वही ३२)

वैद्य सुरपाल ने वृक्षायुर्वेद में कहा गया है कि उपवन में किसी स्थान पर कूप का निर्माण करवाना चाहिए जिसमें पर्याप्त और अच्छा मीठा पानी हो ताकि उससे उपवन के वृक्षों को सीञ्चा ज़ा सके। उसके चारों ओर पत्थरों का घेरा भी बन्धवाएं- क्वचिदपि कूपं कुर्यादुपवनदेशे सुमृष्टसलिलभरम्। संसिक्त सकल विटपं बद्धं पाषाण सञ्चयैः परितः॥ २९८॥

कूपादि के लिए काश्यपीयकृषिसूक्ति का मत है- उद्यानयापि वा नीरं न पर्याप्तं हि कुल्यजम्। तस्मिंस्तु देशे सर्वत्र कूपं निर्मापयेन्नृपः॥ क्षुद्रकूपं च कूपं महाकूपं च वापिकाम्। चतुरश्रं मण्डलं वा दीर्घाकारमथापि वा॥ स्थापयेत् खातयेत्तच्च रक्षयेच्च

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

यथाविधि। उत्तरायणमासेषु प्रायो देशेषु सर्वतः॥ अधोभागे जलं दृश्यं नद्यामापि तले क्वचित्। तस्मात् कूपादिखननमुत्तरायणमासिके॥ सम्पूर्णलिलावाप्तिहेतवे चिरकालिकम्। दगार्गलविधिज्ञेन धीमता भूमिवल्लभः॥ वापीकूपादिखननं सलिलस्थितिमेव च। आदौ निश्चित्य वृक्षाद्यैः भूनाडीवीक्षणादपि॥ भूमिपरीक्ष्य कलयेत् सुमुहूर्त सुलग्नके। प्रायः प्रातस्तु खननं शुभाय परिकीर्त्यते। अभ्यर्च्य वरुणं नीरनाथं भूदेविकामपि। वनदेवीं तथाभ्यर्च्य बलिदानात् विशेषतः॥ कूपं वापीं दीर्घिकां च स्थापयेत् क्रमतो नृपः। आदौ महावटं खात्वा दीर्घं वा चतुरश्रकम्॥ मण्डलाकारमथवा खातमृत्स्नां तुदूरतः। निक्षिप्य क्रमशस्तत्र जलसंदर्शनावधि॥ मृदुद्धरणमाख्यातं भटैर्वीरैः कृषीवलैः। जलं सैकतसंमिश्र वीक्ष्य कूपादिषु क्रमात्॥ अधोऽधिष्ठानकल्पस्तु दार्ढ्याय च विधीयते। स्थले सैकतभूयिष्ठे चेष्टिकाजालकैरपि॥ सुपक्वैरिह चादिष्टमाधिष्ठानप्रकल्पनम्। कठिने भूमिभागे तु दीर्घिकाकल्पने क्वचित्॥ अधिष्ठानमधोभागे शिलाखण्डैः प्रकल्पयेत्। कूपस्याधः स्थले चैवमधिष्ठानं यथाक्रमम्॥ सिकताजलसंमिश्रमृदुद्धरणकार्यतः। दृढीकृत्य क्रमान्नित्यं भूयिष्ठं सलिलं ततः॥ विलोक्य तत्र कूपादावधिष्ठानोपरि क्रमात्। इष्टिकाखण्डकैः कालेनिर्माणं कल्पयेन्नृपः॥ सुधासंमिश्रितैः कूपनिर्माणं त्विकादिभिः। चिरकालस्थितिकर माहुस्तत्त्वविदो बुधाः॥ अतः सर्वत्र देशेषु वापीकूपादिकल्पनम्। सुधेष्टिकादिभिः कार्यमिति शास्त्रेषु निश्चितम्॥ मुखद्वारं प्रकुर्वीतशिलाभिः भूतले क्रमात्। प्राच्यां प्रतीच्यामथवा स्थलयोग्यं विदुर्बुधाः॥ घटीयन्त्रस्थलं तीरे शिलाभिः परिकल्पयेत्। ततः सलिलनिःस्रावहेतवे दृढभूमिके॥ तीरेषु क्षुद्रकुल्यां च स्थापयेत् स्थलयोग्यकम्। घटीयन्त्रं तु विविधं वृषभर्वाह्यमुत्तम्॥ (काश्यपीयकृषिसूक्ति १, १४८-१६९)

इसी प्रकार सोमेश्वर का कथन है- सूक्ष्मयुक्ताफलैर्क्लिसं बालुकापुलिनस्वलम्। कुङ्कुमोदक तुपणचिः कुल्यां कुत्रापि कारयेत्॥... विधायेविविधं शैल ततासादमुदान्वितः॥ (मानसोल्लास ५, १, १०४-५)

देवप्रतिष्ठामुहूर्तः

मैत्रे पौष्णलघुध्रुवादितिमृगे कर्णद्वये स्याद्धरेर्वाग्देव्या
गणनायकस्य फणिनां कर्णद्वये पुष्यभे।
रिक्ताविष्टिकुजान् विहाय नव, धी, केन्द्रायसंस्थैः शुभैः
पापैः षट्, त्रि, भवस्थितैर्ग्रहगणस्येज्ये ध्रुवे स्थापनम्॥ ४९॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

महादेवीटीकया- मैत्र इति। एषु योगेषु हरेः स्थापनं स्यात्। क्व मैत्रेऽनुराधायां पौष्णे रेवत्यां लघुषु भेषु हस्त ईज्यः पुष्यः अश्विनी अभिजित्सु ध्रुवेषु रोहिण्युत्तरासु अदितिभे पुनर्वसौ मृगे मृगशीर्षे कर्णद्वये श्रवणधनिष्ठयोः एषु हरेः प्रतिष्ठा। वाग्देव्याः सरस्वत्याः गणनायकस्य गणेशस्य फणिनां क्षेत्रपालादीनां कर्णद्वये श्रवणधनिष्ठायां पूषभे रेवत्यां ग्रहगणस्य रव्यादीनां शनिपर्यंतानां प्रतिमादिस्थापनम्। ईज्य पुष्ये ध्रुवे रोहिण्युत्तरात्रये चतुर्ष ध्रुवभेषु। तत्र प्रतिष्ठायां ग्रहयोगानाह- नव ९ धी ५ केन्द्र १, ४, ७, १० आय ११ संस्थैः शुभैः पापैः षट् ६ त्रि ३ भव ११ स्थितैः। किं कृत्वा प्रतिष्ठापनं कुर्यात् रिक्ताविष्टिकुजान्विहाय रिक्ता ४, ९, १४ विष्टिर्भद्रा कुजं मङ्गलवारं विहाय प्रतिमानां प्रतिष्ठापनं कार्यम्॥ ४९॥

मोहनबोधिनी- विष्णु की प्रतिष्ठा में अनुराधा, रेवती, लघुनक्षत्र (हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित्), ध्रुवनक्षत्र (रोहिणी एवं उत्तरात्रय), पुनर्वसु, मृगशिरा, श्रवण और धनिष्ठा- इन बारह नक्षत्रों को लेना चाहिए। इसके अतिरिक्त सरस्वती, गणेश व शेषनाग की प्रतिष्ठा में श्रवण, धनिष्ठा, रेवती व अश्विनी नक्षत्रों के साथ ही शुभग्रह को देखें। ये प्रतिष्ठाएँ रविवार से लेकर शनिवार तक उक्त संयोगों से की जा सकती है। प्रतिष्ठा के लिए ग्रहयोग इस प्रकार जाने कि शुभग्रह नवम, पञ्चम, केन्द्र (१, ४, ७, १०) ११वें स्थान में हो जबकि पापग्रह छठे, तीसरे व ग्यारहवें स्थान पर होने चाहिए। प्रतिष्ठा कार्य में रिक्तातिथि (४, ९, १४) विष्टि या भद्रा, मङ्गलवार का त्याग किया जाना चाहिए।

श्रीपति का मत है कि उत्तरायण, शुक्लपक्ष, लग्न में शुभदृष्ट चन्द्रमा, बली चन्द्र, तारा तथा जिस देवता की स्थापना करनी हो, उसकी तिथि, वार व नक्षत्रों में देव प्रतिष्ठा शुभदायिनी होती है- अथामरस्थापनमुत्तरायणे स्वदेववारर्क्षतिथिक्षणादिषु। सिते च पक्षे शशितारयोर्बले विधौ विलग्ने च शुभावलोकिते॥ (ज्योतिषरत्नमाला १८, १)

लक्षणसमुच्चय के मत से हेमाद्रि ने कहा है कि लिङ्ग की स्थापना उत्तरायण में होनी चाहिए, दक्षिणायन में तीन वर्ष बाद हानि व भय होता है- उत्तराशागते भानौ लिङ्गस्थापनमुत्तमम्। दक्षिणे त्वयने स्थाप्य त्रिवर्षोर्ध्वे भयं लभेत्॥ (सङ्ग्रहशिरोमणि में उद्धृत २२, २)

विष्णुधर्मोत्तरपुराण में प्रतिष्ठा के क्रम मासफल बताया गया है कि अधिमास में प्रतिष्ठा से अपने दोष की वृद्धि होती है किन्तु माघ व आश्विन मास में देवी की प्रतिष्ठा सर्वकामदा होती है। अन्य मासफल इस प्रकार हैं- माघे कर्त्तुर्विनाशाय फाल्गुने शुभदा भवेत्। लोकानन्दकरी चैत्रे वैशाखे धनसंयुता॥ आज्ञायुता तथा ज्येष्ठे आषाढे कर्तृवृद्धिदा।

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

श्रावणे धनहीना स्यात्प्रोष्ठपादे विनश्यति॥ आश्विने नाशमाप्रोति वह्निना कार्तिक तथा। सौम्ये सौभाग्यमतुलं पौषे पुष्टिरनुत्तमा॥ दोषान्विताधिमासे स्यात्कर्त्तुरात्मान एव च। कृष्णपक्षत्रिभागे तु प्रथमे स्याच्छुभावहा॥ मध्या द्वितीये भवति तृतीये कर्तृनाशिनी। शुक्लपक्षे त्रिभागे प्रथमे देशनाशाय कीर्तिता। द्वितीया मध्यफलदा तृतीये च शुभावहा॥ (विष्णुधर्मोत्तर ३, १६, १९-२४)

स्पष्टार्थ

क्रम	मास	फल	क्रम	मास	फल
१.	माघ	कर्ताविनाशक	२.	फाल्गुन	शुभदायिनी
३.	चैत्र	लोकानन्ददायिनी	४.	वैशाख	धनदायिनी
५.	ज्येष्ठ	सम्मानदायिनी	६.	आषाढ़	वृद्धि
७.	श्रावण	धनहानि	८.	भाद्रपद	देवत्वनाश
९.	आश्विन	नाशकारी	१०.	कार्तिक	अग्निभय
११.	मार्गशीर्ष	विशिष्ट भाग्योदय	१२.	पौष	साधारणपुष्टि

इसी प्रकार विष्णुधर्मोत्तर में तिथ्यानुसार फलाफल पर भी विचार किया गया है– दृढा धनकरी स्फीता तथा प्रतिपदि स्मृता। द्वितीयायां धनोपेता तृतीयायां धन(वर)प्रदा॥ चतुर्थी हानिदा (चतुर्थ्यां नाशमाप्रोति?) प्रोक्ता यमस्य स्यात्सुखावहा। विनायकस्य देवस्य तथा तत्र शुभ(हित?)प्रदा॥ पञ्चम्यां श्रीयुता कर्त्तु(कान्ता?)र्वरदा च तथा भवेत्। षष्ठ्यां लक्ष्मीयुता नित्यं सप्तम्यां रोगनाशिनी॥ अष्टम्यां धान्यबहुला नवम्यां च विनश्यति। भद्रा काल्याः कृता तत्र कर्त्तुर्भवति तुष्टये॥ धर्मवृद्धिकरी ज्ञेया दशम्यां च तथा (कृतो?) तिथौ। एकादश्यामर्थदात्री (-तथा युक्ता?) द्वादश्यां सर्वकामदा॥ त्रयोदश्यां तथा ज्ञेया चतुर्दश्यां विनश्यति। कृष्णपक्षे पञ्चदश्यां कर्त्तुः क्षयकरी भवेत्॥ पञ्चदश्यां तथा शुक्ले सर्वाभीष्ट(सर्वकाम?)करी भवेत्॥ ऊनरात्रे महाराज कर्तुर्मरणदा भवेत्। वृहत्स्पृशा च विज्ञेया तथा दोषवती नृप॥ (वही ७६-८३)

अथ नृत्यनृपेक्षासेवामद्यारम्भमुहूर्तः

पौष्णे पुष्यवसुद्वये च रविभे मैत्रोत्तरास्विन्द्रभे
सन्नृत्यं नृपतीक्षणं लघुमृदुश्रीशद्वये सध्रुवे।

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

शस्तं सेवकरक्षणं स्थिरतौ वारे शनेर्भे ध्रुवे
पूर्वार्द्राहिमघेन्द्रमूलशतभे याम्ये शुभश्चासवः ॥ ५० ॥

महादेवटीकया- पौष्णे इति। एषु भेषु नृत्यारम्भणं सत्। क्व पौष्णे रेवत्यां पुष्ये वसुद्वये धनिष्ठाशतभिषजोः रविभे हस्ते मैत्रेऽनुराधायाम् उत्तरासु तिसृष्वपि इन्द्रभे ज्येष्ठायां नृत्यं नृत्यारम्भः सत्। नटीनां वा नटानां नृत्यशालायां नृत्यारम्भणे मुहूर्तावलोकनम्।

लघुभानि हस्तपुष्याश्विन्यभिजितः मृदूनि मृगशीर्षचित्रारेवत्यनुराधाः श्रीशद्वये श्रवणधनिष्ठायां सध्रुवे ध्रुवं रोहिण्युत्तरात्रयं ध्रुवभसहिते नृपतीक्षणं नृपावलोकनम् सत्।

स्थिरतनौ शनेर्वारे ध्रुवभेषु सेवकरक्षणं शस्तम्।

पूर्वासु तिसृषु आर्द्रायां अहिः सर्पः मघायां इन्द्रे ज्येष्ठायां मूले शतर्क्षे शततारकायां याम्ये भरण्याम् आसवः शुभः। आसवशब्देन द्राक्षासवो लवङ्गासवो मधुकासवोऽपि ग्राह्यः। राज्ञामुपयोगित्वात् तत्सन्धाने मुहूर्तावलोनम्। रत्नमालायामपि *(४, १७)* मद्यारम्भधिष्ण्यान्यादावुक्तानि। तथा च-

'रौद्रे पित्र्ये वारुणे पौरुहूते याम्ये सार्पे नैर्ऋते चैव धिष्ण्ये।

पूर्वाख्यासु त्रिष्वपि श्रेष्ठ उक्तो मद्यारम्भः कालविद्भिः पुराणैः' इति ॥ ५० ॥

मोहनबोधिनी- नृत्यारम्भ, नृपदर्शन, सेवा, मद्यारम्भ आदि के मुहूर्त दिए जा रहे हैं। रेवती, पुष्य, धनिष्ठा, शतभिषा, हस्त, अनुराधा, तीनों उत्तरा एवं ज्येष्ठा नक्षत्रों में नृत्य, नटिनी-नट लीलाओं, तमाशा आदि का आरम्भ किया जाना चाहिए।

राजा या उच्च पदस्थ लोगों से भेंट, दर्शन के लिए हस्त, पुष्य, अश्विनी, अभिजित्, मृदु या मृगशिरा, चित्रा, रेवती व अनुराधा, श्रवण, धनिष्ठा, ध्रुव या रोहिणी व उत्तरात्रय नक्षत्रों का योग देखना चाहिए। सेवाकार्यारम्भ में स्थिरयोग, शनिवार, रोहिणी व उत्तरात्रय नक्षत्रों में सेवाकर्म या दासग्रहण किया जाना चाहिए। यह योग प्रशस्त कहा गया है।

इसी प्रकार मद्यारम्भ के लिए तीनों पूर्वा- पूर्वा फाल्गुनी, पूर्वाषाढ़, पूर्वाभाद्रपद, आर्द्रा, आश्लेषा, मघा, ज्येष्ठा, मूल, शतभिषा, भरणी नक्षत्रों को प्रशस्त माना गया है।

बृहद्दैवज्ञरञ्जनम् में सेवाचक्र भी दिया गया है जिसके अनुसार एक पुरुषाकृति बनाकर उसमें सात नक्षत्र मस्तक पर, सात पीठ, सात पेट और सात पैरों में साभिजित् स्थापित करें। यदि स्वामी को सेवक की आवश्यकता हो तो स्वामी के नक्षत्र से और

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

सेवक को स्वामी की आवश्यकता हो तो सेवक के नक्षत्र से २८ नक्षत्रों को लिखकर देखना चाहिए। यदि पैर या पीठ पर नक्षत्र मिले तो निष्फल एवं मस्तक अथवा उदर पर नक्षत्र हो तो फलद होता है- *सेवाचक्रे शिरः सप्त सप्त पृष्ठोदरे तथा। पादयोः सप्तऋक्षाणि साभिजित्तु क्रमान्न्यसेत्॥ स्वामिभाद्भृत्यं गण्यं भृत्यभात्स्वामिभं तथा। निष्फलं पृष्ठपादस्के फलदस्तु शिरोदरे॥ (७५, १४-१५)*

यह मत-श्लोक नरपतिजयचर्यास्वरोदय में भी किञ्चित पाठान्तर के साथ उपलब्ध है- सेवाचक्रे सप्तशीर्षे सप्तपृष्ठे तथोदरे। पादयोः सप्त ऋक्षाणि साभिजित्तत्र विन्यसेत्॥ स्वामिभाद् भृत्यभंगण्यं भृत्यभात् स्वामिभं ततः। निष्फलं पादपृष्ठस्थे सफलं मस्तकोदरे॥ (पृष्ठ २६६, सेवाचक्रम् १-२)

वृषलीमुहूर्तः

पौष्णाश्वानिलहस्तमैत्रवसुभेष्वारार्किजीवे भृगौ
पुंश्चल्याः पुनरुद्वहो विधुबले रिक्ताकुयोगोज्झिते।
तच्चक्रे रविभात्त्रिकं३ क्रमगते मध्येन्द्ररिक्तो लिखदाग्नेयी
न शुभाऽनिला च विषयं ज्ञात्युक्तधर्मं श्रयेत्॥ ५१॥

मोहनबोधिनी- पौष्णाश्वेति। एषु योगेषु पुंश्चल्याः पुरुषान्तरवाञ्छिन्याः पुनरुद्वहो विधवायाः परनरेण सम्बन्धोऽयम्। एषु केषु पौष्णे रेवत्याम् अश्विन्याम् अनिले स्वातौ हस्ते मैत्रेऽनुराधायां वसुभे धनिष्ठायाम् आरे भौमवारे अर्के रविवारे जीवे गुरुवारे भृगौ शुक्रवारे। तत्र विधुबले द्वयोश्चन्द्र शुभे सति रिक्ता कुयोगो व्यतिपातवैधृतिमृत्युकाण यमघण्टाद्यैः उज्झिते रहिते। तच्चक्रे पट्टचक्रे अर्कभात् त्रिकं त्रिकं मध्येन्द्रदिक्तः क्रमेण लिखेत्। तत्र मुहूर्तनक्षत्रम् आग्नेय्यां शुभं न अनिले वायुकोणेऽपि शुभं न। अन्येषु दिग्विभागेषु मुहूर्तभं श्रेष्ठं ज्ञेयम्। विषयो देशः ज्ञातिः स्वकीयो वर्ण क्रमेण ज्ञातिस्तोयोक्तो धर्मः तं श्रयेत्। तथा चोक्तम्-

'न शास्त्रदृष्ट्या विदुषा कदाचिन्नो लङ्घनीयाः कुलदेशधर्माः।
मूलं हि तेषां च्युतवेदशाखा महानधर्म स्थितिभङ्गदोषात्॥' इति

इति यत्कुले विधवायाः पुनरुद्वह उचितस्तत्रैव देशे धर्मे तैरैव पूर्वोक्तयोगैः कार्यः॥५१॥

मोहनबोधिनी- अब पुंश्चल्या योग लिखा जा रहा है कि कब किसी विधवा का अन्य पुरुष के साथ सम्बन्ध किया जाए। इसके लिए रेवती, अश्विनी, कृत्तिका, हस्त,

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

अनुराधा और धनिष्ठा नक्षत्र लें। भौमवार, रवि, गुरु व शुक्रवार को देखें; चन्द्रबल, शुभदिवस देखें; रिक्तातिथि (४, ९, १४) सहित कुयोगों- व्यतिपात, वैधृति, मृत्यु, काल, यमघण्टादि योगों का त्याग कर दिया जाना चाहिए। इसके लिए सूर्य के नक्षत्र से पुनर्भूचक्र बनाकर देखना चाहिए। इसमें मध्य से पूर्वादि में तीन-तीन नक्षत्र क्रम से रखें और दिशानुसार देखें, आग्नेय कोण, वायुकोण के नक्षत्र अशुभ और अन्य दिग्विभागों के नक्षत्र शुभ होते हैं। (टीका के अनुसार) इस सम्बन्ध में क्षेत्र, जाति, स्ववर्ण, धर्म की परम्पराओं पर भी विचार किया जाना चाहिए। जिस कुल में विधवाओं का पुनर्विवाह उचित हो, वहाँ पर पूर्व धर्मानुसार कार्य किया जाना चाहिए। आगे चक्र से स्पष्ट किया जा रहा है-

दिशा	मध्य	पूर्व	अग्नि.	दक्षिण	नैर्ऋ.	पश्चि.	वाय.	उत्त.	ई.
सूर्यर्क्ष से गिने	३	३	३	३	३	३	३	३	३
फल	शुभ	शुभ	अशुभ	शुभ	शुभ	शुभ	अशु.	शुभ	शुभ.

नारायणदैवज्ञ ने पुनर्भूविवाह पर विचार करते हुए कहा है कि शूद्र एवं अन्त्यज वर्णों में विवाहोक्त नक्षत्रों में विधवा विवाह हो सकता है। इसमें तिथि मास शुद्धि, वेध, गुरु, शुक्र का अस्तादि दोष का विचार नहीं किया जाना चाहिए। सूर्य के नक्षत्र से ३ नक्षत्रों में मरण, बाद के ३ नक्षत्रों में धन, उसके बाद ३ में मरण, फिर ३ में पुत्रलाभ, तदनन्तर ३ में मरण, तदोपरान्त ३ में दुर्भगता, आगे के ३ में लक्ष्मी और शेष नक्षत्रों में उन्नति होती है। यह ब्रह्मपट्ट शुद्धि है। रुद्रपट्ट शुद्धि में सूर्य के नक्षत्र से १८, ११, ४, २५वें अभिजित् सहित इन नक्षत्रों में पुनर्भूविवाह होने से मरण तुल्य फल कहा जाता है- शूद्रान्त्येषु पुनर्भवापरिणयः प्रोक्तो विवाहोक्तभैर्नालोक्यं तिथिमासेवेधभृगुजेज्यास्तादि तत्रार्कभात्। त्रित्र्यृक्षेषु मृतिर्धनं मृतिमती पुत्रा मृतिर्दुर्भगं श्रीरौन्नत्यमथो धृतीशकृततत्त्वर्क्षेऽत्ययः साभिजित्॥ (मुहूर्तमार्तण्ड ४, ४२)

अथ गोचरफलम्-

लाभे लाभकृतोऽखिलाः षडनुजे पङ्गुः कुजोऽर्कः सखे
त्र्याद्यास्तारिखगः शशी व्ययगृहं त्यक्त्वा समे विद्धगुः।
षट्खास्तान्यमथास्तधर्मधनधीष्वीज्यः शुभो
जन्मभादुद्वाहे कुरसत्रिदिक्षु महितश्चेन्नो पैरर्वेधितः॥ ५२॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

महादेवटीकया- लाभ इति। अखिला ग्रहाः नवापि ग्रहाः लाभे एकादशस्थाने लाभकृतो भवन्ति। पङ्गुः शनिः कुजः भौमः षडनुजे षष्ठे तृतीये शुभः। अर्कः सूर्यः सखे षडनुजे दशम सहिते षडनुजे सूर्यः ३, ६, १० श्रेष्ठः शशी त्र्याद्यास्तारिखगः चन्द्र तृतीयः आद्यः प्रथमः अस्तः सप्तमः अरिः षष्ठः खगः दशमः श्रेष्ठः ३, १, ७, ६, १० विद् बुधः व्ययाख्यं द्वादशगेहं त्यक्त्वा समे २, ४, ६, ८, १० भृगुः षट् खास्तान्यं यथा तथा षष्ठदशमसप्तमगः शुक्रो नेष्टः। अन्येषु सर्वभावेषु श्रेष्ठः १, २, ३, ४, ५, ८, ९, ११, १२ ईज्यः गुरु अस्तधर्मधनधीषु ७, ९, २, ५ श्रेष्ठः जन्मभात् इदं गोचरफलं जन्मराशेर्गणयित्वा ज्ञेयम्। उद्वाहे विवाहे ईज्यः गुरु कुरसत्रिदिक्षु १, ६, ३, १० महितः पूजितः सन् शुभो भवति। पूजां कृत्वा लग्नं कार्यं, तदुक्तम्-

'षष्ठे जन्मनि देवेज्ये तृतीये दशमेऽपि वा।
भूरिपूजा प्रकर्तव्या कन्यायाः कथितं शुभम्॥'

अयं गोचरग्रहस्तत्फलं यत्कथितं शुभं स तदा फलं ददाति यदा परैर्नो वेधितः। अत्र गोचरे ग्रहवेधोऽप्युक्तोस्ति तथा च रत्नमालामुक्तम् *(१०, २-७ एवं ९)*-

'लाभ$_{११}$ विक्रम$_{३}$ ख$_{१०}$ शत्रुषु$_{६}$ स्थितः शोभनो निगदितो दिवाकरः।
खेचरे सुत$_{५}$ तपो$_{९}$ जलां$_{४}$ त्य$_{१२}$ गैर्व्यार्किभिर्यदि न विद्ध्यते तदा॥ १॥'

अत्र शनिर्न विद्ध्यति।

'द्यून$_{७}$ जन्म$_{१}$ रिषु$_{६}$ लाभ$_{११}$ ख$_{१०}$ त्रिग$_{३}$ श्चन्द्रमाः शुभफलप्रदस्तदा।
स्वा$_{२}$ त्मजा$_{५}$ त्य$_{१२}$ मृति$_{८}$ बन्धु$_{४}$ धर्म$_{९}$ गैर्विद्ध्यते न विबुधैर्यदि ग्रहैः॥ २॥'

अत्र चन्द्रस्य बुधवेधो नास्ति।

'विक्रमा$_{३}$ य$_{११}$ रिपुगः$_{६}$ शुभः कुजः स्यात्तदान्त्य$_{१२}$ सुत$_{५}$ धर्मगैः$_{९}$ खगै।
चेन्न विद्ध इनसूनुरप्यसौ किन्तु घर्मघृणिना न विद्ध्यते॥ ३॥'

शनिस्तु सूर्येण न विद्ध्यते।

'स्वा$_{२}$ म्बु$_{४}$ शत्रु$_{६}$ मृति$_{८}$ खा$_{१०}$ यगः शुभो ज्ञस्तदा न खलु विद्ध्यते यदा।
आत्मन$_{५}$ त्रि$_{३}$ तप$_{९}$ आद्य$_{१}$ नैधन$_{८}$ प्रान्त्य$_{१२}$ गैर्विविधुभिर्नभश्चरै॥ ४॥'

बुधस्य चन्द्रवेधो न।

'स्वा$_{२}$ य$_{११}$ धर्म$_{९}$ तनया$_{५}$ ङ्गना$_{७}$ स्थितो नाकनायकपुरोहितः शुभः।
रिष्फ$_{१२}$ रन्ध्र$_{८}$ ख$_{१०}$ जल$_{४}$ त्रि$_{३}$ गैर्यदा विद्ध्यते गगनगामिभिर्न हि॥ ५॥

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

आसुताष्टम$_{८}$ तपो$_{९}$ व्यया$_{१२}$ य$_{११}$ गो विद्ध आस्फुजिदशोभनः स्मृतः।

नैधना$_{८}$स्त$_{७}$ तनु$_{२}$ कर्म$_{१०}$ धर्म$_{९}$ धी$_{५}$ लाभ$_{११}$ वैरि$_{६}$ सहज$_{३}$ स्थखेचरै॥ ६॥'

शुक्र एवं विधो विचार्यः यदा वेधकस्थाने ग्रहो भवति ग्रहस्थाने वेधको भवति तदा शुभफलं ग्रहाः प्रयच्छन्ति। तथा चोक्तम्–

'एवमत्र खचरा व्यधान्विताः सत्फलं नहि दिशन्ति गोचरे।

वामवेधविधिना त्वशोभना अप्यमी शुभफलं दिशन्त्यलम्॥ १॥'

अत्र प्रायः सम्मुखो बेधो भवतीति प्रायेण सर्वत्रेति।

उक्तं च–

'स्वराशेर्यत्र खेटः स्यात्खेटाद्यत्र ग्रहो भवेत्।

तत्र वेधोऽक्षमो ज्ञेयो यथोक्तफलदो ध्रुवम्'॥ ५२॥

मोहनबोधिनी– गोचर में सभी नौ ग्रह लाभ या ग्यारहवें स्थान पर शुभ माने जाते हैं। शनि, मङ्गल छठे और तीसरे स्थान पर शुभ होते हैं। सूर्य तीसरे, छठे सहित दसवें स्थान पर श्रेष्ठ है। चन्द्रमा जन्म, तीसरे, सातवें, छठे, दसवें स्थान पर शुभ है। बुध व्यय नामक बारहवें स्थान को छोड़कर दूसरे, चौथे, छठे, आठवें, दसवें स्थान पर सम होता है। शुक्र छठे, दसवें और सातवें स्थान पर नेष्ट किन्तु अन्य सभी भावों में पहले, दूसरे, तीसरे, चौथे, पाँचवें, आठवें, नवें, ग्यारहवें, बारहवें भाव में श्रेष्ठ माना गया है। गुरु सातवें, नवें एवं बारहवें भाव में श्रेष्ठ है। जन्म नक्षत्रों के साथ ग्रहों का इस प्रकार गोचर फल कहा गया है इसकी गणना जन्म राशि से की जानी चाहिए। विवाह में गुरु पहले, छठे, तीसरे एवं दसवें स्थान में हो तो पूजा कर लग्न किया जाना चाहिए।

नौकायानम्–

पूर्वासु श्रवणद्वये मृदुलघुष्वादित्य इष्टे तिथौ

शुक्रार्केज्यदिने खलैरुपचयेष्विष्टैरषष्ठाष्टगैः।

नौयानं सदथोत्तरायममघार्केज्यश्रुतौ तद्भृति-

र्व्यापारो मृदुभे चरर्क्षलघुभेऽर्कारार्किरिक्तोज्झिते॥ ५३॥

महादेवटीकया– पूर्वास्विति। एषु योगेषु नौयानं नौकाप्रयाणं श्रेष्ठम्। क्व पूर्वासु तिसृषु श्रवणद्वये मृदुषु लघुषु आदित्यः पुनर्वसुः इष्टे तिथौ रिक्तातिथिरहिततिथौ

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

शुक्रार्केज्यदिने शुक्ररविगुरुदिनेषु तत्र लग्ने उपचयेषु त्र्यारिखायेषु खलैरशुभग्रहैः इष्टैः शुभग्रहैः अषष्ठाष्टगैः षष्ठाष्टमरहितैः सद्ग्रहैः सद्भिः नौका चालनीया।

अथेत्यनन्तरम् उत्तरायममघार्केज्यश्रुतौ तस्याः भृतिः नौकामध्ये वसुप्रक्षेपः कार्यः। तत्तटे गत्वा अर्कारार्किरिक्तोज्झिते समये रविभौमशनिवाररिक्तातिथिरहिते समये मृदुभे चरर्क्षे लघुभे व्यापारः कार्यः।

'साधारणोग्रध्रुवदारुणाख्ये धिष्ण्ये यदत्र द्रविणं प्रयुक्तं।

न लभ्यते तन्नियतं कदाचित्' *(ज्योतिषरत्नमाला ४, ३५)*

इति (श्रीपति) वचनात् मिश्रक्रूरस्थिरतीक्ष्णेषु व्यवहारो निषिद्ध॥५३॥

मोहनबोधिनी– अब नौकायन के लिए श्रेष्ठ मुहूर्त कहा जा रहा है। तीनों पूर्वा, श्रवण, धनिष्ठा, मृदु (मृगशिरा, चित्रा, अनुराधा, रेवती), लघु (अश्विनी, पुष्य, हस्त, अभिजित्) पुनर्वसु– इन चौदह नक्षत्रों में; शुभ तिथि में; रिक्तातिथि (४, ९, १४) को त्यागकर, शुक्रवार, रवि, गुरुवार व उपचयादि (३, ६, १०, ११) पर विचार करते हुए पापग्रहों की अपेक्षा शुभ ग्रहों को ग्राह्य करें तथा षष्ठाष्टम या षड–अष्ठम योग का त्याग करते हुए नौका सञ्चालन किया जाना चाहिए। इसके बाद उत्तरायण; मघा, भरणी, हस्त, पुष्य तथा श्रवण नक्षत्रों में नौका में व्यापार के लिए सामान रखें। रविवार, भौम, शनिवार, रिक्तातिथि व भद्रा को छोड़कर नाव को तट पर ले जाना चाहिए। व्यापार करते समय मृदु, चर (पुनर्वसु, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा) एवं लघु नक्षत्रों को लें। इस प्रसंग में मिश्र (कृत्तिका, विशाखा, भरणी), क्रूर (भरणी, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़, पूर्वाभाद्रपद), स्थिर (रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उत्तराभाद्रपद) व तीक्ष्ण (आर्द्रा, आश्लेषा, ज्येष्ठा, मूल) नक्षत्रों का व्यवहार निषिद्ध कहा गया है।

टीका में ग्रन्थकार ने श्रीपति की उक्ति को उद्धृत किया है जिसके अनुसार साधारण नक्षत्र, उग्र, ध्रुव और दारुण संज्ञक नक्षत्रों में किसी अन्य को दिए गए धन–द्रव्य अथवा निवेश किए गए धन की पुनप्राप्ति असम्भव होती है।

नौकामुहूर्त सम्भवतः सर्वप्रथम केशवदैवज्ञकृत मुहूर्ततत्त्वम् (१०, १–२) में आया है। इसे गणेश ने अपनी टीका में विवेचित किया है। इसी आधार पर रामदैवज्ञ ने भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, विशाखा, ज्येष्ठा, आश्लेषा, मघा, आर्द्रा इन नौ नक्षत्रों को छोड़कर शेष १८ नक्षत्रों में सूर्य, गुरु और रविवार में शुभग्रहों के लग्न में नौका की रचना आरम्भ करना शुभ माना है– याम्यत्रयविशाखेन्द्रसार्पपित्र्येशभिन्नभे। भृग्विज्यार्कदिने नौकाघटं सत्तनौ शुभम्॥ (मुहूर्तचिन्तामणि २, ३८)

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

दीपिकाकार का मत है- ज्ञभेहरिघटलग्ने शुक्रपित्र्यद्विदैवे त्रिनयनविधियाम्य-द्वन्द्वसार्पान्त्यभेषु। सुकरणतिथियोगे शुक्रजीवार्कवारे तरणिघटनमिष्टं चंद्रताराविशुद्धौ॥ (शुद्धिदीपिका ७, ६१)

नौका का घटनस्थान से सञ्चालन के सम्बन्ध में दीपिका में पुनः कहा गया है कि शुभग्रह के लग्नों व वारों तथा श्रवण, धनिष्ठा, पूर्वाफाल्गुनी, अनुराधा, अश्विनी, हस्त में नाव को उसके निर्माणस्थान से चलना प्रशस्त है- शुभाहे विष्णुयुग्मेन्दुभगमैत्राश्विपाणिषु। चालनं घटनस्थानान्नावः शुभतिथीन्दुषु॥ (वही ६२)

समुद्रादि उपलक्षण से नौकायात्रा मुहूर्त देते हुए दीपिकाकार ने कहा है कि शुभतिथिवार योग, लग्न के साथ अश्विनी, हस्त, पुष्य, मृगशिरा, पूर्वाफाल्गुनी, धनिष्ठा और श्रवण नक्षत्रों में नौकायात्रा शुभद होती है- अश्विकरेज्यसुधानिधिपूर्वामित्रधनाच्युतभे शुभलग्ने। तारकयोगतिथीन्दुविशुद्धौ नौगमनं शुभदं शुभवारे॥ (वही ६३)

आगे कहा गया है कि भरणी, आर्द्रा व मघा नक्षत्र में नौकायात्रा किए जाने से मृत्यु होती है, यही नहीं स्वप्न में यदि क्रूर दूषित नक्षत्र में नौकायात्रा करें तो फल वही होता है- नौकायात्रासु मृत्युः स्यात् पक्षरुद्रमघासु च। स्वप्नेनापि नरो गच्छेन्नक्षत्रे क्रूरदूषिते॥ (वही ६४)

नौका विषयक महत्वपूर्ण जानकारी देने वाले ग्रन्थ भोजकृत युक्तिकल्पतरु (२२३, ८१-८२) में भी उक्त मुहूर्त ही दिया गया है। ज्योतिषसार में कहा गया है कि रेवती, पुनर्वसु, अश्विनी, आश्लेषा, शतभिषा, अनुराधा, चित्रा, मृगशिरा, हस्त, धनिष्ठा व पुष्य नक्षत्र तथा गुरु, शुक्रवार में नौका बनवाना या जल में उतारना श्रेष्ठ माना गया है- पौष्णादितिस्तुरगवारुणमित्रचित्रशीतोष्ण रश्मिवसुजीवकभान्यमूनि। वारे च जीवभृगु-नन्दनकौ प्रशस्तौ नौकादिसंघटनवाहनमेषु कुर्यात्॥

मुहूर्तपारिजात में नौका में व्यापार सम्बन्धी वस्तु समूह को विदेशादि के लिए निर्यात करने में प्रयोज्य मुहूर्त निम्न दिया गया है-

तिथि- १ (कृ.), ३, ५, ६, ८, १०, ११, १३ (शु.), १५

वार- चन्द्रवार, बुधवार, गुरुवार, शुक्रवार

नक्षत्र- अश्विनी, रोहिणी, मृगशिरा, पुष्य, उत्तरात्रय, हस्त, चित्रा, अनुराधा, अभिजित् एवं रेवती।

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

अथ नौकाचक्रम्-

एकैकं कूपवस्त्रे तरुतलत उदक् षट् भानि दद्यात्पठाणे-
ऽप्येकैकं पृष्ठपार्श्वे नव कुमुडुमुखे मध्य एकं भृतौ षट्।
भास्वद्धिष्ण्यात्पठाणाननशिखरतले नो सदिष्टं सुकाणे
मध्ये सिद्धिः पठाणे भयमिह गदितं पोतचक्रे फलज्ञैः॥ ५४॥

महादेवटीकया- एकैकमिति। भास्वद्धिष्ण्यात् सूर्यभात् एकं एकं कूपवस्त्रे कूपशब्देन नौकामध्यकाष्ठं वस्त्रं शटिः तत्र एकं एकं धिष्ण्यं लिखेत्। तरुतलतः उदक् षट् षड् भानि दद्यात् पठाणे एकैक पठाणं नौकामण्डनकाष्ठं तत्रैकं सुकाणे कर्णधारनिवेशस्थानेऽपि एकैकं पृष्ठपार्श्वे नव नवकं पृष्ठं पार्श्वे च पृष्ठपार्श्वम् तस्मिन् द्वयोः पार्श्वयोः त्रीणि पृष्ठे त्रीणि एवं नवकं उडुमुखे नौमुखे कुं एकं भृतौ षट् भृतिस्थाने षट् देयानि। तत्र पठाणाननशिखरतले नो सत् पठाणे नो सत् नौमुखे नो सत् शिखरे कूपमस्तके नो सत् तले नव धिष्ण्यानीष्ठानि इष्टं सुकाणे मध्ये सिद्धिः मध्ये त्रयोदश भानि सिद्धिदानि पठाणे (शठाख्ये) भयम् इह पोतचक्रे फलज्ञैः॥ ५४॥

मोहनबोधिनी- अब नौकाचक्र लिखा जा रहा है। नौकाकूप को परिकल्पित कर साभिजित् सूर्य के नक्षत्र से दिन के नक्षत्र तक गणना करें और नौका के कूप में १-१, ऊपर १, तल पर १, उदक के भाग में ६, पठाण में १, शुक्काण में १, पीछे के पार्श्व में ९, मुँह में १, भृति में ६ नक्षत्रों का विन्यास करना चाहिए। इन में से यदि वर्तमान का नक्षत्र पठाण, मुँह, ऊपर तथा तल में विद्यमान दिखाई देता हो तो अशुभ जानना चाहिए। पार्श्व और शुक्काणगत नक्षत्र सिद्धिकारक हैं।

यह मत ज्योतिषसार का भी है- रविभुक्तर्क्षमारभ्य कुर्यात्त्रीण्युदये च षट्। नाल्यां त्रीणिहृदि त्रीणि पृष्ठेभूः पार्श्वगन्त्रयम्॥ शुक्काणेत्रीणिषण्मध्ये नौकाच्चक्रेभ संस्थितिः॥ उपरिस्थं च मध्यस्थं षट्श्रेष्ठं च परं नसत्॥ (पृष्ठ १६०)

इसमें लग्न और ग्रहबल के लिए ज्योतिषसारकार का कथन है कि नौका में माल भरने अथवा चलाने के लग्न का ग्रह बलवान् तृतीय, षष्ठ, एकादश इन स्थानों में सूर्य अथवा चन्द्रमा, मङ्गल एवं शनि ग्रह हो तो शुभ एवं ३, ६, १० स्थानों को छोड़कर अन्य स्र्थानों में गुरु शुभ २, ५, ७, ८, १२, ६ इन स्थानों में बुध हो तो शुभ, ७, १२, ६ स्थानों को छोड़कर अन्य स्थान शुभ जानना चाहिए- त्रिषडायगतः सूर्यश्चन्द्रोद्वित्र्यायगः

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

शुभः। कुजार्कीत्रिषडायस्थौ त्रिषट् खेतरगोगुरुः॥ द्विसुतास्ताष्टरिः फायरिपुसंस्थो बुधस्मृतः॥ सुखान्त्यारिन्विनायत्र नौयाने शुभदः सितः॥ (वही)

नौकास्थान के ग्रहों के लिए कहा गया है कि लग्नकुण्डली में जो-जो ग्रह जिस-जिस स्थान पर हो, उसका फल इस प्रकार जाने कि नाली में पापग्रह हो तो शुभदायक, शुक्राण पर शुभग्रह हो तो शुभ, ये विपरीत हो तो अशुभ, क्रूरग्रह पीठपर या कूर्प पर आएँ तो भयदायक और इन ग्रहों में से बाहर दो आएँ तो लाभ होता है, इस प्रकार विचार करना चाहिए- नाल्यापापखगाः सौम्याः शुक्राणेशुभकारकाः। व्यस्ता-मृत्युकराः क्रूरापृष्ठेकूर्पे च भीतिकृत्॥ अन्तेबाह्येस्थितास्ते चह्यलाभाय स्मृता बुधैः। एवं विचार्य दैवज्ञौ नौयानं समयं वदत्॥ (वही)

चतुर्मण्डलानि-

आग्नेयं न सदन्त्यपित्र्ययमभं मिश्रं भगाजाङ्घ्रिभं
वायव्यं मृगदस्त्रवाय्वदितिभं त्वाष्टार्यमार्कोडु च।
ऐन्द्रे मैत्रकमैन्द्रमिष्टफलदं वैश्वाच्चतुष्कं तथोत्पाते
मूलमुपान्त्यसर्पवरुणांब्वीशेज्यभं वारुणम्॥ ५५॥

महादेवटीकया- आग्नेयमिति। उत्पाते त्रिविधे दिव्यान्तरिक्षभौमलक्षणे मण्डलद्वयं न सत्। तत्किं, अन्त्ये रेवती पित्र्यं मघा यमभं भरणी मिश्रं कृत्तिकाविशाखे भगं पूर्वाफाल्गुनी अजांघ्रिभं पूर्वाभाद्रपदा एतदाग्नेयं मण्डलम् अग्निसम्बन्धमण्डले उपसर्गे न सत्। च परं मृगदस्त्रवाय्वदितिभं त्वाष्ट्रार्य मार्कोडु मृगशीर्षमश्विनीस्वातीपुनर्वसुचित्रोत्तराफाल्गुनीहस्तम् इदं वायव्यमण्डलम् तत्रापि उत्पाते न सत्। मैत्रमनुराधा कं रोहिणी ऐन्द्रं ज्येष्ठावैश्वा-दुत्तराषाढायश्चतुष्कम् उत्तराषाढाभिजिच्छ्रवणधनिष्ठा एतदैन्द्रमण्डलम् भवेत् तत् इष्टफलदम्। मूलमुपान्त्यमुत्तराभाद्रपदा सर्प आश्लेषा वारुणं शततारका अम्बु पूर्वाषाढा ईशमार्द्रा ईज्यभं पुष्यः इदं वारुणमण्डलम् उत्पाते इष्टफलदम्। तथा चोक्तममृतकुम्भे-

'अर्यम्णचित्रादितिभैन्दवाश्विस्वात्योऽर्कभं चेति गणोऽनिलस्य।
याम्याजपादाग्निभगोऽपि पौष्णमघाविशाखा हुतभुग्गणोऽयम्॥
तोयेशाहिर्बुध्न्यरक्षोम्बुपूषासर्पेशानं वारुणाग्निश्च भानि।
मैत्रं ब्राह्मं वैष्णवं वासवैन्द्र वैश्वं चैन्द्रोऽयं भवर्गोऽभिजिच्च॥'

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

इति। फलम्-

'वायोर्गणात्कोऽपि यदोपसर्गो भवेत्तदानीं पवनोऽतिचण्डः।
सिक्ता भवेद्वा रुधिरेण भूमिर्लोके नृप चापि महानधर्मः॥ १॥
वह्नेर्गणे नेत्ररुजोऽतिसारः पृथ्व्यर्घहानिर्ज्वलनप्रकोपः।
गाश्चाल्पदुग्धास्तरवोऽतिफलाः स्युर्गर्भप्रपातश्च नितम्बिनीनाम्॥ २॥
गावो बहुक्षीरघृतादियुक्ता वृक्षाः प्रजाः क्षेमसुभिक्षयुक्ताः।
मेघाः प्रभूताम्बुमुचो भवन्ति वर्गे जलेशस्य च सोपवर्गे॥ ३॥
महेंद्रवर्गे वनितासु सौख्यं प्रजाश्च सर्वा मुदिता भवन्ति।
निकामवर्षी मघवा धरित्री प्रभूतसस्याधिगमश्च विद्यात्॥ ४॥' इति॥ ५५॥

मोहनबोधिनी- अब उत्पात फलज्ञानार्थ चतुर्विधमण्डलों के विषय में कहा जा रहा है। विभिन्न उत्पात जिस मण्ड़ल में होते हैं, उस मण्डल के स्वभावानुसार ही द्रव्य, प्राणी एवं देश प्रभावित होते हैं। चार मण्डल निम्नानुसार हैं-

अग्निमण्डल- रेवती, मघा, भरणी, कृत्तिका, विशाखा, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाभाद्रपद।

वायुमण्डल- मृगशिर, अश्विनी, स्वाती, पुनर्वसु, चित्रा, उत्तराफाल्गुनी, हस्त।

इन्द्रमण्डल- अनुराधा, रोहिणी, ज्येष्ठा, उत्तराषाढ़, अभिजित्, श्रवण, धनिष्ठा।

वरुणमण्डल- मूल, उत्तराभाद्रपद, रेवती, आश्लेषा, शतभिषा, पूर्वाषाढ़ और आर्द्रा। ग्रन्थकार ने इसमें पुष्य नक्षत्र की गणना भी की है।

यहाँ अमृतकुम्भ ग्रन्थ का मत देते हुए ग्रन्थकार ने मत व्यक्त किया है कि वायव्यमण्डल में उपसर्ग से अन्धड़ या चक्रवात या रक्तपात होता है। अग्निमण्डल में उत्पात से नेत्र व्याधि, अतिसार, आगजनी, गर्भस्राव की आशंका रहती है। वारुण मण्डल में उपसर्ग से दुग्ध, धन-धान्य का आधिक्य तथा सुख बढ़ता है। लगभग ऐसा ही इन्द्रमण्डल में भी फल होता है।

घाततिथिवारनक्षत्रचन्द्राः

नंपूभाभजपूरिनंजरिजपूर्घाता तिथिमेषभात्
सूशश्चम्बुशशाबृशुःशुमगुरुर्वारा महस्वानुमूः।

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

श्रूपूषान्त्यभरोशिवाहिभमथो चन्द्रेषुनन्द₉द्वि₂षट्₆ -
दिग्रामाद्रियुगाष्टरुद्ररवयो घातं भमिन्दुस्तथा ॥ ५६ ॥

महादेवटीकया- नमिति। मेषभात् मेषराशेः सकाशादेतास्तिथयो घाताः स्युः। ताः काः ? नं नन्दा पू पूर्णा भा भद्रा भ भद्रा ज जया पू पूर्णा रि रिक्ता नं नन्दा ज जया रि रिक्ता पू पूर्णा एताः तिथयः।

अथ घातवारः। सू सूर्यः श शनिः चं चन्द्रः बु बुधः श शनिः शा शनि बृ बृहस्पतिः शु शुक्रः म मङ्गलः गु गुरुः शु शुक्रः इति घातवाराः।

अथ घातभम्। म मघा ह हस्तः स्वा स्वातिः अनु अनुराधा मू मूलं श्रू श्रवणं पूषा पूर्वाषाढा अन्त्यं रेवती भ भरणी रो रोहिणी शिवा आर्द्रा अहिभं आश्लेषा इति घातनक्षत्राणि।

अथो अनन्तरं घातचन्द्रः। चन्द्रः प्रथमः इषवः पञ्च नन्दा नव द्वि द्वौ षट् षष्ठः दिक दशमः रामस्तृतीयः अद्रिः सप्तमः युगानि चतुर्थः अष्ट अष्टमः रुद्राः एकादश रवयो द्वादश एते घातचन्द्राः कथिताः। इदं यद्यपि घातचतुष्टयं निर्मूलं दृश्यते। तथापि रामज्योतिर्विदा मुहूर्तचिन्तामणौ *(११, २७)* लिखितत्वात्-

'भूपञ्चाङ्कद्व्यङ्गदिग्वह्निसप्तवेदाष्टेशार्काश्च घाताख्यचन्द्राः।

मेषादीनां राजसेवाविवादे यात्रायुद्धोद्वाहकालेषु नूनम्॥' इति ५६॥

मोहनबोधिनी- मेषादि राशियों में मेष का चन्द्रमा, मघा नक्षत्र, नन्दातिथि व रविवार को सम्मुख घातक माना जाता है। अत एव वे शुभकार्यों में वर्जित होते हैं। अन्य राशियों के अनुसार घात तिथि, वार, नक्षत्र, चन्द्रमा आदि निम्नानुसार त्याज्य हैं-

घातकचन्द्रनक्षत्रतिथिवारज्ञानचक्रम्-

क्रम	राशि	चन्द्र	नक्षत्र	तिथि	वार
१.	मेष	मेष	मघा	नन्दा	रवि
२.	वृष	सिंह	हस्त	पूर्णा	शनि
३.	मिथुन	धनु	स्वाती	भद्रा	सोम
४.	कर्क	वृष	अनुराधा	भद्रा	बुध
५.	सिंह	कन्या	मूल	जया	शनि
६.	कन्या	मकर	श्रवण	पूर्णा	शनि

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

७.	तुला	मिथुन	शतभिषा	रिक्ता	गुरु
८.	वृश्चिक	तुला	रेवती	नन्दा	शुक्र
९.	धनु	कर्क	भरणी	जया	शुक्र
१०.	मकर	वृश्चिक	रोहिणी	रिक्ता	भौम
११	कुम्भ	कुम्भ	आर्द्रा	जया	गुरु
१२.	मीन	मीन	आश्लेषा	पूर्णा	शुक्र

व्यवहाररत्नम् में यही मत है- *जन्मेन्दुनन्दार्कमघा च मेषे वृषे शनिः पञ्चहस्तपूर्णाः। स्वाती च युग्मे नवचन्द्रभद्राः कर्कऽनुराधाबुधयुग्मभद्राः॥ सिंहे जया षट्शनिश्च मूलं पूर्णा शनिर्दिक् श्रवणस्त्रियाश्च। गुरुस्त्रिरिक्ता शतभं तुले च नन्दालिके रेवतिसप्तशुक्राः॥ चापे चतुःशुक्रजयाभरण्यो मृगेऽष्टमो रोहिणिभौमरिक्ताः। कुम्भे जयाऽऽर्द्रागुरुरुद्रघाता झषे भृगुश्चाऽन्त्यभुजङ्गपूर्णा॥* (१, ४६-४८)

रामदैवज्ञ का कथन है कि मेषादि राशि वालों के लिए क्रम से पहला, पाँचवाँ, नवम आदि अर्थात् मेषादि राशिवाले जातकों के लिए प्रथम (मेष) राशि का चन्द्रमा, वृष राशि वालों के लिए पाँचवाँ (कन्या), मिथुन राशि वालों के लिए नवीं (कुम्भ), कर्क राशि वालों के लिए दूसरी (सिंह), सिंह राशि वालों के लिए छठी (मकर), कन्या राशि वालों के लिए दसवीं (मिथुन), तुला राशि वालों के लिए तीसरा (धनु), वृश्चिक राशि वालों के लिए (वृष) धनु राशि वालों के लिए चौथी (मीन), मकर राशि वालों के लिए आठवीं (सिंह), कुम्भ राशि वालों के लिए ग्यारहवीं (धनु) तथा मीन राशि वालों के लिए बारहवीं (कुम्भ) राशि का चन्द्रमा घातक होता है। घात चन्द्र होने पर राज्यसेवा एवं विवाद, शास्त्रार्थ, बहस, युद्ध, यात्रा, विवाह आदि काल में वर्जित होता है। अन्य शुभ कार्यों में इसे वर्जित नहीं माना गया है। (मुहूर्तचिन्तामणि ११, २७)

इसी प्रकार वृष, कन्या मीन राशि वाले व्यक्तियों के लिए पूर्णा तिथि (५, १०, १५), मिथुन, कर्क राशि वालों के लिए भद्रा (२, ७, १२), वृश्चिक, मेष राशि वालों के लिए नन्दा (१, ६, ११), मकर, तुला राशि वालों के लिए रिक्ता (४, ९, १४) और धनु, कुम्भ व सिंह राशि वालों के लिए जया तिथियाँ (३, ८, १३) घाततिथि मानी गई हैं। इनमें यात्रा वर्जित कही गई है- *गोस्त्रीझषे घाततिथिस्तु पूर्णा भद्रा नृयुक्कर्कटकेऽथ नन्दा। कौर्प्याजयोर्नक्रघटे च रिक्ता जया धनुः कुम्भहरौ न शस्ताः॥* (वही ३०)

घातवारों के सम्बन्ध में कहा गया है कि मकर राशि वालों के लिए मङ्गलवार,

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

वृष, सिंह, कन्या राशि वालों के लिए शनिवार, मिथुन राशि वालों के लिए सोमवार, मेष राशि वालों के लिए रविवार, कर्क राशि वालों के लिए बुधवार, धनु, वृश्चिक, मीन राशि वालों के लिए शुक्रवार, तुला, कुम्भ राशि वालों के लिए वृहस्पति को घातवार माना गया है। इनको यात्रा में त्याग दिया जाना चाहिए- नक्रे भौमो गोहरिस्त्रिषु मन्दश्चन्द्रो द्वन्द्वेऽर्कोऽजभे ज्ञश्च कर्के। शुक्रः कोदण्डालिमीनेषु कुम्भजूके जीवो घातवारा न शस्ताः॥ (वही ३१)

घातनक्षत्रों के सम्बन्ध में रामदैवज्ञ ने कहा है कि मेषादि राशि वालों के लिए मघा, वृष राशि वालों के लिए हस्त, मिथुन राशि वालों के लिए स्वाती, कर्क राशि वालों के लिए अनुराधा, सिंह राशि वालों के लिए मूल, कन्या राशि वालों के लिए श्रवण, तुला राशि वालों के लिए शतभिषा, वृश्चिक राशि वालों के लिए रेवती, धनु राशि वालों के लिए भरणी, मकर राशि वालों के लिए रोहिणी, कुम्भ राशि वालों के लिए आर्द्रा, मीन राशि वालों के लिए आश्लेषा नक्षत्र घातनक्षत्र माने जाते हैं अतः इन्हें यात्रादि प्रसङ्ग में त्याग दिया जाना चाहिए- मघाकरस्वातिमैत्रमूलश्रुत्यम्बुपान्त्यभम्। याम्यब्राह्मेश-सार्पञ्च मेषोदर्घातभं न सत्॥ (वही ३३)

शुक्रास्तादिविचारः

चापेन्त्ये दिनकृत्यपायनगते जीवे च सिंहस्थिते
बालेऽस्तेऽप्यतिचारगे स्थविरतां प्राप्ते तथा भार्गवे।
सीमन्तोऽन्नभुजिस्तथोपकरणं दन्ताब्ज्कौसुम्भकं
धार्यं स्त्रीभिरिदं सदापि च परं कार्यं न कार्यं कदा॥ ५७॥

महादेवटीकया- चापेन्त्य इति। दिनकृति सूर्ये चापे धनुषि स्थिते अन्त्ये मीनगतेऽर्के वा आपायनगते दक्षिणायनगते जीवे गुरौ सिंहस्थिते वा जीवे बालेऽस्ते वाऽतिचारगे वा स्थविरतां प्राप्ते सति सीमन्तकर्म अन्नभुजिः अन्नप्राशनं तथा स्त्रीभिरूपकरणं भूषणं दन्तशब्देन करभूषा अब्जं मौक्तिकं कौसुम्भकं तथा वस्त्रादि इदं सदा स्त्रीभिर्धार्यं कदापि न कार्यं अत्र परिशेषविधानात् सर्वं निषिद्धमुक्तम्। तथा चोक्तं ज्योतिर्निबन्धे-

'नीचस्थे वक्रिते वाप्यतिचरणगते बालवृद्धास्तमे वा
संन्यासो यज्ञयात्राव्रतनियमविधिः कर्णवेधोऽपि दीक्षा।
मौञ्जीबन्धोऽङ्गनानां परिणयनविधिर्वास्तुदेवप्रतिष्ठास्त्याज्याः

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

सद्भिः प्रयत्नात्त्रिदशपतिगुरुर्लोपसंस्थे हरिस्थे॥ १॥'

तत्र शुक्रास्ते प्रतिप्रसवमाह *(ज्योतिर्निबन्ध पृष्ठ ८९, १)*–

'नृत्ये याने गृहे जीर्णे प्राशनान्तेषु सप्तसु।
वधूप्रवेशमाङ्गल्यं न मौढ्यं गुरुशुक्रयोः॥ २॥'

वधूप्रवेश इत्युद्वाहिताया एव गृहप्रवेशः। निर्णयसिद्धान्तेऽपि–

'प्रागस्तादुदयात्परं सुरगुरुः पक्षेऽथवा वार्धके
बालेऽस्ते स्थविरे सिते सुरगुरौ कार्यं न कुर्यादिदम्।
चौलादुद्वहनान्तमालसुरथानव्यो न वध्वागमोद्योपा-
कर्ममहार्पणं व्रतनवोत्सर्गा हरेज्याध्वराः॥ १॥'

अन्यच्च–

'अस्तङ्गते गुरौ शुक्रे बाले वृद्धे मलिम्लुचे।
व्रतारम्भोत्सर्जनं च न कुर्यान्मौञ्जिबन्धनम्॥
वापी-कूप-तडागादिप्रतिष्ठा यज्ञकर्म च।
गृहप्रवेशं गोदानं स्थानोत्सवमहोत्सवान्।
न कुर्यान्मलमासेषु गुरुशुक्रे तथास्तगे॥'

तत्रापि सिंहस्थे गुरौ भूपालवल्लभे विशेषः कथितोऽस्ति–

'अष्टाविंशतिवासरान्सुरगुरोर्वक्रातिचारे त्यजेत्सिंहे
पञ्चनवांशकान् मृगगते पञ्चैव नीचांशकान्।
गोदाभ्यन्तरवासिनां व्रतविवाहक्षौरकार्यादिकं
कार्यं तत्र सदात्र नापरतरं तीर्थं हि गोदाजलात्॥ १॥
गर्भाधानादिकाः सर्वा प्राशनान्ताः क्रियाश्च ताः।
कर्तव्याः सर्वदेशेषु सिंहस्थे च बृहस्पतौ॥ २॥
गोदावर्युत्तरे तीरे भागीरथ्याश्च दक्षिणे।
विवाहादि न कर्तव्यं सिंहस्थे च बृहस्पतौ॥ ३॥
वरलाभातिकालाभ्यां दुर्भिक्षाद्देशविप्लवात्।

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

गौतम्या दक्षिणे तीरे सिंहस्थेऽप्युद्वहः शुभः ॥ ४ ॥

सिंहस्थेऽपि मघासंस्थं गुरुं यत्नेन वर्जयेत्।

अन्यत्र सिंहभागेषु विवाहादि विधीयते ॥ ५ ॥

षष्टिभिर्दिवसैर्मासैः कथितो बादरायणैः। *(राजमार्तण्ड १०५६)*

उत्तरे देवकार्याणि पितृकार्याणि चोभयोः ॥ ६ ॥'

एवं गुरोरतिचाराल्लुप्ताब्द आयाति। तथा चोक्तम् मुहूर्तचिन्तामणौ *(१, ५३)*-

'गोजान्त्यकुम्भेतरभेऽतिचारगो नो पूर्वराशिं गुरुरेति वक्रितः।

तदा विलुप्ताब्द इहातिर्निंदितः शुभेषु रेवासुरनिम्नगान्तरे॥'

इत्याद्यखिलमूह्यम् ॥ ५७ ॥

मोहनबोधिनी- अब वृहस्पति एवं शुक्र के अस्त- वृद्धत्व, अस्त, शिशुत्व या बाल्यत्व में त्याज्य कार्यों पर विचार किया जा रहा है। सूर्य के धनु राशि या मीन राशि में होने और दक्षिणायन में होने पर और गुरु के सिंह व मकर राशिस्थ, मार्गगति या अतिचार होने पर शुक्र के बाल्यादि होने पर सीमन्तकर्म, अन्नप्राशन, स्त्रियों के हाथीदाँत के चूड़े, कर-कङ्कणादि आभरण से अलङ्कृत होने, मोती, कुसुमल रङ्ग के वस्त्र-परिधान धारण करने जैसे कार्य कदापि नहीं करने चाहिए। (टीका के अनुसार) ज्योतिर्निबन्धकार का मत है कि संन्यास, हवन, यात्रा, व्रत, कर्णवेध, दीक्षा, मौञ्जीबन्धन, विवाह, वास्तु सम्मत कार्य, देवताओं की स्थापना आदि कार्य इस अवधि में त्याज्य है तथापि वधूप्रवेशन, नृत्य-लीला, सामान्य गमन, पुराने गृह में प्रवेश आदि में गुरु और शुक्र दोष नहीं देखना चाहिए। गोदावरी के उत्तरवर्ती प्रदेशों में ही सिंहस्थ गुरु वर्जित माना गया है न कि गङ्गा के उत्तरवर्ती क्षेत्रों में।

यहाँ स्मरणीय है कि वृहस्पति एवं सूर्य का अन्तरांश ११ से न्यून होता है तो गुर्वस्त और जब शुक्र सूर्य से आगे अथवा पीछे १० अंश से कम होता है तब शुक्रास्त होता है। गुरु व शुक्र के अस्त होने से पूर्व तेजोहीनता का दर्शन होने से उनका वृद्धत्व व उदय के उपरांत भी अल्पतेज होने से बाल्यकाल होता है। गया एवं गोदावरी तीर्थाटन गुरु-शुक्र के अस्थ व सिंहस्थ गुरु में भी निषिद्ध नहीं है। जैसा कि वायुपुराणकार का कथन है- गयायां सर्वकालेषु पिण्डं दद्याद्विधानतः। अधिमासे सिंहगुरावस्ते च गुरुशुक्रयोः॥ न त्यक्तव्यं गयाश्राद्धं सिंहस्थे च वृहस्पतौ। (सङ्ग्रहशिरोमणि ९, ६६-६७)

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

गुरु-शुक्रास्तादि के सम्बन्ध में लल्लाचार्य का कथन है- नीचस्थे वक्रसंस्थेप्यतिचरणगते बालवृद्धेऽस्तगे वा संन्यासो देवयात्रा व्रतनियमविधिः कर्णवेधस्तु दीक्षा। मौञ्जीबन्धो गणनां परिणयनविधिर्वास्तुदेवप्रतिष्ठा वर्ज्याः सद्भिः प्रयत्नात्त्रिदशपतिगुरौ सिंहराशिस्थिते वा॥ (वही ९, ६४)

इसी प्रकार राजमार्तण्डकार का मत है- वक्रातिचारगे जीवे वर्जयेत्तदन्तरम्। व्रतोद्वाहादिचूडायामष्टाविंशतिवासरान्॥ सिंहराशौ तु सिंहांशे यदा भवति वाक्पतिः। सर्वदेशेष्वयं त्याज्यो दम्पत्योर्निधनप्रदः॥ सिंहेऽपि भगदैवत्ये गुरौ पुत्रवती भवेत्। अत्यन्त सुभगा साध्वी धनधान्यसमन्विता॥ (पीयूषधाराटीका १, ४८-४९ पर उद्धृत)

ऐसे में गुरु के वक्री एवं अतिचार में २८ दिन व्रत, विवाह एवं चूडाकरण में निषिद्ध कहे गए हैं तथापि यदि गुरु जन्म राशि से २, ५, ७, ९, ११ स्थान पर हो तो विवाहादि शुभकार्य हितकारी होते हैं।

मुहूर्तदीपिकाकार का ऐसा मत है- त्रिकोणजाया धनलाभराशौ वक्रातिचारेण गुरुः प्रयातः। तदा तदा प्राह शुभं विलग्नं हिताय पाणिग्रहणं वशिष्ठः॥ यही मत लल्लाचार्य का भी है- प्रतिषिद्धो नोद्वाहो वक्रिणि जीवे तथातिचारगते। गोचरबलं प्रधानं लग्नं च पराशरः प्राह॥ (सङ्ग्रहशिरोमणि ९, ७२ एवं ७३)

ग्रन्थप्रशस्तिः

आद्यानामनवद्यपद्यरचना नाना विचिन्त्यात्मना
लोकानां व्यवहारदर्शनविधौ सत्तेषुवृत्तैः₅₇ स्फुटम्।
श्रीमद्रैवतराजपूजितपदः श्रीकाह्नजिद्वाडवः
सूनुस्तस्य मुहूर्तदीपमकरोदेनं महादेववित्॥ ५८॥

महादेवटीकया- आद्यानामिति। महादेवः कविः एनं मुहूर्तदीपमकरोत्। किंलक्षणः श्रीमद्रैवतराजपूजितपदः श्रीकान्हजिद्वाडवः तस्य सूनुः श्रीमांश्चासौ रैवतश्च रैवताचलस्तस्य राजानः तैः पूजितौ पादौ यस्य एवंविधः कान्हजित् वाडवः तस्य सूनुः अपत्यम्। किं कृत्वाऽकरोत् आद्यानाम् वराहश्रीपतिलल्लत्रिविक्रमाद्याचार्याणाम् अनवद्या या पद्यरचना ग्रन्थान् रत्नमालात्रिविक्रमशतरत्नकोशव्यवहारप्रकाशसज्जनवल्लभवृत्तशतमुहूर्ततत्त्वादिनिबन्धान् नाना अनेकप्रकारेण आत्मा चित्तेन विचिन्त्य विचार्य। किंनिमित्तं लोकानां सर्वेषां व्यवहारमुहूर्तदर्शनस्य विधिनिर्मित्तम्। वस्तुव्यवहारदर्शनं तु दीपेनैव

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

भवति। तथा ससेषुवृत्तैः कृत्वा मुहूर्तदीपमकरोदिति। यथा दीपे वर्तिस्तथाऽत्र ससपञ्चाशद्वृत्त-लक्षणा वर्तिस्तया हेतुभूतया॥ ५८॥

मोहनबोधिनी- रेवताचल, गिरनार के नरेश के पूज्यपाद श्रीकान्हजी वाडव के पुत्र महादेव कवि ने ५७ श्लोकों के इस ग्रन्थ का प्रणयन किया है। प्राचीन ज्योतिर्विदों में प्रमुख वराहमिहिर रचित बृहत्संहिता, बृहज्जातक एवं लघुजातक, लल्लाचार्यकृत रत्नकोश, श्रीपतिभट्टाचार्य विरचित ज्योतिषरत्नमाला, त्रिविक्रमाचार्य प्रणीत त्रिविक्रमशतक सहित अन्य ग्रन्थों में व्यवहारप्रकाश, सज्जनवल्लभ, वृत्तशतक, मुहूर्ततत्त्व, ज्योतिर्निबन्धादि ग्रन्थों के नाना प्रकरणों को आत्मचिन्त्यानुसार ग्रहण कर, लोकव्यवहार के लिए, मुहूर्त के दर्शन के निमित्त इस ग्रन्थ की रचना की गई है। यह मुहूर्तदीपक व्यवहार का मार्ग आलोकित करेगा। इसमें दीपक की वर्तिका की तरह सत्तावन स्फुट श्लोकों की रचना की गई है।

शाके राम$_{३}$ गजे$_{८}$ षु$_{५}$ भू$_{१}$ परिमिते सौम्यायने भास्करे
चैत्रे मासि सिते दले शिवतिथौ$_{१४}$ वारे विधौ भास्करे।
व्याघाते युजि वाणिजे च करणे श्रीमद्भुजे पत्तने
लेखित्वाऽथ मुहूर्तदीपकभवाख्यानं महादेवकः॥ ५९/१॥

शक संवत् १५८३ के वर्ष में जबकि सूर्य उत्तरायण में था, चैत्रमास के शुक्लपक्ष में चतुर्दशी तिथि एवं सोमवार को हस्त नक्षत्र में, व्याघातयोग, वाणिजकरण में भुज-पत्तन स्थान में महादेव ने मुहूर्तदीपक का लेखन किया।

इति श्रीमहादेवभट्टविरचितो मुहूर्तदीपकः समाप्तः।

बालावबोधार्थमियं मयाऽत्र व्याख्या कृता विस्तरवर्जिता या।
तुष्यन्तु सन्तः प्रविचार्य तत्त्वं यथा तथैवोपहसन्त्वसन्तः॥ १॥

इति श्रीमन्महादेवकविविरचिता मुहूर्तदीपकटीका समाप्ता।

*****

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

श्लोकानुक्रमणिकाः

अ-आ

अर्कत्रीभनखेषु भेषु दिनकृद्धौ १२
अथ प्रथमार्तवे शुभाशुभ १७
अश्विन्यन्त्यभयोर्मघोरग २०
आग्नेयं न सदन्त्यपित्र्ययमभं ५५
आद्यानामनवद्यपद्यरचना ५८

उ

उद्वाहे वसुभागधेयकरणे २९

ए

एकैकं कूपवस्त्रे तरुतलत ५४

क

काष्ठं चर्म तृणाहितूल ३४

ख

ग

गंशूव्यातिविवेषु षट्शरनवाङ्ग ११
ग्रामाद्वायुहुताशराक्षसदिशं ४८

घ

घोरा क्रूररवौ लघूडुशशिनि ४२

च

चक्रेऽश्वे शिरसि त्रयं ४५
चापेन्त्ये दिनकृत्यपायनगते ५७

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

ज

जन्मर्क्षाद्दिनभोन्मितिर्नवहता १३

ज्येष्ठायां हरिभे मृदुध्रुवलघु ३०

त

त्यक्त्वा मूलमघांत्यमादिमनिशं १८

त्रीषुत्र्यक्षिनगाक्षिचन्द्रगुणभू २५

द

दग्धा युग्मा विभूता गतवति ३

द्वाश्वर्क्षं रविभाद्युगद्विजलधि ३८

द्वीशे मूललघुध्रुवे मृदुचरे ३९

द्व्यङ्गर्क्षे षडशीतिवक्त्रमयनं ४३

द्व्यादित्ये ध्रुवभेऽन्त्यभे ३१

द्व्यादित्येऽश्वकरत्रये च ४४

द्वीशात्त्रीण्युदकोडुतो वसुभतः ६

न

नंपूभाभजपूरिनंजरिज ५६

नन्दाभद्राजयाख्याः प्रतिपदभिमुखा २

निष्क्रामस्त्रितुरीयमासि २२

प

पूर्वासु श्रवणद्वये मृदुलघु ५३

पौष्णत्वाष्ट्रलघुध्रुवादिति २३

पौष्णाश्वानिलहस्तमैत्र ५१

पौष्णेज्याश्विकरद्वयध्रुव २१

पौष्णे पुष्यवसुद्वये च रविभे ५०

पौष्णऽश्वेऽदितिभद्वये च ४१

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

पौष्णेश्वे करपञ्चके च वसुभे २८

प्रणम्यैकरदं देवं १

भ

भेशा दस्रान्तकाग्निद्रुहिणशशिवा ४

म

मासे फाल्गुनमार्गमाधवनभः ३५

मासे फाल्गुनपौषमाधवनभोमार्गे ४७

मूलेज्यादितिविष्णुसूर्यशशिभे १९

मूलेऽश्वे मृगपञ्चके त्रिषु २७

मैत्रान्त्ये वसुभे करत्रयमघा ४०

मैत्रेज्यर्क्षमृगेऽन्त्यभश्रुति २४

मैत्रे पौष्णलघुध्रुवादितिमृगे ४९

य

याम्योदक्प्रथमालितौलि ३७

र

रात्र्यर्द्धं द्युयुतं सपादमनुयुक् ७

रुद्राशीविषमित्रपितृवसु ९

रेवत्यां स्थिरमैत्रमूलमृगभे १४

ल

लग्नाढ्यास्तिथयो गता नवहृताः १०

लग्ने मानवराशिगे नवलवे १५

लाभे लाभकृतोऽखिलाः ५२

व

विप्रा गोफलपुष्पदुग्धमणयो ३३

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

श

शाके रामगजेषुभू परिमिते ५९/१
शुक्लेऽब्धीशमिते तिथौ परदले ८

स

सिंहात्त्रित्रिरिहालये हरदिशः ३६
सौम्ये पौष्णयुगे करेऽदिति ४६
स्वात्यादित्यहरित्रयं चरचलं ५
स्वातौ मूललघुध्रुवे मृदुमघाकर्णे १६

ह

हस्तादित्रितयेऽन्त्यहर्यदितिभे २६
हस्तेन्दुश्रवणाश्विपुष्य ३२

*****

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

उपस्कारक ग्रन्थ

गणकतरङ्गिणी : सुधाकर द्विवेदी, सम्पादक– सदानन्द शुक्ल, हेमन्त संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी, संस्करण १९८६ ई.

ग्रहलाघव : गणेश दैवज्ञ विरचित व भारद्वाज पण्डित रामस्वरूप कृत टीका, खेमराज श्रीकृष्णदास, मुम्बई, संस्करण २००१ ई.

ज्योतिर्निबन्ध : शूरमहाठश्रीशिवराज विनिर्मित, काशी से शिला मुद्रणविधि से मुद्रित प्रकाशक वे.शा. सं. रा. रा. विनायक शास्त्री शेवगांवकर आदि, विक्रम संवत् १८३४ तथा आनन्दाश्रम संस्कृत ग्रन्थावलि, पूना (क्रम ८५), संशोधक– रङ्गनाथ शास्त्री व प्रकाशक– विनायक गणेश आपटे, संस्करण १९१९ ई.

ज्योतिर्विदाभरणम् : कालिदास दैवज्ञ विरचित, व्याख्याकार डॉ. रामचन्द्र पाण्डेय, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, प्रथम संस्करण १९८७ ई.

ज्योतिषरत्नमाला : श्रीपतिभट्टविरचित, सम्पादक –अनुवादक डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू', परिमल पब्लिकेशंस, दिल्ली, २००४ ई.

ज्योतिषसार : ज्योतिर्विदशुकदेवविरचित टीकाकार पण्डित केशव प्रसाद शर्मा द्विवेदी संशोधक पण्डित राधाकृष्ण मिश्र, गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास, मुम्बई, संस्करण १९५८ ई.

दीपिका वा शुद्धिदीपिका : महामहोपाध्याय श्रीनिवास प्रणीत व कन्हैयालाल मिश्रकृत टीका, खेमराज श्रीकृष्णदास, मुम्बई, संस्करण १९९४ ई.

नरपतिजयचर्यास्वरोदय : नरपतिकवि विरचित तथा व्याख्याकार पण्डित गणेशदत्त पाठक, चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, संस्करण १९९९ ई.

नारदसंहिता : नारद प्रणीत, व्याख्याकार पण्डित रामजन्म मिश्र, चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, संस्करण २००१ ई.

बालबोधज्योतिषसारसमुच्च : शास्त्री यज्ञदत्तदुर्गाशङ्कर ठाकर, शास्त्री दुर्गाशङ्कर संस्कृत पुस्तकालय, मुम्बई, संस्करण १९९६ ई.

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

बृहज्जातकम् : वराहमिहिर विरचित – टिहरी निवासी पण्डित महीधरकृत भाषाटीका : खेमराज श्रीकृष्णदास, मुम्बई, संस्करण १९९९ ई.

बृहज्ज्योतिःसार : पण्डित सूर्यनारायण सिद्धान्ती व संशोधक कृष्णमुरारी मिश्र, तेजकुमार बुक डिपो लि. लखनऊ, १८वाँ संस्करण २००० ई.

बृहत्संहिता : वराहमिहिर विरचित तथा भट्टोत्पल विवृत्ति (भाग १ एवं २)- महामहोपाध्याय सुधाकर द्विवेदी सम्पादित, पुनर्सम्पादन – डॉ. कृष्णचन्द्र द्विवेदी : सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी, द्वितीय संस्करण १९९७ ई.

बृहत्संहिता : वराहमिहिर विरचित तथा पण्डित अच्युतानन्द झा शर्मा कृत हिन्दी टीका चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी, संस्करण १९९७ ई.

बृहद्दैवज्ञरञ्जनम् : श्रीमद्रामदीनदैवज्ञकृत, खेमराज श्रीकृष्णदास, मुम्बई १९९० तथा डॉ. मुरलीधर चतुर्वेदी कृत श्रीधरी व्याख्या भाग १-२, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, संस्करण २००१ ई.

मानसोल्लास : भूलोकमल्ल सोमेश्वर विरचित तथा जी.के. श्रीगोण्डेकर सम्पादित, भाग 1, ऑरियंटल इंस्टीट्यूट, बडोदरा, १९६७ ई.

मुहूर्तकल्पद्रुम : विट्ठल दीक्षितकृत, सम्पादक : सूर्यपुरस्थेन ज्योतिर्विद कृष्णशङ्कर केशवराम, पाण्डुरङ्ग जावजी, निर्णयसागर प्रेस, मुम्बई, १९३५ ई. हिन्दी अनुवाद : श्रीकृष्ण 'जुगनू', प्रकाशनाधीन.

मुहूर्तगणपति : गणपति दैवज्ञकृत, सम्पादक : डॉ. मुरलीधर चतुर्वेदी, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, संस्करण १९९६ ई.

मुहूर्तचिन्तामणि : रामदैवज्ञ कृत तथा प्रमिताक्षरा टीका, सम्पादक : अनूप मिश्र, गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास, मुम्बई, संस्करण १९२८ ई.

मुहूर्तचिन्तामणि : दैवज्ञ रामाचार्य विरचित तथा गोविन्द दैवज्ञ कृत पीयूषधारा टीका – सम्पादक : केदारदत्त जोशी, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, पुनर्मुद्रित संस्करण 1995 ई.

मुहूर्तचिन्तामणि : गोविन्द दैवज्ञकृत पीयूषधाराटीका, व्याख्याकार पण्डित विन्ध्येश्वरीप्रसाद द्विवेदी, सम्पादक डॉ. ब्रह्मानन्द त्रिपाठी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, संस्करण २००० ई.

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

मुहूर्ततत्त्वम् : कमलाकरसुतकेशवदैवज्ञकृत, अनुवादक—डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू', प्रकाशनाधीन

मुहूर्त पारिजात- ज्योतिषकल्पद्रुम : रचयिता सोहनलाल व्यास सम्पादक सीताराम झा, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, पुनर्मुद्रित संस्करण २००० ई.

मुहूर्तसंग्रहदर्पणम् : पण्डित भीमदत्त शर्मा संगृहीत, गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास प्रकाशन, मुम्बई, संस्करण १९९० ई.

मुहूर्तमार्तण्ड : दैवज्ञ नारायण विरचित व पण्डित सीताराम झा कृत टीका, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, संस्करण १९९२ ई.

मुहूर्तमाला : पण्डित चक्रपाणि मिश्र विरचित तथा सम्पादक डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू', महाराणा प्रताप स्मारक समिति, मोतीमगरी, उदयपुर, २००३ ई.

राजमार्तण्ड : धाराधिप भोजराज कृत, द्रोणाग्रस्य अधःपुरे निवसतो चन्द्रावतौ तारावल्लभशर्मणा व्यलिलिखिज्जैदेवशर्मा सम्पादित, खेमराज श्रीकृष्णदास, वेंकटेश्वर छापाखाना, मुम्बई, संवत् १९५३ (१८९६ ई.) हिन्दी अनुवाद- श्रीकृष्ण 'जुगनू', प्रकाशनाधीन

राजवल्लभवास्तुशास्त्रम् : सूत्रधार मण्डन विरचित, सम्पादक डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू', परिमल पब्लिकेशंस, शक्तिनगर, दिल्ली २००५ ई.

लघुजातकम् : वराहमिहिर विरचित तथा पण्डित लषणलाल झा कृत तत्त्वप्रभा टीका, कृष्णदास अकादमी, वाराणसी, १९८३ ई.

वशिष्ठसंहिता : वृद्धवशिष्ठ विरचित, गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास, मुम्बई १९१५ई.

विवाहवृन्दावनम् : औदिच्य केशवार्कदैवज्ञ विरचित तथा गणेशदैवज्ञकृत विवाहदीपिका व्याख्या, खेमराज श्रीकृष्णदास, मुम्बई, संस्करण १९०९ तथा हिन्दी व्याख्या डॉ. रामचन्द्र पाठक, कृष्णदास अकादमी, वाराणसी, १९९२ ई.

मुहूर्तप्रकाश : रचनाकार व टीका चतुर्थीलाल शर्मा, खेमराज श्रीकृष्णदास, मुम्बई, संस्करण १९९९ ई.

शिल्पदीपक : गङ्गाधर विरचित, सम्पादक डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू', चौखम्बा संस्कृत सीरीज ऑफिस, वाराणसी, २००५ ई.

शीघ्रबोध : काशीनाथ विरचित, खेमराज श्रीकृष्णदास, मुम्बई २००१ ई.

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

वायुपुराण : महर्षि वेदव्यास प्रणीत् व अनुवादक रामप्रताप त्रिपाठी शास्त्री, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, संस्करण १९८७ ई.

विष्णुधर्मोत्तरपुराण : सम्पादक- खेमराज श्रीकृष्णदास, प्रथम प्रकाशन १९१२ ई.तथा नागशरणसिंह कृत भूमिका सहित संस्करण, नाग पब्लिशर्स, दिल्ली, पुनर्प्रकाशन १९९७ ई. अंग्रेजी अनुवाद : डॉ. प्रियबाला शाह, परिमल पब्लिकेशंस, शक्तिनगर, दिल्ली २००२-०३ ई.

वेदाङ्ग ज्योतिष : लगधमहात्मा, सविवृत्ति महामहोपाध्याय सुधाकर द्विवेदी, वाराणसी, मेडिकल हॉल प्रेस, बनारस, १९०८ ई. शामाशास्त्री द्वारा अंग्रेजी अनुवाद, मैसूर १९३६ ई. तथा गिरिजाशङ्कर शास्त्री द्वारा अनूदित- वैदिक ज्योतिष, ज्योतिष कर्मकाण्ड एवं अध्यात्म शोध संस्थान, वासुकीखुर्द, दारागञ्ज, प्रयाग, २००३ ई.

भारतीय ज्योतिष : शङ्कर बालकृष्ण दीक्षित, मराठी संस्करण, अनुवादक शिवनाथ झारखण्डी, उत्तरप्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ, संस्करण १९५७ ई.

भारतीय ज्योतिष का इतिहास : डॉ. गोरखप्रसाद, हिन्दी समिति, उत्तरप्रदेश शासन, लखनऊ, १९७४ ई.

*****

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू'

राजस्थान के चित्तौड़ जिले के आकोला ग्राम में 2 अक्टूबर, 1964 को जन्म।

स्वशिक्षित- अधिस्नातक (प्राचीन भारतीय इतिहास, हिंदी एवं अंग्रेजी)

पी-एच.डी.- मेवाड़ प्रदेश का हीड़ साहित्य (राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर)

अन्य- पत्रकारिता में स्नातकोत्तर डिप्लोमा एवं शिक्षास्नातक (सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर)

इतिहास-पुरातत्त्व, शिल्प, कला, स्थापत्य, शिक्षा, धर्म व संस्कृति जैसे विषयों के अध्ययन-अध्यापन, अनुसंधान और लेखन में गहरी रुचि तथा एतद् विषयक स्थलों का यथा संभव टोही भ्रमण। इन्हीं विषयों पर वर्ष 1978 से अद्यावधि पांच हजार से अधिक आलेखों का देश के प्रतिष्ठित पत्रों-पत्रिकाओं में सचित्र प्रकाशन। देशी-विदेशी हस्तशिल्पियों, कला प्रेमियों, संगीतकारों, चित्रकारों, अभिनेता-अभिनेत्रियों, लब्ध प्रतिष्ठ धर्मगुरुओं, साहित्यकारों, राजनेताओं व समाज सुधारकों के भावात्मक साक्षात्कारों का संग्रह और प्रकाशन। दर्जनों शिलालेखों, सुरह लेखों, ताम्रपत्रों, पट्टों, पाण्डुलिपियों, लिपियों का अध्ययन और मूलपाठ का अक्षरान्तर, प्रकाशन और अनुवाद।

राकेट (बाल मासिक) रङ्गायन (लोक संस्कृति विषयक त्रैमासिक)सहित एक दर्जन स्मारिकाओं का संपादन। राजस्थान का लोक पहनावा (मानव संसाधन विकास मंत्रालय के लिए शोध सर्वेक्षण), भलाभाई बुराभाई (राजस्थानी लोककथाएं), मेवाड़ के लोक नृत्य, विवाह की बंदनवाल (मेवाड़ के विवाह गीत), चितचोरचित्तौड़; दर्शनीय उदयपुर व मेवाड़ के मन्दिर, मंदिर श्रीअंबामाताजी उदयपुर तथा लोकशक्तिपीठ आसावरा माता, मेवाड़ की जनजातीय व लोकसंस्कृति आदि कृतियां। महाराणा प्रताप के दरबारी पण्डित चक्रपाणि मिश्र कृत राज्याभिषेकपद्धति, मुहूर्तमाला एवं विश्ववल्लभ-वृक्षायुर्वेद का संपादन। श्रीपतिभट्ट विरचित ज्योतिषरत्नमाला, विट्ठलदीक्षित कृत मुहूर्तकल्पद्रुम, सुरपालकृत वृक्षायुर्वेद, काश्यपकृत काश्यपीयकृषिसूक्ति का पहली बार सम्पादन।

वास्तु व शिल्पशास्त्रों में शिल्पशास्त्रम्, मनुष्यालयचन्द्रिका, वास्तुसारमण्डनम्, आयतत्त्वम्, वत्थुसारपयरणम्, वास्तु एवं शिलाचयन, राजवल्लभवास्तुशास्त्रम् तथा देवतामूर्तिप्रकरणम्, वास्तुमण्डनम्, कलानिधि, वास्तुमञ्जरी का शोधपूर्ण भूमिका सहित अनुवाद। प्रस्तुत ग्रन्थ महादेवदैवज्ञ कृत मुहूर्तदीपक में दैनिक जीवनोपयोगी मुहूर्तों का सम्यक् विवेचन। आलोचना पाठ, संस्कृत और हिन्दी टीका सहित अन्य उपस्कारक ग्रन्थों के उद्धरणों से तुलना। मयमतम्, समराङ्गणसूत्रधार, विश्वकर्मवास्तुशास्त्रम्, काश्यपशिल्पम् के भाषानुवाद में संलग्न।

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.

Digitization by eGangotri-South Center

चित्रलक्षणम्

डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू' मूल्य : रु. १२५.००

भारतीय कलानुशासनों में चित्रकला का महत्त्व अति विशिष्ट रहा है। अतीत में इस ज्ञान की शिक्षा-दीक्षा की व्यवस्था थी और आज भी है। यह परम्परा इस विषय के कालजयी महत्व की परिचायक है। चित्रकला मानव जीवन में कब से महत्वपूर्ण बनी और इसका इतिहास कितना प्राचीन है, इस विषय पर नाना विद्वानों ने विचार किया है। यूँ इसकी प्राचीनता उच्च पुरापाषाण काल तक निर्धारित की गई है। आरम्भिक काल में चित्रों को विविध माध्यमों से दर्शाया जाता था। कभी पेड़ों या पत्थरों के उच्चित्रण से लेकर रङ्गों के महत्व को समझने वाले आदिमानव ने अपने गुहागृहों, शैलाश्रयों में इस कला को अपने जीवन का अङ्ग बनाया, अनजाने ही अपनी कलाभिव्यक्ति की। भारत का भव्य चित्रमय संसार कला के इन्हीं केन्दों में द्योतक है।

युगयुगीन कला ने समय-समय पर नाना सांचों में अपने को ढाला, प्रदेश-काल और अन्यान्य आगंतुकों, प्रभावों को आत्मसात किया और नाना शैलियों के रूप में अपने आधार को सुदृढ़ किया है। भारत में आज शताधिक परंपरित चित्र-शैलियों का मिलना इस तथ्य का प्रमाण है कि हर काल में इस कला को महत्व और आश्रय मिला। परंपरा के साथ रुचि, विषय चयन, उर्वर कल्पनाओं के साथ-साथ समय की आवश्यकताओं ने भी इस कला को नित्य-निरंतर नव्य-भव्य रूप से विकसित करने में योगदान किया तो साहित्यिक-सांस्कृतियों विषयों का समन्वय भी उल्लेखनीय रहा। इस प्रकार चित्र एक ऐसे विषय के रूप में समाज का अङ्ग बना रहा जिसने जन-जीवन के प्रत्येक स्पंदन को प्रभावित किया, उसकी छवि को साकार किया। इतिहास का एक झरोखा सदा ही चित्रायन की दिशा में खुलता है।

'चित्रलक्षणम्' इसी चित्रकला के विषय में प्राचीनतम जानकारी देने वाला आधारंभूत ग्रंथ है। इसका मूल स्वरूप क्या था, इसका पाठ और इसकी सामग्री का विस्तार कितना था, यह कहा नहीं जा सकता क्योंकि इसका मूलपाठ आज अनुपलब्ध है। सरस्वती महल, तंजौर व एशियाटिक सोसायटी, कोलकता से जो पाठ प्रकाशित हुए हैं, उनमें जो उपलब्ध अध्याय हैं, वे इतने ही हैं। इसी आधार पर प्रस्तुत पाठ ग्रहण कर यथागति आवश्यक संपादन किया गया है और विषयानुसार श्लोकों पर उपशीर्षक दिए गए हैं। यहाँ उल्लेखनीय है कि चित्रलक्षणम् को सर्वप्रथम खोजने का श्रेय जर्मन विद्वान् लॉफर को है जिसने १९१३ ई. में तिब्बती पाठ के आधार पर इसका जर्मन अनुवाद संसार के कलाविदों के सामने प्रस्तुत किया था और कहा था कि इसका मूल संस्कृत पाठ लुप्त हो गया है और तिब्बत ने इसे अपनी लिपि में सुरक्षित रखा है।

शिल्पदीपकः

डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू' मूल्य : रु. १२५.००

प्रस्तुत ग्रन्थ भारतीय विद्या अनुसंधित्सुओं के लिए उपयोगी सिद्ध हो—इस उद्देश्य से इसका पाठ तैयार किया गया है। यह स्मरणीय है कि इसके प्रकाशित पाठ के आधार पर केवल श्लोकों को लिया गया है किन्तु श्लोकों के मूल स्वरूप को देने का उपक्रम किया गया है। कहीं-कहीं विषयक्रम से सम्बद्धता के लिए श्लोकों का क्रम भी परिवर्तित करना पड़ा है तो कहीं-कहीं विषय को पूर्ण करने के लिए अतिरिक्त श्लोक भी देने पड़े हैं। कुल मिलाकर वास्तु विषयक मूल, समग्र सामग्री को गङ्गाधर की परिकल्पनानुसार संजोया गया है। यह गङ्गाधर का मौलिक ग्रंथ न होकर संकलन मात्र है किन्तु वास्तु विषयक महत्वपूर्ण सिद्धान्तों और सामग्री का इसमें अनुकूल समावेश है और शिल्पी समुदाय सहित भारतीय विद्या शोधकों के लिए उपादेय है।

इस पाठ में मूल ग्रंथ के अतिरिक्त चक्र, सारिणियों का नवीकरण किया गया है। पाठ व अनुवाद एकदम नया है। चित्र, आरेखन भी नवीकृत है। विद्वज्जन समुदाय में यह आदर पाएगा, ऐसी मेरी अपेक्षा भी है और विश्वास भी। एक महत्वपूर्ण किन्तु बेतरतीब पाठक को तरतीबवार करने की दिशा में एक लघुप्रयास मात्र है। साथ ही एक सीमा तक सिमट कर रह गए ग्रंथ को बहुजन समुदाय तक विस्तृत करने की दिशा में एक कदम भी है—आपरितोषाद् विदुषां न साधु मन्ये प्रयोगविज्ञानम्।

Also can be had from : **Chowkhamba Krishnadas Academy**, Varanasi.

ISBN : 81-7080-205-9 Price 75.00

designed by Shreyashi GRAPHICS, mo. 9839814784

CC-0. In Public Domain. Cuddalore Collection. TN.